समर्पण

जिनकी अमूल्य शिक्षाएं हमेशा प्रेरणायें
देती हैं
उन पूज्य पितामह
श्री संतोकचंदजी सेठिया
को

—चम्पालाल सेठिया

स्वर्गीय श्री सन्तोकचन्दजी सेठिया

जन्म—सं० १९४१ स्वर्गवास—सं० १९८१

अपनी ओर से

श्रमण भगवान महावीर ने आत्मा को विजातीय तत्वों से वियुक्त करने के जो १२ प्रकार वताये हैं उनमें स्वाध्याय अपना स्पृहणीय स्थान रखता है। वाचन, चिन्तन, मनन, पृच्छना, स्मरण, पुनरावृत्ति आदि इसके महत्वपूर्ण अंग हैं।

स्वाध्याय, ज्ञानाराधना व धर्माराधन में ज्ञेय भजनों-स्तवनों का सदा से विशिष्ट स्थान रहा है। ये स्तवन एकाग्रता, स्थिरता की अप्रतिम कुंजी होने के साथ-साथ अभिनव मानसिक शांति के प्रदाता हैं। प्रस्तुत 'वैराग्यसुधा' में ऐसे ही कुछ प्रमुख चयनों का संकलन है।

प्रस्तुत प्रयास में जहाँ एक ओर प्रातः स्मरण के लिए स्फुट (स्वतंत्र) ढालों का संकलन है, वहाँ दूसरी ओर जनवंद्य आचार्यों द्वारा रचित 'चौवीसी', 'आराधना', 'छव ढालियों', 'मोहजीत राजा का आख्यान' आदि विभिन्न प्रेरणास्पद स्तवन समूहों का भी समावेश है। जहाँ धर्म को जीवन

व्यवहार में अपनाने की व्यापक प्रेरणायें देने वाली अणुव्रत गीतिकायें इसमें हैं, वहाँ परमादरास्पद आचार्यों के उज्ज्वल, त्यागमय जीवन-संस्मरण व उनके गुणगान में रचित स्तवन भी प्रस्तुत पुस्तक में हैं जो श्रद्धा का एक अविरल स्रोत मानव-हृदय में पैदा करते हैं। भगवान महावीर के सर्वजनीन सिद्धान्तों का 'जैनागमों के सूक्त' के रूप में इसमें समावेश किया गया है।

शिक्षा-शतक 'वैराग्यसुधा' की अपनी एक विशेषता है। मेरे पूज्य पितामह स्वर्गीय श्री महालचन्दजी सेठिया की आध्यात्मिक व नैतिक शिक्षाओं का यह संकलन है।

दिन पर दिन प्रवर्द्धमान तेरापंथ-शासन की गौरव-गरिमा में मेरे पूज्य भ्राता स्वर्गीय श्री सोहनलालजी सेठिया द्वारा रचित 'शासन सुषमा' को 'वैराग्य सुधा' में प्रकाशित करते मुझे हर्ष है। आचार्य प्रकरण, साध्वी प्रमुख प्रकरण, नव्यारम्भ व सर्वप्रथम प्रकरण, सर्वाधिक व तप अनशन प्रकरण आदि विभिन्न अध्यायों में तेरापंथ शासन के अद्वितीय इतिहास का हृदयस्पर्शी वर्णन इसमें है। वास्तव में अपने आप में 'शासन सुषमा' एक अनुठा प्रयास है।

प्रस्तुत पुस्तक का संकलन जैसा कि मैंने अपने पूज्य पितामह स्वर्गीय श्री संतोकचंदजी सेठिया की पावन स्मृति में किया है—अतः उन्हीं को यह सादर, सविनय समर्पित है।

उनकी शिक्षायें आज भी हम सब को पथ-प्रदर्शन व देव, गुरु और धर्म के प्रति अटूट श्रद्धा की प्रेरणायें देती हैं। उनकी शासन-सेवा तेरापंथ व उसके आचार्यों के प्रति प्रवर्द्धमान श्रद्धा जहाँ आध्यात्मिक क्षेत्र में अपना प्रशंसनीय स्थान रखती है, वहाँ भौतिक जगत में उनका भ्रातृ-प्रेम व व्यवहार-कुशलता एक विशिष्ट स्थान रखती है। दो शब्दों में, उनकी शिक्षायें निःसन्देह प्रेरणा स्रोत हैं। अस्तु।

इच्छा होते हुए भी स्थानाभाव के कारण अनेकानेक तत्वों का समावेश न हो सका। जैसा बन सका, आपके समक्ष प्रस्तुत है। सभी भाई-बहिन इस उपयोगी संकलन से लाभान्वित होंगे ऐसा विश्वास है।

श्याम भवन,
बिरहाना रोड,
कानपुर

चम्पालाल सेठिया

अभिनव आकर्षण—

★ शिक्षा-शतक

★ शासन-सुषमा

★ उत्तराध्ययन अध्ययन दशवें की जोड़

★ महासतियाँजी श्री छोगाँजी को छव ढालियो

अनुक्रमणिका

शुद्धि-पत्र

प्रूफ-संशोधन में भरसक सावधानी से काम लिया गया है। फिर भी भूल करना मनुष्य का स्वभाव है एवं मात्राएँ टूट कर भूलें बन जानी तो अनिवार्य ही है। मुद्रण के बाद पढ़ने पर जो अशुद्धियाँ मेरी नज़र में आईं, उनकी तालिका निम्न प्रकार है—

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
१६	१२	जिणद	जिणन्द
२६	६	सुखदाता	दुखदाता
७०	१	आचाय	आचार्य
७२	१	व्यारव्यान	व्याख्यान
६७	६	शुम-नजर	शुभ-नजर
६७	११	शोमती	शोभती
६८	३	शोमती	शोभती
१११	१०	दीन्हों	दीन्हों
११८	७	माग	मार्ग
१२६	२	सं	सूं
१३३	१७	षश्व	पश्व
१८६	६	मेट	भेट
१८६	१६	हष	हर्ष
१८७	२२	धम	धर्म
२०४	१	वरागे	वैरागे
२१६	१०	वेर	वेर
२३२	३	अवातार	अवतार
२३५	३	र	रै

श्री हंसराज बच्छराज नाहटा
सरदारशहर निवासी
द्वारा
जैन विश्व भारती, लाडनू
को सप्रेम भेंट –

॥ ॐ ॥

नवकार (महामंत्र)

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं ॥

मंगल पाठ

चत्तारि मंगलं—अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवली पन्नतो धम्मो मंगलं ।

चत्तारि लोगुत्तमा—अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवली पन्नतो धम्मो लोगुत्तमो ।

चत्तारि सरणं पवज्जामि—अरिहंते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि, केवली पन्नतं-धम्मं सरणं पवज्जामि ॥

तिक्खुत्ता की पाटी

तिक्खुत्तो, आयाहिणं, पयाहिणं (करेमि) वंदामि नमंसामि, सक्कारेमि, सम्माणेमि, कल्लाणं, मंगलं, देवयं, चेइयं, पज्जुवासामि, मत्थएण वंदामि ॥

पंच पदों की वन्दना

१—पहिले पदे श्री सीमंधर स्वामी आदि देई जघन्य वीस तीर्थंकर देवाधि देवजी उत्कृष्ट एक सौ साठ तीर्थंकर देवाधि देवजी पंच महा विदेह क्षेत्र में विचरे छे। अनन्त ज्ञान, अनन्त दर्शन, अनन्त चारित्र, अनन्त बल, अशोक वृक्ष, पुष्प वृष्टि दिव्य ध्वनि, देव दुन्दुभि, स्फटिक सिंहासन, भामण्डल, छत्र, चामर एवं द्वादश गुणा ना धारक, एक हजार आठ शुभलक्षण युक्त शरीर, चौसठ इन्द्रना पूजनीय, चौतीस अतिशय, पैंतीस वचनातिशय करी शोभित, एहवा श्री अरिहन्त देव प्रते हाथ जोड़ मान मोड़ "तिक्खुत्तो आयाहिणं"

२—दूजेपदे अनन्त सिद्ध पन्द्रह भेदे अनन्त चौवीसी, अष्ट कर्म खपावी ने मोक्ष पहुंता, केवल ज्ञान, केवल दर्शन, आत्मिक सुख, क्षायक सम्यकत्व, अटल अवगाहना, अमूर्तिपणो, अगुरु लघुपणो, अन्तराय रहित, एवं अष्ट गुण संयुक्त, जन्म, मरण, जरा, रोग, सोग, दुख, दारिद्र रहित, सदाकाल शाश्वत सुखाॅ में विराजमान छै। ते सिद्ध भगवान प्रते हाथजोड़ मान मोड़ "तिक्खुत्तो आयाहिणं"

३—तीजे पदे मांहरा धर्माचार्य गुरु पूज्यजी महाराजाधिराज श्री श्री १००८ श्री श्री तुलसीरामजी स्वामी आदि वे आचार्य भगवान केहवा छै—पंच महाव्रत ना पालणहार, चार कषाय ना टालणहार, पंच आचार ना पालणहार, पंच समिति

समिता, तीन गुप्ति गुप्ता, पांच इन्द्रियों को जीतनेवाले, नववाड़ सहित ब्रह्मचर्य व्रत को पालने वाले, तथा छत्तीस गुणों का धारक, शासन-श्रृङ्गार, गच्छाधार, धर्म धुरंधर, सयल शुभंकर, भुवन भास्कर, मिथ्यात्व नाशक, तीर्थंकर देववत्, धर्मोद्यतकारी, ऐहवा महा पुरुष आचार्य श्री के प्रति हाथ जोड़ मान मोड़ "तिक्खुत्तो आयाहिणं"

४—चौथे पदे उपाध्यायजी महाराज, ग्यारह अङ्ग और बारह उपांग स्वयं भणै और दूसराँ ने भणावै, इण पचीस गुणों के धारक श्री उपाध्यायजी महाराज के प्रति हाथ जोड़ मान मोड़ "तिक्खुत्तो आयाहिणं"

५—पांचवें पदे जघन्य दो हजार करोड़ झाझेरा साधु साध्वी, उत्कृष्ट नव हजार करोड़ साधु साध्वी, अढ़ाई द्वीप पन्द्रह क्षेत्रों में विचरते है, वे महा मुनिराज कैसे हैं—पंच महाव्रत के पालनहार, पांच इन्द्रियों के जीतनहार, चार कषाय के टालन हार, भाव सत्य, करण सत्य, योग सत्य, क्षमा-वन्त, वैराग्यवन्त, मन समाधारणता, वचन समाधारणता, काय समाधारणता, ज्ञान सम्पन्न, दर्शन सम्पन्न, चारित्र सम्पन्न, वेदनी आने से समभाव पूर्वक सहन करण वाले, मरण आयाँ समभाव सू सहण वाले, इन सत्तावीस गुणों के धारक, बावीस परिषहों के जीतने वाले, बयालीस दोष टालकर आहार पानी लेने वाले, बावन अणाचार के टालने वाले, निर्लोभी, निर्लालची, संसार सू उदासी, मोक्ष के अभिलाषी,

संसार सूं विमुख, मोक्ष के सन्मुख, सचित के त्यागी, अचित के भोगी, नूतियां जीमें नहीं, बुलाण सूं आवे नहीं, वायुवत् अप्रति बन्ध विहारी—एहवा महा उत्तम मुनिराज प्रति हाथ जोड़ मान मोड़ "तिक्खुत्तो आयाहिणं"

चौरासी लाख जीवायोनि

सात लाख पृथ्वीकाय, सात लाख अप्काय, सात लाख तेजस्काय, सात लाख वायुकाय, दस लाख प्रत्येक वनस्पति काय, चौदह लाख साधारण वनस्पतिकाय, दो लाख बेइन्द्रिय, दो लाख तेइन्द्रिय, दो लाख चतुरिन्द्रिय, चार लाख नारकी, चार लाख देवता, चार लाख तिर्यंच पंचेन्द्रिय, चौदह लाख मनुष्य की जाति चार गति चौरासी लाख जीवायोनि ऊपर राग द्वेष आया हो, तो तस्स मिच्छामि दुक्कडं।

बारह भावना

दोहा

१ अनित्य भावना

राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार।
मरना सब को एक दिन, अपनी-अपनी बार॥

२ अशरण भावना

दल बल देवी देवता, मात पिता परिवार।
मरती बिरियॉ जीव को, कोई न राखनहार॥

३ संसार भावना

दाम विना निर्धन दुखी , तृष्णा वश धनवान ।
कहूं न सुख संसार में , सब जग देख्यो छान ॥

४ एकत्व भावना

आप अकेला अवतरै , मरै अकेला होय ।
यों कबहूं या जीव को , साथी सगो न कोय ॥

५ अन्यत्व भावना

जहाँ देह अपनी नहीं , तहाँ न अपना कोय ।
घर सम्पत्ति पर प्रकट ये , पर हैं परिजन लोय ॥

६ अशुचि भावना

दीपै चाम चादर मढ़ी , हाड पींजरा देह ।
भीतर या सम जगत में , और नहीं घिन गेह ॥

७ आस्रव भावना

जगवासी घूमै सदा , मोह नींद के जोर ।
तब दीसै नहीं लूंटता , कर्म चोर चहुँ ओर ॥

८ संवर भावना

मोह नींद जब उपशमै , सतगुरु देय जगाय ।
कर्म चोर आवत रुकै , तब कुछ बने उपाय ॥

९ निर्जरा भावना

ज्ञान दीप तप तेल भर , घर शोधे भ्रम छोर ।
या विधि विन नकसै नहीं , पैठे पूरव चोर ॥

पंच महाव्रत संचरण, समिति पंच प्रकार।
प्रबल पंच इन्द्रिय विजय, धार निर्जरा सार॥

१० लोक भावना

चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष संठान।
तामें जीव अनादि तैं, भरमत है विन ज्ञान॥

११ बोधिदुर्लभ भावना

धन जन कंचन राज सुख, सवहि सुलभ कर जान।
दुर्लभ है संसार में, एक यथारथ ज्ञान॥

१२ धर्म भावना

जाचे सुरतरु देय सुख, चिंतित चिन्ता रैन।
विन जाचे विन चिन्तये, धर्म सकल सुख दैन॥

नवकार (छन्द)

सुखकारण भवियण, समरो श्री नवकार।
जिन शासन आगम, चौदह पूरव नो सार॥ १॥
इण मंत्र नी महिमा, कहतॉ न लहूँ पार।
सुरतरु जिम चिंतित, बंच्छित फल दातार॥ २॥
सुर दानव मानव, सेव करै कर जोड़।
भू मण्डल विचरै, तारै भवियण कोड़॥ ३॥

सुर छन्दे विलसे , अतिशय जास अनन्त ।
पद पहले नमिये , अरि-गंजन अरिहन्त ॥ ४ ॥
जे पनरै भेदे , सिद्ध थया भगवन्त ।
पंचमी गति पहुँता , अष्ट कर्म करि अन्त ॥ ५ ॥
कल अकल स्वरूपी , पंचानन्तक देह ।
सिद्ध ना पाय प्रणमूं , बीजे पद वलि एह ॥ ६ ॥
गच्छ भार धुरन्धर , सुन्दर शशिहर शोभ ।
करि सारण वारण , गुण छत्तीसे थोभ ॥ ७ ॥
श्रुत जाण शिरोमणी , सागर जेम गम्भीर ।
तीजै पद प्रणमूं , आचारज गुण धीर ॥ ८ ॥
श्रुतधर गुण आगर , सूत्र भणावे सार ।
तप विधि संयोगे , भाखै अर्थ विचार ॥ ९ ॥
मुनिवर गुणयुक्ता , ते कहिये उवझाय ।
पद चौथे नमिये , अहोनिश तेहना पाय ॥ १० ॥
पंच आस्रव टाले , पाले पंचाचार ।
तपसी गुणधारी , बारे विषय विकार ॥ ११ ॥
त्रस थावर पीयर , लोक मांहि जे साध ।
त्रिविधे ते प्रणमूं , परमारथ इम लाध ॥ १२ ॥
अरि करि हरि सायण , डायण भूत वेताल ।
सहु पाप पणासे , थासे मंगल माल ॥ १३ ॥
इण समर्थ्यो संकट , दूर टलै तत्काल ।
जंपे इम जिनप्रभ , सूरि शिष्य रसाल ॥ १४ ॥

चतुर्विंशति जिन स्तवन

रचयिता—श्री मज्जयाचार्यजी

दोहा

ॐ नमः अरिहन्त अतनु, आचार्य उवज्झाय ।
मुनि पंच परमेष्ठि ए, ॐकार रै मांहि ॥ १ ॥

बलि प्रणमुं गुणवन्त गुरु, भिक्षु भरत मझार ।
दान दया न्याय छाण नें, लीधो मारग सार ॥ २ ॥

भारीमाल पट झलकता, तीजै पट ऋषिराय ।
प्रणमूं मन वच काय करी, पाचूं अंग नमाय ॥ ३ ॥

(इम) सिद्ध साधु प्रणमी करी, ऋषभादिक चौवीस ।
स्तवन करूं प्रमोद करी, जय जश कर जगदीश ॥ ४ ॥

मल्लि नेम ए दोय जिन, पाणिग्रहण न कीध ।
शेष बावीस जिनेश्वरू, रमण छांड़ व्रत लीध ॥ ५ ॥

वासुपूज्य मल्लि नेम जिन, पार्श्व अनें वर्द्धमान ।
कुमर पदै अरु प्रथम वय, धार्‍यो चरण निधान ॥ ६ ॥

छत्रपति उगणीस जिन, व्रत तीजी वय सार ।
उत्कृष्ट आयु जिह समय, तसु त्रिण भाग विचार ॥ ७ ॥

वीर समय उत्कृष्ट स्थिति, वर्ष सवा सय होय ।
भाग तीन कीजे तसु, ए तीनू वय जोय ॥ ८ ॥

इम सगलै उत्कृष्ट स्थिति, त्रिण भागे वय तीन ।
अंतिम वय उगणीस जिन, धुर वय पंच सुचीन ॥ ९ ॥

श्वेत वरण चंद सुविधि जिन, पद्म वासुपूज्य लाल ।
मुनिसुव्रत रिठनेम प्रभु, कृष्ण वरण सुविशाल ॥ १० ॥

मल्लिनाथ फुन पार्श्व प्रभु, नील वरण वर अङ्ग ।
षोड़श शेष जिनेश तनु, सोवन वरण सुचङ्ग ॥ ११ ॥

श्रेयांस मल्लि मुनिसुव्रत जिन, नेम पार्श्व जगदीश ।
प्रथम पहर दीक्षा ग्रही, पाछिल पहर उन्नीस ॥ १२ ॥

सुमति जीम दीक्षा ग्रही, अठम भक्त मल्लि पास ।
छठ भक्त जिन वीस वर, वासुपूज्य उपवास ॥ १३ ॥

ऋषभ अष्टापद शिवगमन, वीर पावापुरी दीश ।
नेम गिरनारे वासु चम्पा, शिखर सम्मेत सु वीस ॥ १४ ॥

ऋषभ संथारै शिव गमन, चउदश भक्त उदार ।
चरम छट्ठ अणशण पवर, बावीस मास संथार ॥ १५ ॥

ऋषभ वीर अरु नेम जिन, पल्यंकासण शिव पेख ।
शेष इकवीस जिनेश्वरु, काउस्सग मुद्रा देख ॥ १६ ॥

जिन चौव्वीस तणा सुगुण, रचियै वचन रसाल ।
ध्यान सुधा वर सार रस, जय जश करण विशाल ॥ १७ ॥

श्री ऋषभ जिन स्तवन

(लय—ऐसे गुरु किम पाविये)

वन्दु बेकर जोड़ नें, जुग आदि जिनेन्दा ।
कर्म रिपु गज ऊपरै, मृगराज मुनिन्दा ॥
प्रणमूँ प्रथम जिनन्द नें, जय २ जिन चंदा ॥ ए आंकड़ी ॥ १ ॥

अनुकूल प्रतिकूल सम सही, तप विविध तपन्दा ।
चेतन तन भिन्न लेखवी, ध्यान शुक्ल ध्यावंदा ॥ २ ॥

पुद्गल सुख अरि पेखिया, दुःख हेतु भयाला ।
विरक्त चित्त बिघट्यो इसो, जाण्या प्रत्यक्ष जाला ॥ ३ ॥

संवेग सरवर भूलताँ, उपशम रस लीना ।
निन्दा स्तुति सुख दुःख में, सम भाव सुचीना ॥ ४ ॥

बांसी चन्दन सम पणै, थिर चित जिन ध्याया ।
इम तन सार तजी करी, प्रभु केवल पाया ॥ ५ ॥

हूँ बलिहारी ताँहरी, वाह ! वाह !! जिन राया ।
उवा दिशा किण दिन आवसी, मुझ मन उमाया ॥ ६ ॥

उगणीसै सुदि भाद्रवै, दशमी दीतवारं ।
ऋषभदेव रटवे करी, हुवो हर्ष अपारं ॥ ७ ॥

श्री अजित जिन स्तवन

(लय—अहो प्रिय तुम घट पाडी)

अहो प्रभु अजित जिनेश्वर आपरो, ध्याऊँ ध्यान हमेश हो ।
अहो प्रभु अशरण शरण तूँही सही, मेटण सकल कलेश हो ॥
अहो प्रभु तुम ही दायक शिव पंथ ना ॥१॥

अहो प्रभु उपशम रस भरी आपरी, वाणी सरस विशाल हो ।
अहो प्रभु मुक्ति निसरणी मनोहरु, सुण्याँ मिटै भ्रमजाल हो ॥२॥

अहो प्रभु उभय बन्धण आप आखिया, राग-द्वेष विकराल हो ।
अहो प्रभु हेतु ए नरक निगोद ना, राच्या मूरख बाल हो ॥३॥

अहो प्रभु रमणी राक्षसणी कही, विष वल्ली मोह जाल हो ।
अहो प्रभु काम भोग किम्पाक-सा, दाख्या दीन दयाल हो ॥४॥

अहो प्रभु विविध उपदेश देई करी, तैं तार्‌या नर नार हो ।
अहो प्रभु भव-सिन्धु पोत तूँ ही सही, तूँ ही जगत आधार हो ॥५॥

अहो प्रभु शरण आयो तुज साहिबा, वस रह्या हीया मांय हो ।
अहो प्रभु आगमवयण अङ्गी करी, रह्यो ध्यान तुझ ध्याय हो ॥६॥

अहो प्रभु सम्वत् उगणीसै नें भाद्रवै, दशमी आदित्यवार हो ।
अहो प्रभु आप तणा गुण गाविया, वर्त्या जय जयकार हो ॥७॥

श्री सम्भव जिन स्तवन

(लय—हूं बलिहारी हो जादवां)

सम्भव साहिब समरिये, ध्यायो है जिन निर्मल ध्यान कै ।
एक पुद्गल दृष्टि थाप ने, कीधो है मन मेरु समान कै ॥
सम्भव साहिब समरिये ॥ १ ॥ ए आंकड़ी ॥

तन चञ्चलता मेटनें, हुवा है जग थी उदासीन कै ।
धर्म शुक्ल थिर चित्त धरै, उपशम रस में होय रह्या लीन कै ॥
सम्भव साहिब समरिये ॥ २ ॥

सुख इन्द्रादिक नॉ सहु, जाण्या है प्रभु अनित्य असार कै ।
भोग भयंकर कटुक फल, देख्या है दुर्गति दातार कै ॥
सम्भव साहिब समरिये ॥ ३ ॥

सुद्ध संवेग रसे भस्या, पेख्या है पुद्गल मोह पाश कै ।
अरुचि अनादर आण नें, आतम ध्यानें करता विलास कै ॥
सम्भव साहिब समरिये ॥ ५ ॥

संग छॉड मन वश करी, इन्द्रिय दमन करी दुर्दन्त कै ।
विविध तपे कर स्वामजी, घातीकर्म नों कीधो अन्त कै ॥
सम्भव साहिव समरिये ॥ ५ ॥

हूँ तुझ शरणे आवियो, कर्म विदारन तूं प्रभु वीर कै ।
तें तन मन वच वश किया, दुःकर करणी करण महाधीर कै ॥
सम्भव साहिब समरिये ॥ ६ ॥

सम्वत् उगणीसै भाद्रवै, सुदि इग्यारस आण विनोद कै ।
सम्भव साहिब समरिया, पाम्यो हे मन अधिक प्रमोद कै ॥
सम्भव साहिव समरिये ॥ ७ ॥

श्री अभिनन्दन जिन स्तवन

(लय—सती कलूजो हो हुवा सयम नै त्यार)

तीर्थंकर हो चोथा जग भाण, छांडि गृहवास करी मति निरमली।
विपय विटम्बन हो तजिया विप फल जाण।
अभिनंदन वन्दूं नित्य मनरली ॥ ए आंकड़ी १ ॥

दुःकर करणी हो कीधी आप दयाल,
ध्यान सुधा रस सम दम मन गली।
संग त्यागो हो जाणी माया जाल ॥ २ ॥

वीर रसे करी हो कीधी तपस्या विशाल,
अनित्य अशरण भावन अशुभ निरदली।
जग भूठो हो जाण्यो आप कृपाल ॥ ३ ॥

आत्म मित्री हो सुख दाता सम परिणाम,
एहिज अमित्र अशुभ भावे कलकली।
एहवी भावन हो भाया जिन गुण धाम ॥ ४ ॥

लीन संवेगे हो ध्यायो शुक्ल ध्यान,
क्षायक श्रेणि चढ़ी हुआ केवली।
प्रभु पाया हो निरावरण सुज्ञान ॥ ५ ॥

उपशम रस नी हो वागरी प्रभु वाण,
तन मन प्रेम पाया जन सांभली।
तुम वच धारी हो पाम्या परम कल्याण ॥ ६ ॥

जिन अभिनंदन हो गाया तन मन प्यार,
संवत् उगणीसै भाद्रवै अघदली।
सुदि इग्यारस हो हुवो हर्ष अपार ॥ ७ ॥

श्री सुमति जिन स्तवन

(लय—मूरख जीवड़ा रे गाफल मत रहे)

सुमति जिनेश्वर साहेब शोभता, सुमति करण संसार।
सुमति जप्यॉ थी रे सुमति वधै घणी, सुमति सुमति दातार ॥
सुमति जिनेश्वर साहेब शोभता ॥ ए आंकड़ी ॥ १ ॥

ध्यान सुधारस निर्मल ध्याय नें, पाम्या केवल नाण।
वाण सरस वर जन बहु तारिया, तिमिर हरण जग भाण ॥
सुमति जिनेश्वर साहेब शोभता ॥ २ ॥

फटिक सिहासण जिनजी फाबता, तरु अशोक उदार।
छत्र चामर भामंडल झलकतो, सुर दुन्दुभि झिणकार ॥
सुमति जिनेश्वर साहेब शोभता ॥ ३ ॥

पुष्प वृष्टि दिव्य ध्वनि दीपती, साहिब जग शिणगार।
अनन्त ज्ञान दर्शन बल चर्ण ही, ए द्वादश गुण श्रीकार ॥
सुमति जिनेश्वर साहेब शोभता ॥ ४ ॥

वाण अमी सम उपशम रस भरी, दुर्गति मूल कषाय।
शिव सुखना अरि शब्दादिक कह्या, जग तारक जिनराय ॥
सुमति जिनेश्वर साहेब शोभता ॥ ५ ॥

अन्तरयामी रे शरणै आप रै, हूँ आयो अवधार।
जाप तुमारो रे निश दिन संभरूँ, शरणागत सुखकार॥
सुमति जिनेश्वर साहेव शोभता॥ ६॥

सम्वत् उगणीसै रे सुदि पक्ष भाद्रवै, वारस मङ्गलवार।
सुमति जिनेश्वर तन मन स्यू रट्या, आनन्द उपनो अपार॥
सुमति जिनेश्वर साहेव शोभता॥ ७॥

पद्म जिन स्तवन

(लय—जिन्दवेरी देशी छै सुण भगते भगवन्त के)

निर्लेप पद्म जिसा प्रभु, प्रभु पद्म पिछाण २ संयम लीधो तिण समै।
पाया चौथो नाण, पद्म प्रभु नित्य समरिये॥ ए आंकड़ी॥ १॥

ध्यान शुक्ल प्रभु ध्याय नें, पाया केवल सोय २।
दीनदयाल तणी दिशा कहणी नावै कोय॥
पद्म प्रभु नित्य समरिये॥ २॥

सम दम उपशम रस भरी, प्रभु आपरी वाण २।
त्रिभुवन तिलक तू ही सही, तूँ ही जनक समान॥
पद्म प्रभु नित्य समरिये॥ ३॥

तू प्रभु कल्प तरु जिसो, तूँ चिन्तामणि जोय २।
समरण करतॉ आपरो, मन बंछित होय॥
पद्म प्रभु नित्य समरिये॥ ४॥

सुखदायक सहू जग भणी, तूँ ही दीन दयाल २।
शरणे आयो तुझ साहिबा, तूँ ही परम कृपाल॥
पद्म प्रभु नित्य समरिये॥ ५॥

गुण गाताँ मन गहगहे, सुख सम्पति जाण २।
विघ्न मिटै समरण कियाँ, पामै परम कल्याण॥
पद्म प्रभु नित्य समरिये॥ ६॥

सम्वत् उगणीसै नें भाद्रवै, सुदि बारस देख २।
पद्म प्रभु रट्या लाडनूं, हुवो हर्ष विशेख॥
पद्म प्रभु नित्य समरिये॥ ७॥

श्री सुपास जिन स्तवन

(लय—कृपण दीन अनाथ ए)

सुपास सातमाँ जिणद ए, ज्यांने सेवै सुर नर वृन्द ए।
सेवग पूरण आश ए, भजिये नित्य स्वामि सुपास ए॥आंकड़ी॥१॥
जन प्रतिबोधण काम ए, प्रभु बागरै वाण अमाम ए।
संसार स्यूं हुवै उदास ए, भजिये नित्य स्वामि सुपास ए॥२॥
पामै काम भोग थी उद्वेग ए, बलि उपजै परम संवेग ए।
एहवा तुम वच सरस विलास ए, भजिये नित्य स्वामि सुपास ए॥३॥
घणी मीठी चक्री नी खीर ए, बलि खीर समुद्र नो नीर ए।
एह थी तुम वच अधिक विमास ए, भजिये नित्य स्वामि सुपास ए॥४॥
सांभल नें जन वृन्द ए, रोम रोम में पामैं आनन्द ए।
ज्यांरी मिटै नरकादिक त्रास ए, भजिये नित्य स्वामि सुपास ए॥५॥

तू प्रभु दीनदयाल ए, तूं ही अशरण शरण निहाल ए।
हूं छूं तुमारो दास ए, भजिये नित्य स्वामि सुपास ए ॥६॥
संवत् उगणीसैं सोय ए, भाद्रवा सुदि तेरस जोय ए।
पहूंची मननी आश ए, भजिये नित्य स्वामि सुपास ए ॥७॥

श्री चंद्रप्रभ जिन स्तवन

(लय—शिवपुर नगर सुहामणो)

हो प्रभु चन्द जिनेश्वर चन्द जिस्या,
वाणी शीतल चन्द सी न्हाल हो।
प्रभु उपशम रस जन सांभल्याँ,
मिटै कर्म भ्रम मोह जाल हो ॥
प्रभु चन्द जिनेश्वर चन्द जिस्या ॥ ए आं० ॥१॥

हो प्रभु सूरत मुद्रा सोहनी,
चारु रूप अनूप विशाल हो।
प्रभु इन्द्र शची जिन निरखती,
तेतो तृप्ति न होवे निहाल हो। प्र० ॥२॥

अहो वितराग प्रभु तू सही,
तुम ध्यान ध्यावै चित्त रोक हो।
प्रभु तुम तुल्य ते हुवै ध्यान सूं,
मन पायाँ परम सन्तोख हो। प्र० ॥ ३ ॥

हो प्रभु लीन पणै तुम ध्यावियाँ,
पामैं इन्द्रादिक नी ऋद्धि हो।
वलि विविध भोग सुख सम्पदा,
लहै आमोसही आदि लब्धि हो। प्र० ॥ ४ ॥
हो प्रभु नरेन्द्र पद पामै सही,
चरण सहित ध्यान तन मन्न हो।
प्रभु अहमिंद्र पद पामै बलि,
कियाँ निश्चल थारो भजन्न हो। प्र० ॥ ५ ॥
हो प्रभु शरण आयो तुम्क साहिबा,
तुम ध्यान धरूं दिन रैन हो।
प्रभु तुम्क मिलवा मुम्क मन उमह्यो,
तुम समरण स्यूं सुख चैन हो। प्र० ॥ ६ ॥
सम्वत् उगणीसै भाद्रवै,
सुदि तेरस नें बुधवार हो।
प्रभु चन्द्र जिनेश्वर समरिया,
हुओ आनन्द हर्ष अपार हो। प्र० ॥ ७ ॥

श्री सुविधि जिन स्तवन

(लय—सोही तेरा पन्थ पावै हो)

सुविधि करी भजिये सदा, सुविधि जिनेश्वर स्वामी हो।
पुष्पदन्त नाम दूसरो, प्रभु अन्तर्यामी हो॥
सुविधि भजिये शिरनामी हो॥ ए आं० ॥ १ ॥

श्वेत वरण प्रभु शोभता, वारू वाण अमामी हो।
उपशम रस गुण आगली, मेटण भव भव स्वामी हो ॥ २ ॥
समवसरण विच फाबता, त्रिभवन तिलक तमामी हो।
इन्द्र थकी ओपैं घणाँ, शिवदायक स्वामी हो ॥ ३ ॥
सुरेन्द्र नरेन्द्र चन्द्र ते, इन्द्राणी अभिरामी हो।
निरख निरख धापै नहीं, एहवो रूप अमामी हो ॥ ४ ॥
मधुकर मरंद तणी परैं, सुर नर करत सिलामी हो।
तो पिण राग व्यापैं नहीं, जीत्यो मोह हरामी हो ॥ ५ ॥
जे जोधा जग में घणा, सिंह साथे संग्रामी हो।
ते मन इन्द्रिय वश करी, जोड़ी केवल पामी हो ॥ ६ ॥
उगणीसैं पुनम भाद्रवी, प्रणमुं शिर नामी हो।
मन चिन्तित वस्तु मिलैं, रटियाँ जिन स्वामी हो ॥ ७ ॥

श्री शीतल जिन स्तवन

(लय—हूँ देवा आई ओलभड़ो सासुजी)

शीतल जिन शिवदायका, साहिवजी।
शीतल चन्द समान हो, निस्नेही ॥
शीतल अमृत सारिखा, साहिवजी।
तप्त मिटै तुम ध्यान हो, निस्नेही ॥
सूरत थाँरी मन वसै, साहिवजी ॥ १ ॥

वंदे निंदे तो भणी, साहिबजी।
राग द्वेष नहीं ताम हो, निस्नेही॥
मोह दावानल तें मेटियो, साहिबजी।
गुणनिष्पन्न तुम नाम हो, निस्नेही॥
सूरत थांरी मन वसी साहिबजी॥ २॥
नृत्य करै तुझ आगलै, साहिबजी।
इन्द्राणी सुरनार हो, निस्नेही॥
राग भाव नहीं ऊपजै, साहिबजी।
ते अंतर लग्न निवार हो, निस्नेही॥
सूरत थॉरी मन बसी, साहिबजी॥ ३॥
क्रोध मान माया लोभ ए, साहिबजी।
अग्नि सूं अधिकी आग हो, निस्नेही॥
शुक्ल ध्यान रूप जल करी, साहिबजी।
थया शीतलिभूत महाभाग हो, निस्नेही॥
सूरत थॉरी मन वसी, साहिबजी॥ ४॥
इन्द्रिय नोइन्द्रिय आकरा, साहिबजी।
दुर्जय नें दुर्दान्त हो, निस्नेही॥
ते जीता मन स्थिर करी, साहिबजी।
धर उपशम चित शांत हो, निस्नेही॥
सूरत थॉरी मन वसी, साहिबजी॥ ५॥
अन्तरयामी आपरो, साहिबजी।
ध्यान धरूँ दिन रैन हो, निस्नेही॥

उवाहि दिशा कद आवसी, साहिवजी।
होसी उत्कृष्टो चैन हो, निस्नेही॥
सूरत थॉरी मन वसी, साहिवजी॥ ६॥
उगणीसै पूनम भाद्रवी, साहिवजी।
शीतल मिलवा काज हो, निस्नेही॥
शीतल जिनजी नें समरिया, साहिवजी।
हिय शीतल हुवो आज हो, निस्नेही॥
सूरत थॉरी मन बसी साहिवजी॥ ७॥

श्री श्रेयांस जिन स्तवन

(लय—पुत्र वसुदेवनो)

मोक्षमार्ग श्रेय शोभता, धाख्या स्वाम श्रेयांस उदार रे।
जे जे श्रेय वस्तु संसार में, ते ते आप करी अङ्गीकार रे॥
ते ते आप करी अङ्गीकार, श्रेयांस जिनेश्वरु,
प्रणमूं नित्य वेकर जोड़ रे। ए आं० ॥ १॥

समिति गुप्ति ए दुःधर घणा, धर्म शुक्ल ध्यान उदार रे।
ए श्रेय वस्तु शिव दायनी, आप आदरी हर्ष अपार रे॥ २॥

तन चंचलता मेट नें, पद्मासन आप विराजे रे।
उत्कृष्ट ध्यान तणो कियो, आलम्बन श्रीजिनराज रे॥ ३॥

इन्द्रिय विषय विकार थी, नरकादिक रुलियो जीव रे।
किम्पाक फलनी उपमा, रहिये दूर थी दूर सदीव रे॥ ४॥

संयम तप जप शील ए, शिव साधन महा सुखकार रे ।
अनित्य अशरण अनंत ए, ध्यायो निर्मल ध्यान उदार रे ॥ ५ ॥

स्त्रियादिक ना सङ्ग ते, आलम्बन दुःख दातार रे ।
अशुद्ध आलम्बन छॉड़ने, धार्‍यो ध्यान आलम्बन सार रे ॥ ६ ॥

शरण आयो तुझ साहिबा, करूँ बार बार नमस्कार रे ।
उगणीसै पूनम भाद्रवी, मुझ वर्त्या जय जयकार रे ॥ ७ ॥

श्री वासुपूज्य जिन स्तवन

(लय—इम जाप जपो श्री नवकारं)

द्वादशमा जिनवर भजिये, राग द्वेष मच्छर माया तजिये ।
प्रभु लाल वरण तन छवि जाणी, प्रभु वासुपूज्य भजले हो प्राणी ॥१॥
बनिता जाणी वैतरणी, शिव सुन्दर वरवा हुंस घणी ।
काम भोग तज्या किम्पाकाणी, प्रभु वासुपूज्य भजले प्राणी ॥२॥
अञ्जन मञ्जन स्यूं अलगा बलि पुष्प बिलेपन नहीं वलगा ।
कर्म काट्या ध्यान मुद्रा ठाणी, प्रभु वासुपूज्य भजले प्राणी ॥३॥
इन्द्र थकी अधिका ओपै, करुणागर कदेय नहीं कोपै ।
वर शाकर दूध जिसी वाणी, प्रभु वासुपूज्य भजले प्राणी ॥४॥
स्त्री स्नेह पाशा दुर्दन्तो, कह्यो नरक निगोद तणो पंथो ।
इह भव परभव दुःखदाणी, प्रभु वासुपूज्य भजले प्राणी ॥५॥
गजकुम्भ दलै मृगराज हणी, पिण दोहिली निज आत्म दमणी ।
इम सुण बहु जीव चेत्या जाणी, प्रभु वासुपूज्य भजले प्राणी ॥६॥

भाद्रवी पूनम उगणीसो, कर जोड़ नमू वासुपूज्य इसो ।
प्रभु गातॉं रोम राय हुलसाणी, प्रभु वासुपूज्य भजले प्राणी ॥७॥

श्री विमल जिन स्तवन

(लय—कांय न मांगाँ कांयन मांगाँ हो राजाजी मांगाँ पूरण प्रीत बीजूं०)

शरणे तुम्हारे ३ हो विमल प्रभु, सेवक नी अरदास ।
आयो शरण तिहारे हो ॥

विमल करण प्रभु विमलनाथजी, विमल आप वर रीत ।
विमल ध्यान धरतॉं हुवे निर्मल, तन मन लागी प्रीत ।
साहिब शरणे तिहारे हो । ए आं० ॥ १ ॥

विमल ध्यान प्रभु आप ध्याया, तिण सूं हुवा विमल जगदीश ।
विमल ध्यान वलि जे कोई ध्यासी, होसी विमल सरीस ॥ २ ॥

विमल गृहवासे द्रव्य जिनेन्द्र था, दिक्षा लियॉं भावे साध ।
केवल उपना भावे जिनेश्वर, भावे विमल आराध ॥ ३ ॥

नाम स्थापना द्रव्य विमल थी, कारज न सरै कोय ।
भाव विमल थी कारज सुधरै, भाव जप्यॉं शिव होय ॥ ४ ॥

गुण गिरवो गंभीर धीर तूँ, तूँ मेटण जम त्रास ।
मैं तुम वयण आगम शिर धास्या, तूं मुझ पूरण आश ॥ ५ ॥

तूँ ही कृपाल दयाल साहेब, शिवदायक तूँ जगनाथ ।
निश्चल ध्यान करै तुझ ओलख, ते मिले तुझ संघात ॥ ६ ॥

अंतरयामी आप उजागर, मैं तुझ शरणों लीध ।
संवत उगणीसै भाद्रवी पूनम, वंछित कारज सिद्ध ॥ ७ ॥

श्री अनंत जिन स्तवन

(लय—पायो युवराज पद मुनि)

अंनत नाम जिन चवदमा रे, द्रव्य चौथे गुणठाण भलॉजी कांई द्रव्य०
भावे जिन हुवै तेरमें रे, इतले द्रव्य जिन जाण ॥
भलाँजी कांई इतलै द्रव्य जिन जाण, पायो पद जिनराजनों जी ।
शुद्ध ध्यान निरमल ध्याय । भलांजी कॉई शुभ ध्यान निरमल ध्याय ।
पायो पद जिनराजनों जी ॥ १ ॥

जिन चक्री सुर जुगलिया रे, वासुदेव बलदेव । भलॉ० । वा० ।
ए पञ्चमें गुण पावै नहीं रे, ए रीत अनादि स्वमेव ॥ भलॉ ॥ए०॥
पायो पद जिनराजनों जी ॥ २ ॥

संयम लीधो तिण समै रे, आया सातमें गुणठाण । भलाँ० । आ० ।
अंतर मुहूर्त्त तिहाँ रही रे, छठे बहुस्थिति जाण ॥ भलाँ० छ० ।
पायो पद जिनराजनों जी ॥ ३ ॥

आठमॉ थी दोय श्रेणि छै रे, उपशम खपक पिछाण । भलॉ० । उ० ।
उपशम जाय इग्यारमैं रे, मोह दबावतो जाण ॥ भलाँ० मो० ।
पायो पद जिनराजनों जी ॥ ४ ॥

श्रेणी उपशम जिन ना लहै रे, क्षपक श्रेणी धर खंत । भ० ख० ।
चारित्र मोह खपावतॉ रे, चढ़िया ध्यान अत्यन्त ॥ भ० च० ।
पायो पद जिनराजनों जी ॥ ५ ॥

नवमें आदि संजल चिहुँ रे, अंत समै इक लोभ। भ० अं०।
दशमें सूक्ष्म मात्र ते रे, सागार उपयोग शोभ॥ भ० सा०॥
पायो पद जिनराजनों जी॥ ६॥

एकादशमो उलंघ नैं रे, बारमें मोह खपाय। भ० बा०।
त्रि कर्म इक समै तोड़ता रे, तेरमें केवल पाय॥
पायो पद जिनराजनों जी॥ ७॥

तीर्थ थाप योग रून्ध नै रे, चउदमा थी शिव पाय। भ० च०।
उगणीसै भाद्र पूनमी रे, अनंत रह्या हरपाय। भ० अ०॥
पायो पद जिनराजनों जी॥ ८॥

यह स्तवन निम्न रागिनी में भी गाया जाता है

(लय—आज आणन्दा रे)

अनन्त नाम जिन चवदमाँ, जिनराया रे।
द्रव्य चौथे गुण स्थान, स्वाम सुखदाया रे॥
भावे जिन हुवै तेरमें, जिनराया रे।
इतलै द्रव्य जिन जाण, स्वाम सुखदाया रे॥ १॥

श्री धर्म जिन स्तवन

(लय—भिक्षु पट भारीमाल भलकै)

धर्म जिन धर्म तणा धोरी, त्रटक मोह-पाश नाख्या तोड़ी।
चरण धर्म आतम स्यूं जोड़ी, अहो प्रभु पर्म देव प्यारा॥१॥

शुक्ल ध्यान अमृत रस लीना, संवेग रसे करी जिन भीना ।
प्याला प्रभु उपशम ना पीना, अहो प्रभु पर्म देव प्यारा ॥२॥
जाण्या शब्दादिक मोह जाला, रमणि सुख किम्पाक सम काला ।
हेतु नरकादिक दुःख आला, अहो प्रभु पर्म देव प्यारा ॥३॥
पुद्गल सुख अरि जाण्या स्वामी, ध्यान थिर चित्त आतम धामी ।
जोड़ी युग केवल नीं पामी, अहो प्रभु पर्म देव प्यारा ॥४॥
थाप्या प्रभु च्यार तीरथ तायो, आख्यो धर्म जिन आज्ञा मांयो ।
आज्ञा बाहिरै अधर्म दुःखदायो, अहो प्रभु पर्म देव प्यारा ॥५॥
विरत धर्म धर्म जिन आख्याता, अवरत कही अधर्म सुखदाता ।
सावद्य निरवद्य जु जुआ कह्या खाता, अहो प्रभु पर्म देवप्यारा ॥६॥
बहु जन तार मुक्ति पाया, उगणीसै आसू धुर दिन आया ।
धर्मजिन रटवेई सुख पाया, अहो प्रभु पर्म देव प्यारा ॥७॥

श्री शान्ति जिन स्तवन

(लय—हूं बलिहारी भीखणजी साध री)

शांति करण प्रभु शान्तिनाथजी शिव दायक सुखकन्द की ।
बलिहारी हो शान्ति जिणन्द की ॥ १ ॥
अमृत वाण सुधा-सी अनुपम, मेटण मिथ्या मन्द की ।
बलिहारी हो शान्ति जिणन्द की ॥ २ ॥
काम भोग राग द्वेष कटुक फल, विष-वेलि मोह धन्द की ।
बलिहारी हो शान्ति जिणन्द की ॥ ३ ॥

राक्षसणी रमणी वैतरणी, पुतली अशुचि दुगन्ध की।
वलिहारी हो शान्ति जिणन्द की॥ ४॥
विविध उपदेश देई जन तास्या, हूँ वारी जाऊँ विश्वनंद की।
वलिहारी हो शान्ति जिणन्द की॥ ५॥
परम दयाल गोवाल कृपानिधि, तुम जप माला आनन्द की।
वलिहारी हो शान्ति जिणन्द की॥ ६॥
सम्वत् उगणीसै आसू वदी एकम, शान्तिलता सुखकंद की।
वलिहारी हो शान्ति जिणन्द की॥ ७॥

श्री कुन्थु जिन स्तवन

(लय—वाल्हो तो भावना रो भूखो)

कुन्थु जिनेश्वर करुणा सागर, त्रिभुवन शिर टीकी रे।
प्रभु को समरण कर नीको रे॥ १॥
अद्भुत रूप अनुप कुंथु जिन, दर्शन जग पी को रे।
प्रभु को समरण कर नीको रे॥ २॥
वाण सुधा सम उपशम रस नी, वालहो जग त्री को रे।
प्रभु को समरण कर नीको रे॥ ३॥
अनुकम्पा दोय श्री जिन दाखी, मर्म ओ समदृष्टि को रे।
प्रभु को समरण कर नीको रे॥ ४॥
असंयती रो जीवणो बांछै, ते सावद्य तहतीको रे।
प्रभु को समरण कर नीको रे॥ ५॥

निरवद्य करुणा करी जन तार्‍यां, धर्म ए जिनजी को रे ।
प्रभु को समरण कर नीको रे ॥ ६ ॥
संवत् उगणीसै आसू बदि एकम, शरणो साहिबजी को रे ।
प्रभु को समरण कर नीको रे ॥ ७ ॥

श्री अर जिन स्तवन

(लय—देखो सहियां बनड़ो ए नेमकुमार)

अर जिन कर्म अरी नॉ हन्ता, जगत उद्धारण जहाज ।
म्हानै प्यारा लागै छै जी, अर जिनराज ॥
म्हानै वाल्हा लागै छै जी अर महाराज ॥ १ ॥
परिषह उपसर्ग रूप अरि हण, पाया केवल पाज ।
म्हानै वाल्हा लागै छै जी अर महाराज ॥ २ ॥
नयण न धापै निरखतॉ जी, इन्द्राणी सुर राज ।
म्हानै वाल्हा लागै छै जी अर महाराज ॥ ३ ॥
वारूं रे जिनेश्वर रूप अनूपम, तूं सुगुणा शिरताज ।
म्हानै वाल्हा लागै छै जी अर महाराज ॥ ४ ॥
वाण विशाल दयाल पुरुष नी, भूख तृषा जाए भाज ।
म्हानै वाल्हा लागै छै जी अर महाराज ॥ ५ ॥
शरणे आयो स्वामरे जी, अविचल सुख नें काज ।
म्हानै वाल्हा लागै छै जी अर महाराज ॥ ६ ॥
उगणीसै आसू बदी एकम, आनन्द उपनो आज ।
म्हानै वाल्हा लागै छै जी अर महाराज ॥ ७ ॥

श्री मल्लि जिन स्तवन

(लय—जय गणेश ३ देवा तथा दीन दयाल बाण चरण)

नील वर्ण मल्लि जिनेश्वर, ध्यान निर्मल ध्यायो।
अल्प काल मांही प्रभु, परम ज्ञान पायो॥
मल्लि जिनेश्वर नाम समर, तरण शरण आयो॥ १॥

कल्प पुष्पमाल जेम, सुगन्ध तन सुहायो।
सुर वधु वर नयन भ्रमर, अधिक हि लपटायो॥
मल्लि जिनेश्वर नाम समर, तरण शरण आयो॥ २॥

स्व पर चक्र विविध विघ्न, मिटत तो पसायो।
सिंह नाद थकी गजेन्द्र, जेम दूर जायो॥
मल्लि जिनेश्वर नाम समर, तरण शरण आयो॥ ३॥

वाण विमल निमल सुधा, रस संवेग छायो।
नर सुरासुर त्रिय समाज, सुणत ही हरषायो॥
मल्लि जिनेश्वर नाम समर, तरण शरण आयो॥ ४॥

जगदयाल तू ही कृपाल, जनक ज्यूं सुखदायो।
वत्सल नाथ स्वाम साहिब, सुजश तिलक पायो॥
मल्लि जिनेश्वर नाम समर, तरण शरण आयो॥ ५॥

जप्त जाप खपत पाप, तप्त ही मिटायो।
मल्लि देव त्रिविध सेव, जग अछेरो पायो॥
मल्लि जिनेश्वर नाम समर, तरण शरण आयो॥ ६॥

उगणीसैं आसोज कृष्ण, तीज सुदिन आयो ।
कुम्भनन्दन कर आनन्द, हर्ष थी मैं गायो ॥
मल्लि जिनेश्वर नाम समर, तरण शरण आयो ॥ ७ ॥

श्री मुनिसुव्रत जिन स्तवन

(लय—भरतजी भूप भया छो वैरागी)

सुमित्र नन्दन श्री मुनिसुव्रत, जगत् नाथ जिन जाणी ।
चारित्र ले केवल उपजायो, उपशम रस नी वाणी रा ॥
प्रभुजी आप प्रवल वड़ भागी ॥
त्रिभुवन दीपक सागी रा, प्रभुजी आप प्रवल वड़ भागी ॥ १ ॥

चौत्रीस अतिशय नें पैंतीस वाणी, निरखत सुर इन्द्राणी ।
संवेग रस नी वाणी सांभल, हर्ष स्यूं आंख्यॉ भराणी रा ॥
प्रभुजी आप प्रवल वड़ भागी ॥ २ ॥

शब्द रूप गन्ध रस नें स्पर्श, प्रतिकूल न हुवै तुम आगै ।
ज्यूं पच्च दर्शन थां स्यूं पग नहीं माण्डै ,
तिम अशुभ शब्दादिक भागै रा ॥
प्रभुजी आप प्रवल वड़ भागी ॥ ३ ॥

सुर-कृत जल स्थल पुष्प पुञ्ज वर, ते छांड़ी चित्त दीनो ।
तुम निश्वास सुगन्ध मुख परिमल, मन भ्रमर महा लीनो रा ॥
प्रभुजी आप प्रवल वड़ भागी ॥ ४ ॥

पंचेन्द्रिय सुर नर तिरि तुम स्युं, किम हुवै दुखदायो ।
एकेन्द्रिय अनिल तजै प्रतिकूल पणुं, वाजै गमतो वायो रा ॥
प्रभुजी आप प्रवल वड़ भागी ॥ ५ ॥

राग द्वेष दुर्दन्त ते दमिया, जीत्या विषय विकारो ।
दीन दयाल आयो तुझ शरणे, तू गति मति दातारो रा ॥
प्रभुजी आप प्रवल वड़ भागी ॥ ६ ॥

सम्वत् उगणीसै आसोज तीज तिथि, श्री मुनिसुव्रत गाया ।
लाडनूं शहर मांहि रूड़ी रीते, आनन्द अधिको पाया रा ॥
प्रभुजी आप प्रवल वड़ भागी ॥ ७ ॥

श्री नमि जिन स्तवन

(लय—परम गुरु पूज्यजी मुझ प्यारा रे)

नमिनाथ अनाथों रा नाथो रे, नित्य नमण करूं जोड़ी हाथो रे ।
कर्म काटण वीर विख्यातो, प्रभु नमिनाथजी मुझ प्यारा रे ॥१॥

प्रभु ध्यान सुधारस ध्याया रे, पद केवल जोड़ी पाया रे ।
गुण उत्तम उत्तम आया, प्रभु नमिनाथजी मुझ प्यारा रे ॥२॥

प्रभु वागरी वाण विशालो रे, खीर समुद्र थी अधिक रसालो रे ।
जगतारक दीन दयालो, पमु नमिनाथजी मुझ प्यारा रे ॥३॥

थाप्या तीरथ च्यार जिणिंदो रे, मिथ्या तिमिर हरण नें मुणिंदो रे ।
ज्यांनें सेवत सुर नर वृन्दो, प्रभु नमिनाथजी मुझ प्यारा रे ॥४॥

सुर अनुत्तर विमाण ना सेवै रे, प्रश्न पूछ्याँ उत्तर जिन देवै रे।
अवधिज्ञान करी जाणि लेवै, प्रभु नमिनाथजी मुझ प्यारा रे ॥५॥
तिहाँ बैठा ते तुम ध्यान ध्यावे रे, तुम योग मुद्रा चित्त चाहवै रे।
ते पिण आपरी भावना भावै, प्रभु नमिनाथजी मुझ प्यारा रे ॥६॥
उगणीसै आसोज उदारो रे, कृष्ण चौथ गाया गुण धारो रे।
हुवो आनंद हर्ष अपारो, प्रभु नमिनाथजी मुझ प्यारा रे ॥७॥

श्री अरिष्ट नेमि जिन स्तवन

(लय—छिणगई रे)

प्रभु नेमस्वामी, तूं जगन्नाथ अंतरजामी ॥ ए० आंकड़ी ॥
तू तोरण स्यूं फिर्‍यो जिन स्वाम, अद्भुत बात करी तें अमाम ॥
प्रभु नेम स्वामी० ॥ १ ॥
राजिमति छांड़ी जिनराय, शिव सुन्दर स्यूं प्रीत लगाय ॥ २ ॥
केवल पाया ध्यान वर ध्याय, इन्द्र शची निरखै हर्षाय ॥ ३ ॥
नेरिया पिण पामें मन मोद, तुझ कल्याण सुर करत विनोद ॥ ४ ॥
राग रहित शिव सुख स्यूं प्रीत, कर्म हणै बलि द्वेष रहित ॥ ५ ॥
इचरजकारी प्रभु थारो चरित्र, हूं प्रणमुं कर जोड़ी नित्य ॥ ६ ॥
उगणीसै विद चौथ कुंमार, नेम जप्याँ पायो सुखसार ॥ ७ ॥

श्री पार्श्व जिन स्तवन

(लय—पूज्य भीखणजी तुमारा दर्शन)

लोह कंचन करै पारस काचो, ते कहो कर कुण लेवै हो ।
पारस तू प्रभु साचो पारस, आप समो कर देवै हो ॥
पारसदेव तुमारा दर्शन, भाग भला सोई पावैहो ॥ १ ॥

तुझ मुख-कमल पासे चमरावलि, चंद्र-कान्तिवत् सोहैहो ।
हंस श्रेणि जाणै पंकज सेवै, देखत जन मन मोहै हो ॥
पारस देव तुमार दर्शन० ॥ २ ॥

स्फटिक सिंहासण सिंह आकारे, बैस देशना देवै हो ।
वन-मृग आवै वाणी सुणवा, जाणक सिंह नें सेवै हो ॥
पारस देव तुमारा दर्शन० ॥ ३ ॥

चंद्र समो तुझ मुख महा शीतल, नयन चकोर हर्षावै हो ।
इन्द्र नरेन्द्र सुरासुर रमणी, निरखत तृपति न पावै हो ॥
पारस देव तुमारा दर्शन० ॥ ४ ॥

पाखंडी सरागी आप निरागी, आपस में इम गैरी हो ।
वैर भाव पाखंडी राखै, पिण आप त्यारा नहीं वैरी हो ॥
पारस देव तुमारा दर्शन० ॥ ५ ॥

जिम सूर्य खद्योत ऊपरै, वैरभाव नहीं आणै हो ।
इण विधि प्रभु पिण पाखंडियाँ नें, खद्योत सरीखा जाणै हो ॥
पारस देव तुमारा दर्शन० ॥ ६ ॥

पुद्गल सुख अरि शिव तणा रे, नरक तणा दातार।
छाँड़ रमणि किम्पाक वेलि, संवेग संयम धार॥
नहीं एसो दूसरो जग वीर॥ ५॥

निंदा स्तुति सम पणै रे, मान अनें अपमान।
हर्ष शोक मोह परिहर्यां रे, पामै पद निर्वाण॥
नहीं एसो दूसरो जग वीर॥ ६॥

इम बहुजन प्रभु तारिया रे, प्रणमूं चरम जिनेन्द्र।
उगणीसै आसोज चौथ विद, हुओ अधिक आनंद॥
नहीं एसो दूसरो जग वीर॥ ७॥

जैनागमों के सूक्त

धर्म

[१]

धम्मो मंगल मुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो।
देवा वि तं नमंसन्ति, जस्स धम्मे सयामणो ॥ १ ॥

(दश० अ० १ गा० १)

धर्म उत्कृष्ट मंगल है। अहिंसा, संयम और तप धर्म है। जिसका मन सदा धर्म में है, उसे देवता भी नमते हैं ॥ १ ॥

[२]

अहिंस सच्चं च अतेणगं च,
तत्तो य बंभं अपरिग्गहं च।
पडिवज्जिया पंच महव्वयाणि,
चरिज्ज धम्मं जिणदेसियं विऊ ॥ २ ॥

(उत्तरा० अ० २१ गा० १२)

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह—इन पांच महाव्रतों को स्वीकार करके बुद्धिमान मनुष्य जिनेश्वर भगवान् द्वारा उपदिष्ट धर्म का आचरण करे।

अहिंसा

[३]

तत्थिमं पढमं ठाणं, महावीरेण देसियं।
अहिंसा निउणा दिट्ठा, सव्वभूएसु संजमो ॥ १ ॥

(दश० अ० ६ गा० ९)

भगवान महावीर ने अठारह धर्म स्थानों में सब से पहला स्थान अहिंसा का बतलाया है। सब जीवों के साथ संयम से व्यवहार रखना सच्ची अहिंसा है।

[४]

सव्वे जीवा वि इच्छंति, जीविउं न मरिज्जिउं।
तम्हा पाणिवहं घोरं, निग्गंथा वज्जयंति णं ॥ २ ॥

(दश० अ० ६ गा० ११)

सभी जीव जीना चाहते हैं, मरना कोई नहीं चाहता। इसीलिये निर्ग्रन्थ (जैन मुनि) प्राणिवध रूपी घोर पाप का सर्वथा परित्याग करते हैं।

] ५]

समया सव्वभूएसु, सत्तु-मित्तेसु वा जगे।
पाणाइवायविरई, जावज्जीवाए दुक्करं ॥ ३ ॥

(उत्तरा० अ० १९ गा० २६)

संसार में सब प्राणियों के प्रति—चाहे वे शत्रु हो या मित्र हो—सम भाव रखना तथा जीवन पर्यन्त हिंसा का सर्वथा त्याग करना दुष्कर है।

सत्य

[६]

निच्चकालऽप्पमत्तेणं, मुसावायविवज्जणं।
भासियव्वं हियं सच्चं, निच्चाऽउत्तेण दुक्करं ॥ १ ॥

(उत्तरा० अ० १९ गा० २७)

सदा अप्रमादी और सावधान रहकर, असत्य को त्याग कर हितकारी सत्य वचन ही बोलना चाहिये। इस तरह सत्य बोलना बड़ा कठिन है।

अस्तेय

[७]

चित्तमंतमचित्तं वा, अप्पं वा जइ वा बहुं।
दन्तसोहणमित्तं पि, उग्गहं से अजाइया ॥ १ ॥

(दश० अ० ६ गा० १४)

पदार्थ सचित्त हो या अचित्त, अल्प हो या अधिक; दांत कुरेदने की सींक तक भी संयमी पुरुष अधिकारी की आज्ञा बिना नहीं लेते।

ब्रह्मचर्य

[८]

कामाणुगिद्धिप्पभवं खु दुक्खं,
सव्वस्स लोगस्स सदेवगस्स ।
जं काइयं माणसियं च किंचि,
तस्सऽन्तगं गच्छई वीयरागो ॥ १ ॥
(उत्तरा० अ० ३२ गा० १९)

देवलोक सहित समस्त संसार के शारीरिक तथा मानसिक सभी प्रकार के दुःखों का मूल काम-भोगों की वासना ही है। जो इस सम्बन्ध मे वीतराग हो जाता है वह सभी प्रकार के दुःखों से छूट जाता है ।

[६]

देवदाणवगन्धव्वा, जक्खरक्खसकिन्नरा ।
बंभयारि नमंसन्ति, दुक्करं जे करन्ति तं ॥ २ ॥
(उत्तरा० अ० १६ गा० १६)

जो मनुष्य इस प्रकार दुष्कर ब्रह्मचर्य का पालन करता है, उसे देव, दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस और किन्नर आदि सभी नमस्कार करते है ।

अपरिग्रह

[१०]

न सो परिग्गहो वुत्तो, नायपुत्तेण ताइणा ।
मुच्छा परिग्गहो वुत्तो, इइ वुत्तं महेसिणा ॥ १ ॥

(दश० अ० ६ गा० २१)

प्राणिमात्र के संरक्षक भगवान महावीर ने संयम-साधना के लिये आवश्यक वस्त्र, पात्र आदि स्थूल पदार्थों को परिग्रह नहीं बतलाया है किन्तु इनमें मूर्च्छा (आसक्ति) रखना ही परिग्रह है।

विनय

[११]

मूलाओ खंधप्पभवो दुमस्स,
खंधाउ पच्छा समुवेन्ति साहा ।
साहाप्पसाहा विरुहंति पत्ता,
तओ से पुप्फं च फलं रसो य ॥ १ ॥

(दश० अ० ९ उ० २ गा० १)

वृक्ष के मूल से स्कन्ध, स्कन्ध से शाखा, शाखा से प्रशाखा और उनसे पत्ते उत्पन्न होकर क्रमशः फूल, फल और रस उत्पन्न होते हैं।

[१२]

एवं धम्मस्स विणओ, मूलं परमो से मोक्खो।
जेण कित्तिं सुयं सिग्घं, निस्सेसं चाभिगच्छइ ॥ २ ॥

(दश० अ० ९ उ० २ गा० २)

इसी भांति धर्म का मूल विनय है और मोक्ष उसका अन्तिम रस है। विनय से ही मनुष्य कीर्ति, विद्या, श्लाघा और निःश्रेयस् शीघ्र प्राप्त करता है।

चार-अंग

[१३]

चत्तारि परमंगाणि, दुल्लहाणीह जन्तुणो।
माणुसत्तं, सुई, सद्धा, संजमम्मि य वीरियं ॥ १ ॥

(उत्तरा० अ० ३ गा० १)

संसार में जीवों को इन चार श्रेष्ठ अङ्गों (जीवन विकास के साधनों) का प्राप्त होना बहुत दुर्लभ है। वे चार अङ्ग ये है—मनुष्यत्व, धर्म श्रुति, सत्‌श्रद्धा और संयम-मार्ग में पुरुषार्थ।

कषाय

[१४]

कोहो य माणो य अणिग्गहीया,
माया य लोभो य पवड्ढमाणा।

चत्तारि एए कसिणा कसाया,
सिंचन्ति मूलाइं पुणब्भवस्स ॥ १ ॥
(दश० अ० ८ गा० ४०)

अनिगृहीत क्रोध अहंकार, बढ़ते हुए माया और लोभ, ये चारों ही कषाय पुनर्जन्म रूपी संसार वृक्षके मूल को सींचते हैं।

[१५]

कोहो पीइं पणासेइ, माणो विणयनासणो।
माया मित्ताणि नासेइ, लोहो सव्वविणासणो ॥ २ ॥
(दश० अ० ८ गा० ३७)

क्रोध प्रीति का, अहंकार विनय का, कपट मित्रता का और लोभ सारे सद्गुणोंका नाश करता है।

[१६]

उवसमेण हणे कोहं, माणं मद्दवया जिणे।
मायमज्जवभावेण, लोभं सन्तोसओ जिणे ॥ ३ ॥
(दश० अ० ८ गा० ३८)

उपशाम (शान्ति) से क्रोध, नम्रता से अहंकार, सरलता से कपट और सन्तोष से लोभ को जीते।

[१७]

जहा लाहो तहा लोहो, लाहा लोहो पवड्ढई।
दोमासकयं कज्जं, कोडीए वि न निट्ठियं ॥ ४ ॥
(उत्तरा० अ० ८ गा० १२)

ज्यों ज्यों लाभ बढ़ता है त्यों त्यों लोभ भी बढ़ता जाता है। देखो कपिल ब्राह्मण को पहले दो मासा सोने की आवश्यकता थी वह बाद में क्रोड़ों से भी पूरी नहीं हुई।

[१८]

सुवण्ण रुप्पस्स उ पव्वया भवे,
सिया हु केलाससमा असंखया।
नरस्स लुद्धस्स न तेहि किंचि,
इच्छा हु आगाससमा अणंतिया ॥ ५ ॥

(उत्तरा० अ० ९ गा० ४८)

कैलाश के समान विशाल सोने और चांदी के असंख्य पर्वत भी यदि पास में हो जाय, तो भी लोभी मनुष्य की तृप्ति के लिये वे कुछ भी नहीं है। क्योंकि तृष्णा आकाश के समान अनन्त है।

अप्रमाद

[१९]

असंखयं जीविय मा पमायए,
जरोवणीयस्स हु नत्थि ताणं।
एवं विजाणाहि जणे पमत्ते,
कं नु विहिंसा अजया गहिन्ति ॥ १ ॥

(उत्तरा० अ० ४ गा० १)

जीवन असंस्कृत है—अर्थात् एक बार टूट जाने के बाद फिर नहीं जुड़ता। अतः एक क्षण भी प्रमाद न-करो।

'प्रमाद, अहिंसा और असंयम में अमूल्य यौवन-काल बितादेने के बाद जब वृद्धावस्था आवेगी, तब तुम्हारी कौन रक्षा करेगा—तब किस की शरण लोगे?' यह खूब सोच-विचार लो।

[२०]

संसारमावन्न परस्स अट्ठा,
साहारणं जं च करेइ कम्मं।
कम्मस्स ते तस्स उ वेयकाले,
न बन्धवा बन्धवयं उवेन्ति ॥ २ ॥

(उत्तरा० अ० ४ गा० ४)

संसारी मनुष्य अपने प्रिय कुटुम्बियों के लिए बुरे-से बुरे पाप-कर्म भी कर डालता है, पर जब उसके दुष्फल भोगने का समय आता है, तब अकेला ही दुःख भोगता है, कोई भी भाई-बन्धु उसका दुःख बँटाने वाला—सहायता पहुँचाने वाला नहीं होता।

[२१]

दुमपत्तए पंडुयए जहा,
निवडइ राइगणाण अच्चए।

एवं मणुयाण जीवियं,
समयं गोयम ! मा पमायए ॥ ३ ॥
(उत्तरा० अ० १० गा० १)

जैसे वृक्ष का पत्ता पतझड़-ऋतुकालिक रात्रि-समूह के वीत जाने के वाद पीला होकर गिर जाता है, वैसे ही मनुष्यों का जीवन भी आयु समाप्त होने पर सहसा नष्ट हो जाता है। इसलिए हे गौतम ! क्षण-मात्र भी प्रमाद न कर।

[२२]

कुसग्गे जह ओसबिन्दुए,
थोवं चिट्ठइ लम्बमाणए।
एवं मणुयाण जीवियं,
समयं गोयम ! मा पमायए ॥ ४ ॥
(उत्तरा० अ० १०)

जैसे ओस की बून्द कुशा की नोक पर थोड़ी देर तक ही रहती है, वैसे ही मनुष्यों का जीवन भी वहुत अल्प है—शीघ्र ही नष्ट हो जाने वाला है। इसलिए हे गौतम ! क्षण-मात्र-भी प्रमाद न कर।

[२३]

परिजूरइ ते सरीरयं,
केसा पंडुरया हवन्ति ते।

से सव्वबले य हायई,
समयं गोयम ! मा पमायए ॥ ५ ॥
(उत्तरा० अ० १० गा० २६)

तेरा शरीर दिन-प्रति-दिन जीर्ण होता जा रहा है, सिर के बाल पक कर श्वेत होने लगे हैं; अधिक क्या—शारीरिक और मानसिक सभी प्रकार का बल घटता जा रहा है। हे गौतम ! क्षण-मात्र भी प्रमाद न कर।

प्रमाद

[२४]

जहा य अण्डप्पभवा बलागा,
अण्डं बलागप्पभवं जहा य।
एमेव मोहाययणं खु तण्हा,
मोहं च तण्हाययणं वयन्ति ॥ १ ॥
(उत्तरा० अ० ३२ गा० ६)

जिस प्रकार बगुली अण्डे से पैदा होती है और अण्डा बगुली से पैदा होता है, उसी प्रकार मोह का उत्पत्ति-स्थान तृष्णा है और तृष्णा का उत्पत्ति-स्थान मोह है।

[२५]

रागो य दोसो वि य कम्मबीयं,
कम्मं च मोहप्पभवं वयन्ति।

कम्मं च जाईमरणस्स मूलं,
दुक्खं च जाईमरणं वयन्ति ॥ २ ॥
(उत्तरा० अ० ३२ गा० ७)

राग और द्वेष, दोनों कर्म के बीज हैं। अतः मोह ही कर्म का उत्पादक माना गया है। कर्म-सिद्धान्त के अनुभवी लोग कहते हैं कि संसार में जन्म-मरण का मूल, कर्म है और जन्म-मरण—यही एक मात्र दुःख है।

[२६]

दुक्खं हयं जस्स न होइ मोहो,
मोहो हओ जस्स न होइ तण्हा ।
तण्हा हया जस्स न होइ लोहो,
लोहो हओ जस्स न किंचणाइं ॥ ३ ॥
(उत्तरा० अ० ३२ गा० ८)

जिसको मोह नहीं है उसने दुःख का नाश कर दिया। जिसको तृष्णा नहीं है उसने मोह का नाश कर दिया। जिसने लोभ का परित्याग कर दिया उसने तृष्णा का क्षय कर डाला और जो अकिञ्चन है उसने लोभ का विनाश कर दिया।

आत्मा

[२७]

अप्पा नई वेयरणी, अप्पा मे कूडसामली ।
अप्पा कामदुहा धेणू, अप्पा मे नन्दणं वणं ॥ १ ॥
(उत्तरा० अ० २० गा० ३६)

आत्मा ही नरक की वैतरणी नदी तथा कूट शाल्मली वृक्ष है। आत्मा ही स्वर्ग की काम दुधा धेनु तथा नन्दन-वन है।

[२८]

अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य।
अप्पा मित्तममित्तं च दुप्पट्ठिय सुप्पट्ठिओ ॥ २ ॥

(उत्तरा० अ० २० गा० ३७)

आत्मा ही अपने दुःखों और सुखों की कर्त्ता तथा भोक्ता है। अच्छे मार्ग पर चलने वाली आत्मा मित्र है और बुरे मार्ग पर चलने वाली आत्मा शत्रु है।

[२९]

अप्पा चेव दमेयव्वो, अप्पा हु खलु दुद्दमो।
अप्पा दन्तो सुही होइ, अस्सिं लोए परत्थ य ॥ ३ ॥

(उत्तरा० अ० १ गा० १५)

अपने-आपको ही दमन करना चाहिए। वास्तव में यही कठिन है। अपने-आपको दमन करने वाला इस लोक तथा परलोक में सुखी होता है।

[३०]

जो सहस्सं सहस्साणं, संगामे दुज्जए जिणे।
एगं जिणेज्ज अप्पाणं, एस से परमो जओ ॥ ४ ॥

(उत्तरा० अ० ९ गा० ३४)

जो वीर दुर्जय संग्राम में लाखों योद्धाओं को जीतता है, यदि वह एक अपनी आत्मा को जीत ले, तो यही उसकी सर्व-श्रेष्ठ विजय होगी।

[३१]

पंचिन्दियाणि कोहे, माणं मायं तहेव लोहं च ।
दुज्जयं चेव अप्पाणं, सव्वमप्पे जिए जियं ॥ ५ ॥

(उत्तरा० अ० ९ गा० ३६)

पांच इन्द्रियाँ—क्रोध, मान, माया, लोभ तथा सब से अधिक दुर्जय अपनी आत्मा को जीतना चाहिए। एक आत्मा के जीत लेने पर सब कुछ जीत लिया जाता है।

[३२]

न तं अरी कंठ-छेत्ता करेइ,
जं से करे अप्पणिया दुरप्पा ।
से नाहिइ मच्चुमुहं तु पत्ते,
पच्छाणुतावेण दयाविहूणो ॥ ६ ॥

(उत्तरा० अ० २० गा० ४८)

सिर काटने वाला शत्रु भी उतना अपकार नहीं करता, जितना दुराचरण में लगी हुई अपनी आत्मा करती है। दयाशून्य दुराचारी को अपने दुराचरणों का पहले ध्यान नहीं आता; परन्तु जब वह मृत्यु के मुख में पहुँचता है, तब अपने सब दुराचरणों को याद कर-कर पछताता है।

अशरण

[३३]

जम्मं दुक्खं जरा दुक्खं, रोगाणि मरणाणि य।
अहो दुक्खो हु संसारो, जत्थ कीसन्ति जन्तुणो ॥ १ ॥

(उत्तरा० अ० १९ गा० १५)

जन्म का दुःख है, जरा (बुढ़ापा का दुःख है, रोग और मरण का दुःख है। अहो! संसार दुःख रूप ही है! यही कारण है कि यहाँ प्रत्येक प्राणी जब देखो तब क्लेश ही पाता रहता है।

[३४]

इमं सरीरं अणिच्चं, असुइं असुइसंभवं।
असासयावासमिणं, दुक्खकेसाण भायणं ॥ २ ॥

(उत्तरा० अ० १९ गा० १२)

यह शरीर अनित्य है, अशुचि है, अशुचि से उत्पन्न हुआ है, दुःख और क्लेशों का धाम है। जीवात्मा का इसमें कुछ ही क्षणों के लिए निवास है, आखिर एक दिन तो अचानक छोड़ कर चले ही जाना है।

[३५]

दाराणि सुया चेव, मित्ता य तह बन्धवा।
जीवन्तमणुजीवन्ति, मयं नाणुवयन्ति य ॥ ३ ॥

(उत्तरा० अ० १८ गा० १४)

स्त्री, पुत्र, मित्र और वन्धुजन, सव जीते-जी के ही साथी है, मरने पर कोई भी साथी नहीं आता।

[३६]

जमिणं जगई पुढो जगा,
कम्मेहिं लुप्पन्ति पाणिणो।
सयमेव कडेहि गाहई,
नो तस्स मुच्चेज्जऽपुट्ठयं ॥ ४ ॥

(सूत्र० श्रु० १ अ० २ उ० १ गा० ४)

संसार में जितने भी प्राणी हैं, सव अपने कृत-कर्मों के कारण ही दुःखी होते है। अच्छा या वुरा जैसा भी कर्म हो, उसका फल भोगे विना छुटकारा नहीं हो सकता।

[३७]

माणुसत्ते असारम्मि, वाहि-रोगाण आलए।
जरामरणघत्थम्मि, खणं पि न रमामहं ॥ ५ ॥

(उत्तरा० अ० १९ गा० १४)

मानव-शरीर असार है, आधि व्याधियों का घर है, जरा और मरण से ग्रस्त है। अतः मैं इसकी ओर से क्षण भर भी प्रसन्न नहीं होता।

[३८]

न तस्स दुक्खं विभयन्ति नाइओ,
न मित्तवग्गा न सुया न वन्धवा।

एक्को सयं पच्चणुहोइ दुक्खं,

कत्तारमेव अणुजाइ कम्मं ॥ ६ ॥

(उत्तरा० अ० १३ गा० २३)

पापी जीव के दु:ख को न जातिवाले बँटा सकते हैं, न मित्र वर्ग, न पुत्र और न भाई-बन्धु। जब दु:ख आ पड़ता है, तब वह अकेला ही उसे भोगता है। क्योंकि कर्म अपने कर्त्ता के ही पीछे लगते हैं, अन्य किसी के नहीं।

काम

[३९]

सव्वं विलवियं गीयं, सव्वं नट्टं विडम्बियं।

सव्वे आभरणा भारा, सव्वे कामा दुहावहा ॥ १ ॥

(उत्तरा० अ० १३ गा० १६)

गीत सब विलाप रूप हैं, नाट्य सब विडम्बना रूप हैं, आभरण सब भार रूप हैं। अधिक क्या; संसार के जो भी काम-भोग हैं, सब-के-सब दु:खावह है।

[४०]

खणमेत्तसोक्खा बहुकालदुक्खा,

पगामदुक्खा अणिगामसोक्खा।

संसारमोक्खस्स विपक्खभूया,

खाणी अणत्थाण उ कामभोगा ॥ २ ॥

(उत्तरा० अ० १४ गा० १३)

काम-भोग क्षण मात्र सुख देनेवाले हैं और चिरकाल तक दुःख देनेवाले। उनमें सुख बहुत थोड़ा है, अत्यधिक दुःख ही-दुःख है, मोक्ष-सुख के वे भयङ्कर शत्रु हैं, अनर्थों की खान हैं।

[४१]

जहा किंपागफलाण, परिणामो न सुन्दरो।
एवं भुत्ताण भोगाणं, परिणामो न सुन्दरो॥ ३॥

(उत्तरा० अ० १९ गा० १७)

जैसे किम्पाक फलों का परिणाम अच्छा नहीं होता, उसी प्रकार भोगे हुए भोगों का परिणाम भी अच्छा नहीं होता।

[४२]

जहा य किंपागफला मणोरमा,
रसेण वण्णेण य भुंजमाणा।
ते खुड्डए जिविए पच्चमाणा,
एसोवमा कामगुणा विवागे॥ ३॥

(उत्तरा० अ० ३२ गा० २०)

जैसे किम्पाक फल रूप-रंग और रस की दृष्टि से शुरू में खाते समय तो बड़े अच्छे मालूम होते हैं, पर खा लेने के बाद जीवन के नाशक हैं, वैसे ही कामभोग भी प्रारंभ में बड़े मनोहर लगते हैं, पर विपाक-काल में सर्वनाश कर देते हैं।

पूज्य

[४३]

अन्नायउंछं चरइ विसुद्धं,
जवणट्ठया समुयाणं च निच्चं ।
अलद्धुयं नो परिदेवएज्जा,
लद्धुं न विकत्थई स पुज्जो ॥ १ ॥

(दश० अ० ९ उ० ३ गा० ४)

जो केवल संयम-यात्रा के निर्वाह के लिए अपरिचितभाव से दोष-रहित भिक्षावृत्ति करता है, जो आहार आदि न मिलने पर भी खिन्न नहीं होता और मिल जाने पर प्रसन्न नहीं होता, वही पूज्य है।

[४४]

संथारसेज्जासणभत्तपाणे,
अप्पिच्छया अइलाभे वि सन्ते ।
जो एवमप्पाणऽभितोसएज्जा
संतोसपाहन्नरए स पुज्जो ॥ २ ॥

(दश० अ० ९ उ० ३ गा० ५)

जो संस्तारक, शय्या, आसन और भोजन-पान आदि का अधिक लाभ होने पर भी अपनी आवश्यकता के अनुसार थोड़ा ग्रहण करता है, सन्तोष की प्रधानता में रत होकर अपने-आपको सदा सन्तुष्ट बनाये रखता है, वही पूज्य है।

[४५]

सक्का सहेउं आसाइ कंटया,
अओमया उच्छहया नरेण ।
अणासए जो उ सहेज्ज कंटए,
वईमए कण्णसरे स पुज्जो ॥ ३ ॥
(दश० अ० ९ उ० ३ गा० ६)

संसार में लोभी मनुष्य किसी विशेष आशा की पूर्ति के लिए लौह-कण्टक भी सहन कर लेते हैं; परन्तु जो बिना किसी आशा-तृष्णा के कानों में तीर के समान चुभने वाले दुर्वचन रूपी कण्टकों को सहन करता है, वह पूज्य है ।

[४६]

समावयन्ता वयणाभिघाया,
कण्णं गया दुम्मणियं जणन्ति ।
धम्मो त्ति किच्चा परमग्गसूरे,
जिइन्दिए जो सहइ स पुज्जो ॥ ४ ॥
(दश० अ० ९ उ० ३ गा० ८)

विरोधियों की ओर से पड़नेवाली दुर्वचन की चोटें कानों में पहुँचकर बड़ी मर्मान्तक पीड़ा पैदा करती हैं, परन्तु जो क्षमाशूर जितेन्द्रिय पुरुष उन चोटों को अपना धर्म जान कर समभाव से सहन कर लेता है, वही पूज्य है ।

मोक्ष मार्ग

[४७]

कहं चरे ? कहं चिट्ठे ? कहमासे ? कहं सए ?
कहं भुंजन्तो भासन्तो पावं कम्मं न बन्धइ ? ॥ १ ॥

(दश० अ० ४ गा० ७)

भगवन् ! कैसे चले ? कैसे खड़ा हो ? कैसे बैठे ? कैसे सोये ? कैसे भोजन करे ? कैसे बोले ?—जिससे कि पाप-कर्म का बन्ध न हो।

[४८]

जयं चरे जयं चिट्ठे जयं मासे जयं सए।
जयं भुंजन्तो भासन्तो पावं कम्मं न बन्धइ ॥ २ ॥

(दश० अ० ४ गा० ८)

आयुष्मन ! विवेक से चले, विवेक से खड़ा हो, विवेक से बैठे, विवेक से सोये, विवेक से भोजन करे और विवेक से ही बोले, तो पाप-कर्म नहीं बान्ध सकता।

[४९]

सव्वभूयप्पभूयस्स सम्मं भूयाइं पासओ।
पिहियासवस्स दन्तस्स पावं कम्मं न बन्धइ ॥ ३ ॥

(दश० अ० ४ गा० ९)

जो सब जीवों को अपने समान समझता है, अपने पराये सब को समान दृष्टि से देखता है, जिसने सब आस्रवों का निरोध कर लिया है, जो चंचल इन्द्रियों का दमन कर चुका है, उसके पाप-कर्म का बन्धन नहीं होता।

क्षमापन

[५०]

खामेमि सव्वजीवे, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ती मे सव्वभूएसु, वेरं मज्झ न केणई ॥ १ ॥

(पच प्रति० वंदित्तु सू० गा० ४९)

किसी ने मेरा कोई अपराध किया हो, तो मैं खमाता हूँ अर्थात् क्षमा करता हूं। वैसे ही मैंने भी किसी का कुछ अपराध किया हो, तो वह मुझे क्षमा करे। मेरी सब जीवों के साथ मित्रता है, किसी के साथ शत्रुता नहीं है।

[५१]

जं जं मणेण बद्धं जं जं वायाए भासिअं पावं।
जं जं काएण कयं मिच्छा मि दुक्कडं तस्स ॥ २ ॥

(पचप्रति० सथारा सू० अंतिम गाथा)

मैंने जो जो पाप मन से संकल्पित किये हैं, वाणी से बोले हैं और शरीर से किये हैं, वे मेरे सब पाप मिथ्या हो जायँ।

महावीर प्रार्थना

(लय—जिन धर्म का डंका भारत में बजवा दिया भिक्षु स्वामी नें)

महावीर प्रभू के चरणों में, श्रद्धा के कुसुम चढ़ायें हम।
उनके आदर्शों को अपना, जीवन की ज्योति जगायें हम॥
(ध्रुव पद)

तप संयम मय शुभ साधन से, आराध्यचरण आराधन से।
वन मुक्त विकारों से सहसा, अव आत्म विजय कर पायें हम॥
महावीर प्रभू के चरणों में० ॥ १ ॥

दृढ़ निष्ठा नियम निभाने में, हो प्राण वली प्रण पाने में।
मजवूत मनोवल हो ऐसा, कायरता कभी न लायें हम॥
महावीर प्रभू के चरणों में० ॥ २ ॥

यश-लोलुपता, पद-लोलुपता, न सताये कभी विकार व्यथा।
निष्काम स्व-पर कल्याण, काम, जीवन अर्पण कर पायें हम॥
महावीर प्रभू के चरणो में० ॥ ३ ॥

गुरुदेव शरण में लीन रहें, निर्भीक धर्म की बाट बहें।
अविचल दिल सत्य अहिंसा का, दुनिया को सुपथ दिखायें हम॥
महावीर प्रभू के चरणों में० ॥ ४ ॥

प्राणी-प्राणी सह मैत्रि सर्फे, ईर्ष्या मत्सर अभिमान तर्जे।
कहनी करनी इकसार बना, "तुलसी" तेरा पथ पायें हम॥
महावीर प्रभू के चरणों में० ॥ ५ ॥

परमेष्ठी पञ्चक

(लय—मैं ढूंढ फिरी जग सारा)

परमेष्ठी पञ्चक ध्याऊँ, मैं सुमर सुमर सुख पाऊँ।
निज जीवन सफल बणाऊँ, परमेष्ठि पञ्चक ध्याऊँ॥
(ध्रुव पद)

अरिहन्त सिद्ध अविनाशी, धर्माचारज गुण राशी।
है उपाध्याय अभ्यासी, मुनि-चरण शरण में आऊँ॥ १॥

सहु मुक्ति-महल रा वासी, पधराया व पधरासी।
ज्योति में ज्योति मिलासी, अस्तित्व अलग लग गाऊँ॥ २॥

निस्वारथ पर-उपकारी, जग जीवन रा हितकारी।
हो वार-वार वलिहारी, मैं छिन-छिन ध्यान लगाऊँ॥

ज्यांरी वाणी कल्याणी, सद्धर्म मर्म दरशाणी।
घट-घट समता सरसाणी, सुण हृदय-कमल विकसाऊँ॥४॥

जिन-मत में मंत्र अनादि, है 'नमोक्कार' अविवादी।
सुमरण स्यूं हुवै समाधि, 'तुलसी' नित शीश झुकाऊँ॥ ५॥

अरिहन्त पञ्चक

(लय— आसावरी)

प्रभु म्हांरै मन-मन्दिर में पधारो, करूं स्वागत-गान गुणां रो।
करूं पल-पल पूजन प्यारो, प्रभु म्हांरै मन-मन्दिर में पधारो ॥
(ध्रुव पद)

चिन्मय नें पाषाण बणाऊँ ? नहिं मैं जड पूजारो।
अगर, तगर, चन्दन क्यूँ चरचूँ ? कण-कण सुरभित थांरो ॥ १ ॥

नहिं फल, कुसुम की भेंट चढ़ाऊँ, मैं भाव भेंट करणारो।
आप अमल अविकार प्रभूजी, (तो) स्नान कराऊँ क्यांरो ॥ २ ॥

नहिं तत, ताल, कंसाल बजाऊँ, नहिं टोकर टणकारो।
केवल जस झालर झणणाऊँ, धूप ध्यान धरणारो ॥ ३ ॥

म्लान स्थान चंचलता निरखी, न करो नाथ ! नकारो।
तुम थिरवासे निरमलता पा, होसी थिरचा वारो ॥ ४ ॥

वीतराग, मोह, माया त्यागी, मतनां मोहि विसारो।
अशरण-शरण, पतित-पावन प्रभु, 'तुलसी' अब तो तारो ॥ ५ ॥

सिद्ध पञ्चक

(लय—आये आये जी बदरवा करि०)

देवो देवोजी डगर जो सिद्धि-नगर पहुँचावै ।
भवि पलक-पलक थांरो अपलक ध्यान लगावै ॥
(ध्रुव पद)

किण मारग स्यूं श्री जिनवरजी, शिवपुर धाम सिधावै ?
सर्वदर्शी, सर्वज्ञ, स्वभावे, आतम-सुख अपणावै ॥ १ ॥

अक्षय अरुज अनन्त अचल अज, अव्याबाध कहावै ।
अजरामर-पद अनुपम सम्पद, आवागमन मिटावै ॥ २ ॥

निकट अलोक प्रदेश अनन्ता, क्यूं हतभाग रहावै ? ।
पैंतालीस लाख योजन में, क्यूं कर सकल समावै ॥ ३ ॥

साक्षात्कार हुवै यदि साहिब, दया-दृष्टि दिखलावै ।
वीर पुत्र जो 'भील-पुत्र' ज्यूं, नहिं घबराट मचावै ॥ ४ ॥

ज्योतिर्मय सच्चिदानन्द पद, प्रणम्यां पाप पलावै ।
तन्मय तन मन हुलसी 'तुलसी' सिद्ध स्तवन सुणावै ॥ ५ ॥

आचार्य पञ्चक

(लय—पानी में मीन पीयासी)

धर्माचारज अब तारो, प्रभु लीन्हों शरण तुम्हारो । ध० ।
कुछ करुणा-दृष्टि निहारो, धर्माचारज अब तारो ॥
(ध्रुव पद)

भव-सागर है अथग अमित जल, नहिं कहिं निजर किनारो ।
काल अनन्तो बीत्यो भमतां, भगवन् अबै उबारो ॥ १ ॥

सास्रव आतम नाव पुराणी, पल-पल जल पैसारो ।
डगमग-डगमग डोल रही है, नहिं कोई खेवण हारो ॥ २ ॥

डगर-डगर में मगर भयङ्कर, पग-पग पर डर बाँ रो ।
तरुण तूफान उठै हड़बड़कै, धड़कै दिल दुनियाँ रो ॥ ३ ॥

भटक रह्यो मन-भंवर भंवर में, मांझी बण मतवारो ।
आप बिना इण विषम समय में, गुरुवर ! कवण सहारो ॥ ४ ॥

प्रतिनिधि आप प्रथम पद रा हो, सबल शक्ति संचारो ।
करुण पुकार सुणो भगतां री, 'तुलसी' पार उतारो ॥ ५ ॥

उपाध्याय पञ्चक

(लय—नाथ कैसे कर्म को फन्द छुड़ायो)

भविक उपाध्यायजी नें नित ध्याओ ।
निज जीवन ध्येय वणाओ ॥

(ध्रुव पद)

परमेष्ठी पंचक में ज्यांरो, चौथो पद है चावो ।
'णामो उवज्झायाणं' सुजनाँ, सुमर-सुमर सुख पावो ॥ १ ॥

सूत्र, अर्थ, तदुभय आगम रो, गहन ज्ञान यदि चाहवो ।
तो तुम उपाध्यायजी रै चरणाँ, वलि-वलि भक्ति वढ़ावो ॥ २ ॥

पंच महाव्रत पंचाचार निपुण गुण-गरिमा गावो ।
आचारज री भुजा दाहिणी, सुधिजन शीश झुकावो ॥ ३ ॥

शान्त दान्त, उपशान्त, गुणागर, शासणदेव दृढ़ावो ।
अमृत-वागर, ज्ञान-उजागर, कर-कर विनय रिझावो ॥ ४ ॥

परम प्रभात समय हो सम्मुख, मंगल-गान सुणावो ।
'तुलसी' विमल भावनाँ स्यूं भज, करमाँ री कोड़ खपावो ॥ ५ ॥

साधु पञ्चक

(लय—असल दुपट्टो फूल रे गुलाबी०)

दोन्यूं हाथ जोड़ कर करो, साधुजी रै चरणाँ में परणाम ।
चरणाँ में परणाम रे सुजन जन, करताँ पाप पलावै ।
पावै अजरामर शिव-धाम ॥ दो० ॥
(ध्रुव पद)

आत्म-साधना करै रे निरन्तर, वै साधु कहिवावै ।
भावै विमल भाव अविराम ॥ १ ॥

पंच महाव्रत करण जोग जुत, आजीवन सुध पालै ।
भालै शिव-मग आठूं याम ॥ २ ॥

निज जीवन-धन गुरु-अनुशासन, शीश चढ़ाता विचरै ।
करणी करै सदा निष्काम ॥ ३ ॥

पर उपकार परायण पल-पल, भल उपदेश सुणावै ।
ध्यावै भविजन ज्यांरो नाम ॥ ४ ॥

अप्रतिबन्धविहारी भारी, निज, पर आतम तारै ।
सारै 'तुलसी' वंछित काम ॥ ५ ॥

श्री आदिनाथ स्तोत्र

(लय—जय जय जगमग विद्या ज्योति जरे)

जय मंगल मय मंगल प्रति पल हो ।
जय आदीश्वर हम में अतुल आत्म-बल हो ।
जय मंगल मय मंगल प्रति पल हो ॥

मानव को व्यवहारिकता की, पहली देन तुम्हारी ।
मानवता के अटल पुजारी, वार वार वलिहारी ।
है मानव चिर आभारी ।
जय जग जीवन, स्मृतियाँ अविचल हो ॥ जय० ॥ १ ॥

नई मोड़ युग को दी तुमने, नई शृङ्खला जोड़ी ।
मानव मानव के मानस में ज्ञान रश्मियाँ छोड़ी ।
वह नई चेतना दोड़ी ।
जय ज्योतिधर ज्योतित भूतल हो ॥ जय० ॥ २ ॥

राजनीति के नव निर्माता, नव समाज के स्रष्टा ।
नव जीवन चर्या निर्देशक, नव तत्वों के द्रष्टा ।
आध्यात्मिक पथ आक्रष्टा ।
जय हृदयेश्वर हृदय सुशृङ्खल हो ॥ जय० ॥ ३ ॥

धर्म नीति के प्रथम प्रवर्तक, प्रथमार्हत मत नेता ।
धार्मिक प्रथम प्रथम भिक्षाचर, प्रथम सत्य निर्णेता ।
शासन के प्रथम प्रणेता ।
जय तपोधन, "तुलसी" मंगल हो ॥ जय० ॥ ४ ॥

परम पुरुष

(लय—सुगुणा पाप पङ्क परहरिये)

अह सम परम पुरुष नै समरूं।

परम पुरुष नै सुध मन समर्यां, आतम निरमल होय।
निज में निज-गुण परगट जोय, अह सम परम पुरुष ने समरूं॥
(ध्रुव पद)

ऋषभ, अजित, सम्भव, अभिनन्दन, सुमति, पद्मप्रभ नाम।
सप्तम स्वाम सुपास, चन्द्रप्रभ, सुविधि, शीतल, अभिराम॥ १॥

श्रेयांस, वासुपूज्य, जिन वन्दूं, विमल, अनन्त विशेष।
धर्म, शान्ति, कुन्थू, अर, मल्ली, मुनिसुव्रत तीर्थेश॥ २॥

नमि जिन, नेमिनाथ, पारस प्रभू, चौवीसमाँ महावीर।
भाव निक्षेप भजन करताँ जन, पावै भवदधि तीर॥ ३॥

सिद्ध अनन्त आठ गुण नायक, अजरामर कहिवाय।
तीन प्रदक्षिण देई प्रणमुं, थिर कर मन वच काय॥ ४॥

गौतम आदि इग्यारह गणधर, धर्माचारज ध्येय।
पंच वीस गुण युक्त विराजे, उपाध्याय आदेय॥ ५॥

अढ़ी द्वीप पनरा खेतराँ में, पंच महाव्रत धार।
समिति गुप्ति युत सुध साधु, वन्दूं बारम्बार॥ ६॥

दु:षम आरे भरत क्षेत्र में, प्रगट्या भिक्षु स्वाम।
अरिहंत देव ज्यूं धर्म दिपायो, पायो जग में नाम॥ ७॥

पटधर भारमह्ल, ऋषिराया, जय जश मघ महाराज।
माणकलाल, डालगणि, कालू, अष्टम पट अधिराज ॥ ८ ॥
भाग्य योग भिक्षु-गण पायो, तेरापंथ प्रख्यात।
परम परमोद मनावै गणपति, 'तुलसी' वदना जात ॥ ९ ॥

स्वाम संभारो

(लय—पर घर लाज न मारो)

मोहि स्वाम सम्भारो, मोहि स्वाम।
स्वाम सम्भारो नाथ सम्भारो, मैं शरणात थांरो।
भगवन्! मति रे विसारो, मोहि स्वाम सम्भारो ॥
(ध्रुव पद)

पल २ छिन २ घड़ी २ निश-दिन, ध्याऊँ ध्यान तुम्हारो।
सर्वदर्शी समदर्शी तुम हो, आन्तर भाव निहारो ॥ १ ॥
तीन तत्व अरु पांच पदाँ में, प्रमुख स्थान स्वीकारो।
और देव देवाधिदेव प्रभु, अनन्त चतुष्टय धारो ॥ २ ॥
विहरमाण तुम वीस निरन्तर, लेखो उत्कृष्टाँ रो।
इक सौ सित्तर एक समय में, भाग बड़ो दुनियाँ रो ॥ ३ ॥
सहज रूप कर करुणा, शरणागत रा कारज सारो।
भव-सागर में नैया म्हाँरी, अब तो पार उतारो ॥ ४ ॥
मन-मन्दिर में सदा विराजित, ल्यो प्रभु पूजन म्हांरो।
'तुलसी' तुम चरणाम्बुज-लोलुप, भ्रमर-भाव वहनारो ॥ ५ ॥

अनुव्रत-प्रार्थना

(लय—उच्च हिमालय की चोटी से)

बड़े भाग्य हे ! भगिनी बन्धुओं, जीवन सफल बनाएं हम ।
आत्म-साधना के सत्पथ में, अणुव्रती बन पाएं हम ॥
॥ ध्रुव पद ॥

अपरिग्रह, अस्तेय, अहिंसा, सच्चे सुख के साधन हैं ।
सुखी देख लो ! सन्त अकिंचन, संयम ही जिनका धन है ।
उसी दिशामें, दृढ़-निष्ठा में, क्यों नहीं कदम बढ़ाएं हम ।
आत्म-साधन के सत्पथ में, अणुव्रती बन पाएं हम ॥ १ ॥

रहें यदि व्यापारी तो, प्रामाणिकता रख पाएंगे ।
राज्य-कर्मचारी जो होंगे, रिश्वत कभी न खाएंगे ।
दृढ़ आस्था, आदर्श नागरिकता के नियम निभाएं हम ।
आत्म-साधना के सत्पथ में अणुव्रती बन पाएं हम ॥ २ ॥

गृहिणी हो, गृहपति हो चाहे, विद्यार्थी अध्यापक हो ।
वैद्य, वकील शील हो सब में, नैतिक-निष्ठा व्यापक हो ।
धर्म शास्त्र के धार्मिकपन को, आचरणों में लाएं हम ।
आत्म-साधनाके सत्पथमें अणुव्रती बन पाएं हम ॥ ३ ॥

अच्छा हो अपने नियमों से, हम अपना संकोच करें ।
नहीं दूसरे वध, बन्धन से, मानवता की शान हरें ।
यह विवेक मानव का निज गुण, इसका गौरव गाएं हम ।
आत्म-साधना के सत्पथ में, अणुव्रती बन पाएं हम ॥ ४ ॥

आत्म शुद्धि के आन्दोलन मे, तन-मन अर्पण कर देंगे ।
कड़ी जांच हो लिये व्रतों में, आंच नहीं आने देंगे ।
भौतिकवादी प्रलोभनों में, कभी न हृदय लुभाएं हम ।
आत्म-साधना के सत्पथ में अणुव्रती बन पाएं हम ॥ ५ ॥

सुधरे व्यक्ति, समाज व्यक्ति से, उसका असर राष्ट्र पर हो ।
जाग उठे जन-जन का मानस, ऐसी जागृति घर-घर हो ॥
'तुलसी' सत्य अहिंसा की, जय-विजय-ध्वजा फहराएं हम ।
आत्म-साधना के सत्पथ में, अणुव्रती बन पाएं हम ॥ ६ ॥

शान्तिनाथ जिन स्तवन

(लय—सांप ने मुझे डस लिया)

शान्तिनाथ! शान्ति करो, शान्ति तेरो नाम है ।
शान्ति तेरो नाम है प्रभु, शान्ति तेरो नाम है ॥
(ध्रुव पद)

विश्वनन्द कर आनन्द, काट फन्द कर्म कन्द ।
तिमिर नाश कर उजास, जय जिनन्द स्वाम है ॥ १ ॥
करन सुख हरन दुःख, धर्म मुख जननी कुख ।
आय राय चक्री पाय, शरण तरन ठाम है ॥ २ ॥

जपत जाप कटत पाप, हो मिलाप सजन आप ।
ऐसे नाथ साथ आथ, पाय मुक्ति धाम है ॥ ३ ॥

जनवंद्य आचार्य श्री तुलसी द्वारा प्रवर्तित

अणुव्रत अन्दोलन का प्रवेश द्वार

(प्रवेशक-अणुव्रती के व्रत)

१—चलने फिरने वाले निरपराध प्राणी की संकल्प पूर्वक घात नहीं करूँगा।

२—सौंपी या धरी (बंधक) वस्तु के लिये इन्कार नहीं करूँगा।

३—दूसरों की वस्तु को चोर वृत्ति से नहीं लूँगा।

४—किसी चीज में मिलावट या नकली को असली बताकर नहीं बेचूँगा।

५—तोल नाप में कमी बेसी नहीं करूँगा।

६—वेश्या व परस्त्री गमन नहीं करूँगा।

७—जुआ नहीं खेलूँगा।

८—सगाई व विवाह के प्रसंग में किसी प्रकार के लेने का ठहराव नहीं करूँगा।

९—मत (वोट) के लिये रुपया न लूँगा और न दूंगा।

१०—मद्य पान नहीं करूँगा।

११—भांग, गांजा, तम्बाखू आदि का खाने पीने व सूँघने में व्यवहार नहीं करूँगा।

शिक्षा-शतक

रचयिता—श्री महालचंदजी सेठिया

शरणो है गुरुदेव को, तारण तरण जहाज।
उज्ज्वल नीति आपकी, च्यार तीर्थ शिरताज ॥ १ ॥

ज्ञान रु ध्यान सहीत, सेवा कीज्यो गण तणी।
शंका कंखा रहीत, नन्दन वन सम जाणज्यो ॥ २ ॥

दान शील तप भाव, रूड़ी रीत आराधज्यो।
सांसारिक वर्ताव, नैतिकता नूं राखज्यो ॥ ३ ॥

शासन री दृढ़ आस्था, राखो हिया मझार।
देव गुरू प्रताप से, वर्ते मंगलाचार ॥ ४ ॥

चारित्रात्मा जिण गांव में, करणा दर्श जरूर।
सेवा करणी शुभ मने, भावन भाणी सनूर ॥ ५ ॥

नाम गोत्र साधु तणो, सुणियाँ महाफल होय।
दर्शण रो कहिवो किसो, पाठ सूत्र में जोय ॥ ६ ॥

सेवा करताँ साधुनी, ज्ञान धारणो ताय।
विन मतलव वार्ताँ करी, समय गमाणो नांय ॥ ७ ॥

पड़िलेहण प्रतिक्रमण अरु, पंचमी गोचरी मांय।
खास जरूरी वात विन, मुनि नें वतलाणा नांय ॥ ८ ॥

तथा हाथ पैराँ तणै, चालंता लगावणा नांय।
विन उपयोग हाणी हुवै, दूर से वन्दना कराय ॥ ६ ॥

व्याख्यान थिर चित्त सुणनो सही, मौन सामायक धार ।
महनत थोड़ी लाभ बहु, इण सूं पामै सार ॥ १० ॥

सूजती वस्तु राखो सदा, भावो भावन सार ।
उपयोग राखो निर्मलो, बारम् व्रत दुक्करकार ॥ ११ ॥

साधु ने प्रतिलाभ ने, उणोदरी करणी जरूर ।
गुण अपार है एह में, लाभ कमावै शूर ॥ १२ ॥

सतियाँ की सेवा मभै, सावचेती अधिकाय ।
बोलत अरु बैठत सदा, कल्प नो ध्यान रखाय ॥ १३ ॥

गल्ती आवै जो ध्यान में, अर्ज करणी धर प्यार ।
मन संकोच करणो नहीं, अपनो फर्ज विचार ॥ १४ ॥

परूपणा केवल्याँ तणी, पालक छद्मस्थ जोय ।
स्वामी देख उलझै नहीं, तसु समकित दृढ़ होय ॥ १५ ॥

गुरुवर चित्त सुप्रसन्न लखि, अर्ज करणी बारम्बार ।
बिन अवसर करणी नहीं, मौन राखणी सार ॥ १६ ॥

कदा अर्ज मंजूर नहीं, हुवे अन्तराय प्रयोग ।
खेदखिन्न होणो नहीं, बरताणा शुभ जोग ॥ १७ ॥

सत संगत से गुण बढ़ै, फल देरी से होय ।
बुरी झटपट असर करै, हिये विमासी जोय ॥ १८ ॥

कोई अविनीत जो कदा, करै ललचावणी सार ।
तो मन एम विचारणो, है ए दुःख दातार ॥ १९ ॥

क्रोध मान माया वली, लोभ महा दुःख खाण ।
घटावणा अभ्यास से, होवै लाभ महान ॥ २० ॥

नम्मूकारसी नित्य प्रति, बिन आगार विमास ।
अष्टम चउदश प्रहरसी, शक्ति सारू उपवास ॥ २१ ॥

रात्रि भोजन त्याग में, छव महिना टल जाय ।
स्वास्थ्य पिण आछो रहै, जीव-जन्तु बच जाय ॥ २२ ॥

नवकरवाली वन्दना भोर में, मौन सहित गुणो जरूर ।
संध्या वन्दन प्रार्थना करो, आलस छोड़ो दूर ॥ २३ ॥

कुरलो करताँ नवकार पंच, इमहि जीमताँ ताम ।
रात्रि शयन वेला इमहि, कुछ स्वाध्याय करो आम ॥ २४ ॥

नित्य प्रति एक प्रतिज्ञा, करताँ लाभ अपार ।
अव्रत घटै शुभ जोग वढै, चित्त स्थिरता रहे सार ॥ २५ ॥

सामायक में मुहपती विना, जयणा पूरी न रहाय ।
ए काम जरूरी समझ ने, राखो मुहपती खेलियो ताय ॥ २६ ॥

टावर दर्शण करण ने, नित्य प्रति जावे नांय ।
स्वामी माईताँ तणी, प्रत्यक्ष ही देखाय ॥ २७ ॥

त्याग पच्चखाण वृद्धि करो, आरम्भ टालो सार ।
सचाई राखो सही, कपट प्रपंच निवार ॥ २८ ॥

विनीत भाव बहु राखणो, ज्ञान सीखणो सार ।
अनुभव रुचि वढ़ावणी, आलस दूर निवार ॥ २९ ॥

किताबाँ अच्छी बांचने, ज्ञान कंठस्थ करो सार ।
सत्संगति में चित धरो, नियम शक्ति अनुसार ॥ ३० ॥

अन उत्साह पणो रखो, सावद्य कामाँ मांय ।
स्वारथ में जावो मती, सन्तोष राखो अधिकाय ॥ ३१ ॥

जो कोई निन्दा करै, हिये विचारो सोय ।
ए सज्जन है मांहरा, देवे चेतावणी मोय ॥ ३२ ॥

सारण बारण ना करे, गच्छ अगच्छ ज होय ।
सूत्र व्यवहारे सांभल्यो, पाठ एह अवलोय ॥ ३३ ॥

आगम वचन विचार ने, तत्पर रहै सदीव ।
छोटा बड़ा सर्व काम में, व्यवस्था स्यूं लाभ अतीव ॥ ३४ ॥

बचाव राखे उपयोग से, कर्म खर्च घट जाय ।
खरच कम होवे जसू, बचत जमा थाय ॥ ३५ ॥

धर्म करत आलस करै, पाप में चित अहलाद ।
आशा बंछा लुबध्यो थको, न लहै चित्त समाध ॥ ३६ ॥

महिना भर तो काम फिर, करस्यूं धर्म विमास ।
तेह न कर सके तसु, आगुंच काम रहै तास ॥ ३७ ॥

कहै नियम लेणा नहीं, कदा भंज ज्यावे जोय ।
तसु लेखे भोजन करणो नहीं, कदा अपथ्य पिण होय ॥ ३८ ॥

मिष्ट वचन सद्व्यवहार स्यूं, कठिन सरल हो जाय ।
कसूर ऊपर क्षमा कियाँ, शोभा बढ़ै सवाय ॥ ३९ ॥

पूछ्याँ थकाँ झूठ बोलसी, इसी आशंका होय ।
तो तिण ने नहीं पूछणो, मोन राखणी सोय ॥ ४० ॥

गाला गोलो राखने, अथवा जाणता ताम ।
पर ऊपर दोष मंढणो नहीं, साफ बात राखो अभिराम ॥ ४१ ॥

साची बात मीठास से, कहताँ नाराज जो होय ।
तो परवाह करणी नहीं, हिम्मत राखणी सोय ॥ ४२ ॥

लम्बी लम्बी बातों करे, निजमें पाले नांय ।
पोथी बैंगण नी परे, कोई माने नांय ॥ ४३ ॥

जाणकारी जिण विषय की, नहीं हुवे आपके ताम ।
सभा में तर्क करणी नहीं, उपयोग राखो अभिराम ॥ ४४ ॥

आवश्यकता कम कियाँ, चावनाँ पिण घट जाय ।
धर्म वृद्धि होवे सही, चित्त समाधि रहै ताय ॥ ४५ ॥

झूठ कपट व्यवहार, आलस और अमित्रता ।
गाफिलता अविचार, थे सारा ही छोड़ज्यो ॥ ४६ ॥

कहणी करणी एकसी, राखो चतुर सुजान ।
परिणाम राखो उज्जला, मत करो आर्तध्यान ॥ ४७ ॥

आगम में जिनवर कह्यो, झूठा बोला ने जोय ।
पदवी देनी कल्पे नहीं, इसो सुण्यो मैं सोय ॥ ४८ ॥

इम ही गृहस्थावास में, झूठ बोला रो ताय ।
कोई विश्वास करे नहीं, उल्टो फल तसु थाय ॥ ४९ ॥

जो निन्दा करणी हुवे, निज आत्म की कराय ।
दूजॉ री करता थकॉ, पाप कर्म बंधाय ॥ ५० ॥

आलस भूट प्रमाद तज, संभाले निज कार ।
साथ भावना धर्म की, अहनिशि राखे सार ॥ ५१ ॥

वियोग मांही दुःख घणो, इमहिज घाटे मांय ।
वेदै ते ममत्व भाव थी, मोह उदय थी ताय ॥ ५२ ॥

क्षमा दो प्रकार की, एक स्वार्थमय होय ।
दूजी आध्यात्मिक सही, लाभ में अन्तर जोय ॥ ५३ ॥

भोर पैदल फिरी करी, सामायक करणी ताय ।
नित्य नियम कीधॉ बिना, तीनूं आहार पचखाय ॥ ५४ ॥

भोजन करणो युक्ति से, उंतावल न करणी सोय ।
जूंठन नाहीं छोड़णी, क्रोध न करणो जोय ॥ ५५ ॥

भोजन बाद तुरन्त नहीं बैठणो, लिखण पढ़ण ने धार ।
विश्राम करणो आवश्यक, अपवाद अलग है सार ॥ ५६ ॥

चाले मध्यस्थ भाव से, ताकीदो करे नांय ।
तसु शोभा संसार में, जोखिम पिण वंचाय ॥ ५७ ॥

नीन्द लेवे निःशंक से, एकन्त स्थाने जाय ।
सोवे जागे क्षिण क्षिणे, इण में फायदो नांय ॥ ५८ ॥

दवाई तो लेवे बहु, परहेज न राखे जोय ।
लाभ. बदले नुकसान है, नहीं लेणे में गुण होय ॥ ५९ ॥

टाले दवाई विशेष कर, साधन राखे सार ।
युक्ति से रहता थकाँ, आनन्द रहे अपार ॥ ६० ॥

मानसीक खुशी नाखुशी, शरीर पर असर होय ।
है ए अनुभव मांहरो, शान्ति में गुण जोय ॥ ६१ ॥

कर पिछतायाँ शूं हुवै, पहली करो विचार ।
अपने हृदय जचाय ने, आगे वढ़णो सार ॥ ६२ ॥

शक्ति निज देखे नहीं, धर्म रुची पिण नांय ।
नैतिकता अलगी रखे, तसु साता किम थाय ॥ ६३ ॥

अल्प समय में काम वहु, हुवे सफलता सहीत ।
चित्त आनन्द उत्साह रहे, राख्याँ अन्तर प्रीत ॥ ६४ ॥

प्रकृति तणे प्रताप, वार्‍याँ जे माने नहीं ।
हार्‍याँ आपो आप, विना कह्याँ ही मान ले ॥ ६५ ॥

कुरीतियाँ छोड़ द्यो, मत करो देखा देख ।
दूजे को भय राखो मती, सादगी में गुण विशेख ॥ ६६ ॥

विवाह साहवा में सादगी, जितनी उचित होय ।
करताँ संकोच करणो नहीं, वर्तमान प्रथा जोय ॥ ६७ ॥

इमहिज नित्य के काम में, झंझट घटाणो जरूर ।
द्रव्ये भावे फायदो, अशुभ योग हुवे दूर ॥ ६८ ॥

वाजै लारे पग उठै, ए जग वायक साच ।
आमदनी पर खर्च वढ़ै, दृष्टान्त वरावर जाच ॥ ६९ ॥

पिण खर्चो आमदानी बिन, आशा पर करतो जाय ।
दोय मूर्ख की ओपमा, अशुभ योग वृद्धि थाय ॥ ७० ॥

मेरा सो सच्चा सही, इम दृढ़ ताणो नांय ।
सच्चा सो मेरा अछै, इम चिंत्यॉं सुख थाय ॥ ७१ ॥

चालंता बात करे नहीं, तीन फायदा थाय ।
दया पलै कंटक टलै, प्रच्छन्न बात रहाय ॥ ७२ ॥

रस्सी ताणे दोय जणॉं, ताण्यॉं टूटे तेह ।
छोड़े ते सुखी हुवे, बरना कष्ट लेह ॥ ७३ ॥

पब्लिक संस्था आदि में, रिजर्व फंड हुवै नांय ।
तेह चाल सके किण विधे, न्याय विचारो ताय ॥ ७४ ॥

राज्य कर्मचारी आदि से, ज्यादा भेलप अच्छी नांय ।
इम हि खांच अच्छी नहीं, शिष्टाचार गुणदाय ॥ ७५ ॥

शरीर जतन अधिका रखो, अपथ्य टालो देख देख ॥ ७६ ॥
लालच मत द्यो जीभ ने, स्वास्थ्य ध्यान विशेष ॥ ७७ ॥

लापरवाही करणी नहीं, ध्यान राखणो ताय ।
आसंगो करणो नहीं, आश राखो मन मांय ॥ ७८ ॥

लेई कर्ज दूजा तणो, देवे ब्याजू सोय ।
ते पछतावे जरूर ही, नीति वाक्य अवलोय ॥ ७९ ॥

रूपैया माथे बहु करी, रहे निश्चिन्त अविचार ।
व्याधी वैर कर्ज त्रिहुं, जल्दी घट्यॉं गुणकार ॥ ८० ॥

काम आपरो पर भणी, देवे सूप अयाण ।
ते पछतावे जरूर ही, नीति वाक्य ए मान ॥ ८१ ॥

शक्ति ऊपर ध्यान नित, देता रहे सयाण ।
देखा देखी ना करे, ते सुख पावे जाण ॥ ८२ ॥

जिम इच्छा वृद्धि, तिम वस्तु दूरी थाय ।
मध्यस्थ भावे वर्तियाँ, स्वतः जोग मिल जाय ॥ ८३ ॥

बात पल्ले बांधो मती, बांध्याँ भारी थाय ।
सहयोगी वणता रहो, अच्छे काम के मांय ॥ ८४ ॥

वचन स्वाभाविक निकले, सज्जन तणाँ पिछाण ।
सहजे ही आवी मिले, राखो ध्यान सयाण ॥ ८५ ॥

चाकर चकवो चतुर नर, रहै विचाराँ माय ।
निश्चय पर पहुंच्या थकाँ, मन सन्तोपज थाय ॥ ८६ ॥

अण छाण्यो पाणी तणो, वचाव राखणो ताय ।
रात्रि हाथ गलनाँ विना, विल्कुल पीणो नांय ॥ ८७ ॥

समय जेह जावे तिको, फिर पाछो नहीं आय ।
उपयोग से कारज कियाँ, समय सार्थक थाय ॥ ८८ ॥

कहणो कम करणो अधिक, वड़ापणाँ री राह ।
धारीज्यो उज्ज्वल मने, म्हारी एह सलाह ॥ ८९ ॥

दूजाँ का छिद्र जोणा नहीं, जो गल्ती नजराँ आय ।
तुरन्त वताई तेह ने, आप निःशंक हो जाय ॥ ९० ॥

मर्याद पालो चित निर्मले, इम ही पलावो सार ।
कठिनाई पिण जो पड़े, तद्पि न लंघो कार ॥ ९१ ॥

कारज जे निश्चित करी, बदले चित्त अधीर ।
तेह सफल किण बिध हुवे, न्याय विचारो धीर ॥ ९२ ॥

कभी पूर्व पश्चिम कभी, जावे बिना विचार ।
तेह रास्तो नहीं कर सके, महनत जाय बेकार ॥ ९३ ॥

चिट्ठी साधरम्यॉं तणी, आवती रहे सयाण ।
जवाब देवणो युक्ति से, संख्या न बढ़ावणी जाण ॥ ९४ ॥

जो लिखवावो और से, बिन बांच्या न दिवाय ।
थाप रूप समाचार से, महनत सफली थाय ॥ ९५ ॥

जिहॉं मन मिलाव नॉं हुवै, तिहॉं राखणो उपयोग सवाय ।
सावचेती शब्दॉं तणी, अधिक राखणी ताय ॥ ९६ ॥

मान मनुहार युक्ति सहित, राखो शिष्टाचार ।
ज्यादा ताण करणी नहीं, तिम ही न करावणी सार ॥ ९७ ।

सज्जन काम पड्यॉं थकॉं, मदद करै भली भान्त ।
प्रेम बधायॉं फायदो, तोड्यॉं अवगुण बात ॥ ९८ ॥

बुहारी बांधी थकी, कचरो साफ कराय ।
बिखर जाय तिम तिणखलो, कचरे मांहि गिणाय ॥ ९९ ॥

कैंची काटे छिणक में, सूई सांधे सार ।
ए दृष्टान्त विचार ने, रहे सान्धतो धार ॥ १०० ॥

शरणं चत्तारि

(लय—तोता उड़ जाना)

शरणं चत्तारि, शरणं चत्तारि ।
पग पग मंगलकारी, शरणं चत्तारि ॥
सकल विघ्नभयहारी, शरणं चत्तारि ॥ ध्रुव पद ॥

देव देव अर्हन् तीर्थङ्कर, सिद्ध आत्म-सुख लीन निरन्तर ।
साधु साधना में है तत्पर, धर्म सदा सुखकारी ॥ १ ॥

अर्हन् धर्म सृष्टि अधिनायक, सकल संघ के भाग्य विधायक ।
विघ्न विनायक मंगल दायक, अनन्त चतुष्टय धारी ॥ २ ॥

सिद्ध स्वरूप अरूपी अक्षय, अज अजरामय अविचल अव्यय ।
केवल युगल शान्तिमय चिन्मय, अननुमेय अविकारी ॥ ३ ॥

साधु सहज समता में रहते, निरभय संयम पथ पर बहते ।
अनु-प्रतिकूल परिषह सहते, अप्रतिबद्ध विहारी ॥ ४ ॥

धर्म आत्म-उन्नति का साधन, संयम तप से शिव आराधन ।
बनता जिससे जीवन पावन, सुख दुःख में सहचारी ॥ ५ ॥

लोकोत्तम ये चारों मंगल, इनसे दब जाते सब दंगल ।
मिलता अतुल आत्म बल संबल, "तुलसी" जयजय कारी ॥ ६ ॥

मैत्री भावना

(लय—कोटि कोटि कंठों से गाए)

वड़े प्रेम से मिलजुल सीखें, मैत्री मंत्र महान रे।
औरों से ले क्षमा स्वंयम्, औरों को करें प्रदान रे॥
(ध्रुव पद)

व्यक्ति व्यक्ति और जाति जाति में, वैमनस्य जो वढ़ता।
प्रांत प्रांत और राष्ट्र राष्ट्र में, अंतर जाता पड़ता॥
यह भारी विश्वशाति को खतरा, हो इसका अवसान रे॥ १॥

औरों की भूलों को भूले, अपनी भूल सुधारें।
कभी न करता मैं गलती, इस अहं वृत्ति को मारें॥
खुद झुकें झुकाए दुनिया को, यह सरल मनोविज्ञान रे॥ २॥

अपनी भूल जान लेने पर भी जो अकड़े रहते।
लातें खाने पर भी पूंछ गधे की पकड़े रहते॥
इस अकड़ पकड़ को छोड़ वधायें मानवता का मान रे॥ ३॥

छोटी सी भी भूल डाल देती है वड़ी दरारें!
गलतफहमियों से खिंचजाती आंगन में दीवारें॥
इसका हो समुचित समाधान ज्यो मिट जाए व्यवधान रे॥ ४॥

कटुता मिटै परस्पर वैसा वातावरण वनाएं।
वढ़े सुजनता 'तुलसी' ऐसे मैत्री दिवस मनाएं॥
हो निश्छल निरभिमान मानव दिल यह अनुव्रत अभियान रे॥५॥

सं० २०१५

पावस–विवरण

(लय—प्रभुवर आवी वेला क्यांरे आवसे)

विक्रम संवत पंद्रह रो चौमास जो,
नगर कानपुर मध्य विराहना रोड़ में ।
सोलह सतियाँ छाइस संत सुवास जो,
सुख स्यूं सोवै सद्गुरु आणा सोड़ में ॥ १ ॥

आ उत्तर-प्रदेश री यात्रा आज जो,
अणुव्रत आन्दोलन री व्यापकता वढ़ी ।
सहज्याँ चमक्यो तेरापंथ समाज जो,
शासण सुषमा लाखाँ नर निजराँ चढ़ी ॥ २ ॥

इण यात्रा रो रह्यो सफल उद्योग जो,
प्रेरक श्रावक महालचंद सुत सेठिया ।
कमला मेमोरियल हास्पिटल सुयोग जो,
वड़ी इमारत संता रा पद भेटिया ॥ ३ ॥

ऊपर चाल्यो आगम रो आलोक जो,
मध्य हाल में म्हांरी साहित्य साधना ।
नीचे प्रवचन, फरश्या तीनूं लोक जो,
लोक हजाराँ सुगुरु-चरण आराधना ॥ ४ ॥

'भरत-मुक्ति' 'आषाढ़भूति' आख्यान जो,
अभिनव रचना हिन्दी भाषा में हुई ।
पूर्व रचित ढालाँ रो अनुसंधान जो,
साठ आसरे और बणी ढालाँ नई ॥ ५ ॥

साधू सतियाँ सरज्यो नव साहित्य जो,
पच्चीसौ पृष्ठाँ री गणना सांतरी ।
अविरल गति आ चलै साधना नित्य जो,
हिन्दी, संस्कृत, गद्य पद्य सहु भांतरी ॥ ६ ॥

ग्यारह प्रान्ताँ में सिंघाड़ा सर्व जो,
एक सौ चौवीस संत सत्याँ रा सांतरा ।
धर्म प्रभावक, विनयी, निर्मल निगर्व जो,
निश्छल, निरतिचार, निरुपम निर्लोभता ॥ ७ ॥

नव पाटाँ में प्रथम अभियान जो,
यू० पी०, बंग, विहार प्रांत री फर्शणा ।
शासन-सेवा जनता रो उत्थान जो,
आत्म शुद्धि पथ अभिनव हृदयोत्कर्षणा ॥ ८ ॥

कलकत्ते इण वर्षे प्रथम प्रवास जो,
राजमति आदि छव सतियाँ रो हुयो ।
अनुपम अभिनव जनता रो उल्लास जो,
पर जाणक ही जाणे पथ-श्रम जो सह्यो ॥ ९ ॥

श्रावक संघ सेंथिया साम्ही सेव जो,
सुगन भ्रात आँचलिया रामकुमार जी ।
अनुकरणीय सदा रहसी स्वयमेव जो,
अवसर पर यूं खपणो दुक्कर कार जी ॥ १० ॥

अवके प्राप्त आँकड़ाँ रै अनुसार जो,
चार लाख अड़सठ हजार दिन री खरी ।
करी तपस्या समुदित तीर्थ चार जो,
चौमासी चवदस स्यूं लग संवत्सरी ॥ ११ ॥

मास खमण अट्ठारह चढ़ता भाव जो,
हुया थोकड़ा चौरासी सौ आसरै ।
स्वामीजी रो शासण तरणी नाव जो,
इण रे साहरै भवदधि लाखाँ जन तरै ॥ १२ ॥

भूरांजी, पन्नांजी देश मेवाड़ जो,
महासती दोनूं छःम्मासी तप वहे ।
महामहिम श्री कालूगणी वरतार जो,
पाछै श्रमणी युगल सलूणों जश लहे ॥ १३ ॥

दोन्यूं ही तपसण सतियाँ ने धन्य जो,
परखी म्हांरे मन री अंतर भावना ।
शासन में ज्यूं हुवै प्रगतियाँ अन्य जो,
त्यूं ही तीव्र तपोवल री है चावना ॥ १४ ॥

मंत्री मुनि सरदारशहर सुल्लास जो,
सलिल त्याग सुख मुनिवर रो अद्भुत चलै ।
बीदासर में वदानांजी रो वास जो,
पल-पल सफल साधना संजम री फलै ॥ १५ ॥

बगतावर कुनणॉजी आगीवाण जो,
गण गणपति स्यूं अंतरंग अनुरागणी ।
इण चौमासे सुरपुर कियो प्रयाण जो,
दोनूं सतियॉ री गण में शोभा घणी ॥ १६ ॥

मद्य मिलावट रिश्वत रो प्रतिकार जो,
व्यापक रूप चली त्रिसूत्री योजना ।
शरद पूर्णिमॉ दीक्षा छव सुखकार जो,
उभय परीक्षा री समुचित संयोजना ॥ १७ ॥

आगामी मर्यादा महोत्सव बंगाल जो,
भावी यात्रा प्रति सब की सद्कामना ।
भैक्षव गण में प्रतिपल मंगल माल जो,
पावस विवरण विरच्यो 'तुलसी' शुभमना ॥ १८ ॥
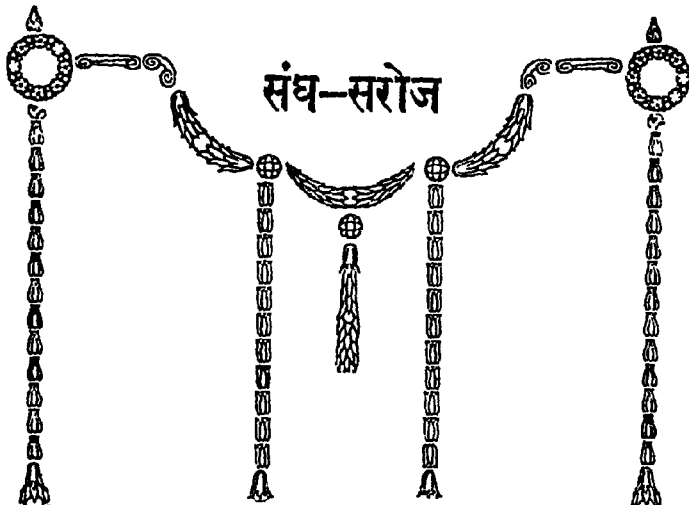
संघ-सरोज

विश्व विकाशन शासन है तम-
नाशन को दिन नायक सो यह ।
शुभ्र मति सहु साधु सती विसु,
वीर के पंथ अति मुद सूं वह ॥
सींचत है मुख स्रोत सदा वर,
आगम नीर भर्‍यो तुलसी द्रह ।
संग लिये महिमा सुषमा नित,
भैक्षव संघ सरोज खिल्यो रह ॥

समर्पण

पूज्य पितामह मुदित मन, ज्ञान सुगुण भण्डार।
दृढ़ धर्मी नीति निपुण, सखर सुयश संसार॥

मिनख बणायो वां मनें, वर शिक्षा संचार।
एक जीभ किम वरणवूं, मुझ पर जे उपकार॥

वांरै पुन्य प्रसाद स्यूं, ग्रंथ हुयो तैयार।
वांरै कर कमलाँ करूं, सविनय ए उपहार॥

—सोहन

शासन-सुषमा

आचार्य प्रकरण

दोहा

सविधि प्रणति आराध्य पद , तज मद करूं उदार ।
श्री शासन सुषमा सखर , सरसाऊँ सुखकार ॥ १ ॥

नीति निपुण आचार्य नव , भिक्षू भारीमाल ।
राय जीत मघवा मुनिप , माणक पट धर डाल ॥ २ ॥

कालू गण पालू प्रभु , झालू शासण भार ।
वर्तमान तुलसी लहै , पग-पग जय जयकार ॥ ३ ॥

त्रय मरुधर मेवाड़ युग , थली देश द्वय ईश ।
इक जयपुर इक मालवे , जन्म भूमि सुजगीश ॥ ४ ॥

सतरह सौ तैंयासिये , अष्टा दश त्रिण साल ।
संचासै साठे अरू , सताणव सुविशाल ॥ ५ ॥

उगणीसौ बारह रु नव , तेतीसै अवधार ।
इकोतरै क्रमशः सुखद , जन्म साल सुविचार ॥ ६ ॥

अष्टा दश सतरह उभय , सतावन सुविमास ।
गुणन्तरे आठे वली , अट्ठावीसे खास ॥ ७ ॥

उगणीसौ तेवीस अरु, चमालीसै वर्ष ।
बैंयासिये क्रमशः नवूं, दीक्षा ग्रही सहर्ष ॥ ८ ॥

बतीसै रु सतन्तरै, त्राणू बीसै साज ।
उणपचासै छासठै, त्राणू पद युवराज ॥ ६ ॥

अकस्मात माणक गणी, कियो स्वर्ग प्रस्थान ।
तिण स्यूं युवपद डाल नहिं, मुनि निर्वाचित मान ॥ १० ॥

सतरह साठ अठन्तरै, आठे अरु अड़तीस ।
उणपचासै चोपनै, छासठ त्राणू ईश ॥ ११ ॥

साठ अठन्तर आठ अरु, अड़तीसै उणचास ।
चोपन छासठ त्राणवै, स्वर्गवास सुविमास ॥ १२ ॥

चमाली 'अठ-दश' वरष, तीस तीस सुविशाल ।
बारह पांच रु बारह, सप्तवीस संभाल ॥ १३ ॥

वर्तमान तुलसी प्रभु, तेरापथ सरताज ।
रहो अखी अखिलेश को, कोड़ दीवाली राज ॥ १४ ॥

राधेश्याम

अटल मनोवल प्रवल प्रतापी,
धार्मिक युग स्रष्टा गुण धाम ।
प्रखर बुद्धि धर आत्म विजेता,
संघ व्यवस्थापक अभिराम ॥

शिथिलाचार समूल उखेड़्यो,
तेड़्यो प्रभुवर तेरापन्थ ।
सत्याग्रह छेड़्यो निर्भय वण,
जयो वीर भिक्षू भगवन्त ॥ १५ ॥

दोहा

परम भक्त भिक्षू तणा, निर्भय दिल सुविशाल ।
वक्ता लेखन में निपुण, गणपति भारीमाल ॥ १६ ॥

पुन्यवान नीति निपुण, सरल हृदय सुखकंद ।
गण में बहु वृद्धि करी, रायचन्द गण इन्द ॥ १७ ॥

शासक कवि वक्ता सहज, वर मर्यादा कार ।
विविध ज्ञान रत्नाँ भर्‌यो, जय शासन-भंडार ॥ १८ ॥

सोरठा

स्मर सो सुन्दर रूप, क्षमाशील कोमल हृदय ।
न्याय निष्ठ गण भूप, मघव तुल्य मघवा गणी ॥ १९ ॥

दोहा

मधुर कंठ आदेय वच, तनु कोमल नवनीत ।
माणक सम माणक गणी, पग-पग पाई जीत ॥ २० ॥

तप्यो तेज तरणी जिसो, वर व्याख्यान सजोर ।
कुण भूले देख्यो जको, डाल गणी को तोर ॥ २१ ॥

धीर वीर विद्वद् मुकुट, जग वत्सल जयकार।
शासन शिखर चढ़ावियो, श्री कालू गणधार॥ २२॥

प्रतिभा पुंज अगंज दिल, गुण निकुंज गण इन्द।
जन जीवन जागृति करे, तुलसी वदना नन्द॥ २३॥

दीक्षा प्रकरण

राधेश्याम

इकशत पंच बैंयासी द्वयशत-
पैंताली त्रिणसौ उणतीस।
शत उगणी चालीस एकसौ-
इकसठ चउशत दश सुजगीस॥
आणू स्यूं अधावधि चउशत-
तेरह श्री तुलसी बरतार।
श्री भिक्षू शासन में दीक्षा,
सर्व हुई उगणीसौ चार॥ २४॥

दोहा

छव शत उणपचास मुनि, श्रमण्यॉ विमल विचार।
बारह सौ पचपन भली, सहु उगणीसौ चार॥ २५॥

सत शत पेंती साहुण्यॉं, दो सौ छिणवै संत।
पद आराधक पावियो, जग जय तेरापंथ॥ २६॥

शत ऊपर सतर मुनि, छँयाली सति जाण।
मोह कर्म वश निकल्या, तज गण महा सुख खाण॥ २७॥

इकशत तैंयासी सुखद, शासन में मुनिराज।
सतियाँ चोतर चारसौ, वर्तमान है आज॥ २८॥

चोरासी वरसाँ मझे, त्रिणसौ बैंयालीस।
सौ वरसाँ में शोभती, चवदह सौ सुजगीस॥ २६॥

नव वर्षां में निरमली, शत बासठ सुखकार।
दीक्षा तेरापंथ में, सहु उगणीसौ चार॥ ३०॥

व्याख्या

सं० १८१७ से—सं० १६००, ८४ वर्षों में दीक्षा ३४२
सं० १६०१ से—सं० २०००, १०० वर्षों में " १४००
सं० २००१ से—सं० २००६, ६ वर्षों में " १६२
सर्व दीक्षा—१६०४

कतिपय मुनि प्रकरण

सोरठा

सुविनीतॉ सरदार, श्रीमुख स्वाम सराहिया।
सकल संघ सुखकार, संत खेतसी सतयुगी॥ ३१॥

स्वाम शिष्य गुण धाम, धर्म प्रचार कियो घणूं।
मुनिवर वेणीराम, शासण में शोभा लही॥ ३२॥

दोहा

अथग ज्ञान सिन्धु अमित , गण में सुयश महान ।
महामति महिमा निला , हेम गुणा री खान ॥ ३३ ॥

सोरठा

शान्त स्वभावी सार , त्रयत्रिंशक री ओपमा ।
गण वत्सल गुणकार , सतीदास शान्ति मुनि ॥ ३४ ॥

बहुश्रती सुविनीत , पंचम पूज्य प्रशंसिया ।
अन्तर हृदय पुनीत , तेजपाल मुनि गुणनिलो ॥ ३५ ॥

दोहा

युवपद योग्य कह्या गणीं , लख सद्गुण उत्कर्ष ।
समय-रहस्य सुजाण वर , विनयवान मुनि हर्ष ॥ ३६ ॥

कालूजी स्वामी बड़ा , गणि गण भक्त महान ।
बण्यो कूर्व गण में अथग , बहुश्रुती गुण खान ॥ ३७ ॥

ज्ञानी ध्यानी अति जबर , मुनिवर पृथ्वीराज ।
दीक्षा गुरु आदेश स्यूं , दी बावीस सुसाज ॥ ३८ ॥

शासन के आया बहु , समय-समय पर काम ।
मग्न मंत्री मति सागरू , परम विज्ञ गुणधाम ॥ ३९ ॥

पंच पूज्य सेवा सभी , लख इंगित आकार ।
अकथ भक्ति गणि गण तणी , साम्भ रह्या इहवार ॥ ४० ॥

आचार्य-भ्राता प्रकरण

उपाध्याय अनुहार, चरचावादी अति जबर।
विविध ज्ञान भंडार, गहन तत्व ज्ञाता परम ॥ ४१ ॥

श्रमण संघ विश्राम, वड़ वंधव जय स्वाम रा।
वध्यो कूर्व अभिराम, शासन मांह स्वरूप रो ॥ ४२ ॥

दोहा

जीत सहोदर दूसरा, भीम महा जशवान।
गणवत्सल मुनि परम पटु, वहुश्रुति गुण खान ॥ ४३ ॥

वड़ वंधव गुरु देवरा, चम्पक चतुर सुजान।
वध्यो गणाधिप महर स्यू, शासन में सन्मान ॥ ४४ ॥

प्राय सेव गुरु-देव री, साझे विमल विचार।
तीन वर्ष श्रृङ्गाटपति, विचर कियो उपकार ॥ ४५ ॥

साध्वी प्रमुख प्रकरण

सोरठा

साध्वी प्रमुख सरदार, श्री गुलाब नवलाँ प्रवर।
जेठाँ कानकुँवार, झमकू लाडाँ महासती ॥ ४६ ॥

चवदह सत्तावीस, बैंयालीस पचावने ।
इक्यासिय सुजगीस, त्राणू तीयै प्रमुख पद ॥ ४७ ॥

तेरह पन्द्रह न्हाल, तेरह षड़विंशति वरस ।
बारह पुनि दस साल, रखवाली सतियाँ तणी ॥ ४८ ॥

दोहा

शासन कार्य किया बहू, सकल संघ सुखकार ।
पायो गण में अति सुयश, महासती सरदार ॥ ४६ ॥

विदुषी वक्ती लेखिका, सुन्दर तन की आब ।
ज्ञान मूर्ति मनु शारदा, मघवा बहन गुलाब ॥ ५० ॥

महासती नवलाँ निपुण, धैर्यवान गुणखान ।
श्रमणी वृन्द शिरोमणी, गणिवर महर महान ॥ ५१ ॥

तप व्यावच गुरु भक्ति रत, जेठाँ जग जय कार ।
पंच पूज्य सेवा सभी, तन मन स्यूं इकसार ॥ ५२ ॥

संचालन शैली सुघड़, ज्ञान ध्यान गलतान ।
कानकँवर गण में लह्यो, गुरु कृपया सन्मान ॥ ५३ ॥

परिमित मृदु आदेय वच, विमल विवेक विचार ।
गण गणिवर भक्ति अथग, झमकू गुण भंडार ॥ ५४ ॥

वर्तमान साध्वी प्रमुख, श्रीलाडाँ सुविशाल ।
गुरु भगिनि समुदित करै, सतियाँ की संभाल ॥ ५५ ॥

कतिपय साध्वी प्रकरण

सोरठा

विनयशील गुण धाम, लख गुरु भक्ति में निपुण ।
गण में भिक्षू स्वाम, वरजू तोल वधावियो ॥ ५६ ॥

हीराँ हीरकणीह, भारीमाल मरजी अतुल ।
गण में कीर्ति घणीह, पाई गुरु इंगित लखी ॥ ५७ ॥

दोहा

दीपाँ गण में दीपती, हिम्मत धर हुंशियार ।
आराधी गुरु शुभ-नजर, प्राप्त कियो सत्कार ॥ ५८ ॥

सोरठा

मेणांजी मतिमान, श्रमणी अजबू शोमती ।
जेताँ महा जशवान, चँदणा गण कीर्ति लही ॥ ५६ ॥

दोहा

मुखाँ मघ माणक तणी, पाई महर अपार ।
जो विनयी गुरु का हुवे, वधै तास सत्कार ॥ ६० ॥

आचार्य-माता प्रकरण

सोरठा

सती कुशलाँ सद्य, माता गणि ऋषिराय नी ।
सरल हृदय अनवद्य, अन्त संथारो सड़सठे ॥ ६१ ॥

जय गणिवर की मात, श्री कल्लू गुण आगली।
बड़ तपसण विख्यात, वर्णन श्री जय सुयश में ॥ ६२ ॥

मघव मात मतिमान, श्रीबन्ना सति शोमती।
कियो आत्म कल्याण, तप जप कर के गुणनिधि ॥ ६३ ॥

जबरी सती जड़ाव, डाल मात अति दीपती।
सरल हृदय सद्भाव, अड़चासे स्वर्गां गई ॥ ६४ ॥

करी तपस्या घोर, देही खंखर भूत कर।
कीधो काम कठोर, धन्य मात छोगाँ सती ॥ ६५ ॥

श्रीकालू गण भान, त्राणू स्वर्ग लह्यो तदा।
कर मन वज्र समान, मजबूती माजी रखी ॥ ६६ ॥

वर्तमान गण धार, माता वदना गुण-सदन।
सरल हृदय सुखकार, चरण वृद्धवय पुत्र कर ॥ ६७ ॥

दोहा

करै तपस्या विविध पर, करण आत्म कल्याण।
वय चोहतर वरसाँ मझे, कीधो अक्षर ज्ञान ॥ ६८ ॥

नव्यारम्भ प्रकरण

सोरठा

उगणीसौ इग्यार, पट्टोत्सव की थापना।
चरमोत्सव सुखकार, चवदह स्यूं अनुमानतः ॥ ६९ ॥

दोहा

माघ शुक्ल सप्तमी दिने, मर्यादोत्सव सार।
उगणीसौ इक्वीस में, स्थापित जय वरतार॥ ७० ॥

श्रमणी श्रमण आहार नीं, पाती दश की साल।
उसी वर्ष में हाजरी, थापी जय गणपाल॥ ७१ ॥

गण में साध्वी प्रमुख पद, स्थापित कियो ललाम।
चवदह संवत् में सुखद, दूरदर्शी जय स्वाम॥ ७२ ॥

पोष कृष्ण पंचमी दिने, दो हजार इक साल।
प्रारंभी प्रभु प्रार्थना, प्रति दिन सायं-काल॥ ७३ ॥

अणुव्रत आन्दोलन कियो, हरण अनीति प्रसार।
स्थापित संवत् पांच में, श्री तुलसी जगतार॥ ७४ ॥

सर्वप्रथम प्रकरण

दोहा

प्रथम साध्वी-दीक्षा हुई, अष्टादश इकवीस।
पहली मर्यादा लिखित, बतीसै सुजगीश॥ ७५ ॥

सोरठा

धर साहस मन धीर, अष्टा-दश इक्यासिये।
छवमासी तप हीर, तप्यो प्रथम संताँ मझे॥ ७६ ॥

दोहा

सतियाँ में छवमासियाँ, हुई पांच इक साथ।
बारह साले जय युगे, सर्व प्रथम विख्यात ॥ ७७ ॥

सोरठा

सूत्र जोड़ अभिराम, पहली पोत अठ्ठन्तरे।
कवि-कुल तिलक ललाम, जय की पन्नवणा तणी ॥ ७८ ॥

इक्यासिय सुखदाय, रोप्यो संस्कृत रूंख जय।
पा अनुकूल सहाय, लड़ालुम्ब लहरा रह्यो ॥ ७६ ॥

दोहा

नव रचना व्याकरण की, संस्कृत असिये न्हाल।
अठ्ठाणव प्राकृत तणी, हिन्दी नीं छव साल ॥ ८० ॥

हरिगीतिका

मेद्पाट रु मरुधरा अठार सतरह रंगरली।
ढूंढाड़ हाड़ोती में इकती साल छत्तीसे थली ॥
मालवे चोरासिये नैयासिये संवत् सही।
कच्छ भुज सौराष्ट्र गुर्जर की हुई पावन मही ॥ ८१ ॥

हरियाणा अरु पंजाब प्रांते साल पचासे पुनि।
उत्तरप्रदेश रु प्रांत दिल्ली साल छव तुलसी गणि ॥
उक्त देशे विमल वेशे प्रथम पूज्य पधारणो।
हुई पूरण भक्त आशा भव्यजन उद्धारणो ॥ ८२ ॥

सर्वाधिक प्रकरण

सोरठा

वय पिच्यासी वर्ष, उदयराम सन्ताँ मझे ।
छिणवे वर्ष सहर्ष, मातु श्री छोगाँ सती ॥ ८३ ॥
चोहतर वर्ष छबील, पाली दीक्षा विमल चित ।
भूल्या संयम झील, वर्ष तिहोतर दो सत्याँ ॥ ८४ ॥

दोहा

चौविहार-तप 'रामसुख, श्रमण किया उगणीस ।
साध्वी प्रमुख जेठाँ सती, दृढ़ मन दिन बावीस ॥ ८५ ॥
दिवस-एकसौ आठ तप, मोती मुनि तिविहार ।
दो महिना केई सत्याँ, किया मनोबल धार ॥ ८६ ॥

सोरठा

दिन दो सौ अठार, आछागार अनूप मुनि ।
नवमासी निरधार, मुखाँ तीव्र तपस्विनी ॥ ८७ ॥

दोहा

कियो निरन्तर दो वरस, पांच पांच तप खास ।
मुनिवर दुलीचन्दजी, कठिन क्रिया स्याबास ॥ ८८ ॥

सोरठा

तेले तेले घोर, चौविहार तेरह वरस ।
कीधो काम कठोर, भीम भीम भव भय हरण ॥ ८९ ॥

दोहा

बेले बेले पारणो, मुनिवर चुन्नीलाल।
सतत वर्ष तेवीस लग, कीधो काम कमाल॥ ९० ॥

सोरठा

किया इकान्तर वीस, वर्ष मात छोगाँ-सती।
वत्सर तैंयालीस, गुलहजारिमुनिगुणनिलो॥ ९१ ॥

आजीवन संथार, साध्यो दिन उणचास नो।
रत्न मुनि गुणधार, सती गुमानाँ साठ दिन॥ ९२ ॥

संलेषण संथार, तेहतर आशाराम मुनि।
दिवस इकोतर धार, सभ्यो जड़ावाँ साहुणी॥ ९३ ॥

साढ़े आठ हजार, तपदिन गुलहजारि मुनि।
पीचहतर सौ सार, वासर छोगाँ मात तप॥ ९४ ॥

दश पोथी अनुमान, लेखन द्वितीयाचार्य वर।
रचना जय सविधान, तीन लाख ऊपर मिलै॥ ९५ ॥

एक वीस चौमास, मर्यादोत्सव वीस वर।
गुरुवाँ का सोल्लास, सर्वाधिक बीदासरे॥ ९६ ॥

दोहा

इक वर्षे गणि विचरणो, माइल एक हजार।
तृतीय नवम आयार्य को, सर्वाधिक सुविचार॥ ९७ ॥

सोरठा

माइल दो हजार, इक वर्षे मुनि जशकरण ।
श्रमण्याँ मांह विहार, पंन्द्रह सो माइल लगे ॥ ९८ ॥

शत इकाणव साध, सतियाँ अड़सठ पांच सौ ।
तरण भवाब्धि अगाध, थलवट ना संयम ग्रह्यो ॥ ९९ ॥

पुर सरदार तणीह, दीक्षा शत चौसठ हुई ।
शत वत्ती श्रमणीह, मुनि संख्या द्वात्रिंशति ॥ १०० ॥

इक वर्षे संपेख, संवत दो हजार में ।
सेंती दीक्षा देख, शासन में सव स्यूं अधिक ॥ १०१ ॥

दोहा

एक दिवस इक साथ में, इकती दीक्षा हेर ।
उगणीसौ चौराणुवे, कार्तिक बीकानेर ॥ १०२ ॥

करी सूत्र सज्झाय जय, आठ वर्ष रे मांह ।
सड़सठ सहस रु चार सौ, लख छैंयासी गाह ॥ १०३ ॥

सोरठा

गाथा साठ हजार, मुनि कपूर कंठाँ किया ।
आगम दश इग्यार, कंठाँ केई मुनि सती ॥ १०४ ॥

साधु सती चौमास, इक वत्सर में ओपता ।
शत बावीस विमास, दशसंवतसवस्यूं अधिक ॥ १०५ ॥

तप अनशन प्रकरण

दोहा

इक नवमासी सार्ध सत, मासी इक सोत्साह ।
एक सवा सत मास तप, अद्यावधि गण मांह ।। १०६ ।।

सोरठा

छवमासी सुविचार, बैंयालीस हुई प्रवर ।
मुनि श्रमण्याँ में सार, सुण्याँ सहू इचरज लहै ।। १०७ ।।

लघुसिंह अट्ठावीस, हुआ सन्त सतियाँ मझै ।
पाटी प्रथम जगीश, वर्तमान मुनि इक सझै ।। १०८ ।।

दोहा

बारह साल छः मासियाँ, लघुसिंह छिणवै वर्ष ।
अरु आठ गण में हुया, वाह वाह तप आदर्श ।। १०९ ।।

सोरठा

आयंबिल वर्द्धमान, उदयराम अरु जीवऋषि ।
वृद्धि शशि सविधान, सझ्यो सुघड़ रत्नावली ।। ११० ।।

मासखमण स्यूं धार, शत सतर लग थोकड़ा ।
लगभग एक हजार, जाणीजे अनुमान स्यूं ।। १११ ।।

भिक्षू शासन ख्यात, में जे मुनि सति सैंकड़ा ।
तसु पूरो अवदात, नहीं मिले तप आदि रो ।। ११२ ।।

साधु सती संथार , चार पांच सौ आसरे ।
कीधो खेवो पार , धन्य धन्य मुनि साहुणी ॥ ११३ ॥

दोहा

उगणीसौ तैंयाल स्यूं , बहु वर्षां लग धार ।
नहीं लिखीज्या ख्यात में , साधु सती संथार ॥ ११४ ॥

स्फुट प्रकरण

सोरठा

रील सामणे जाण , गुरु स्यूं झट आगै हुया ।
गुरुवर भक्ति महान , जय देखाई भावुवे ॥ ११५ ॥

चढ़तां पुल चित्तोड़ , सपदि गह्यो गुरु करकमल ।
गुरु-भक्ता शिर मोड़ , महामना मंत्री मुनि ॥ ११६ ॥

दोहा

वृद्धा व्रत निपजाण नें , भेजा निज युवराज ।
चातुरगढ़ स्यूं लाडनूं , श्री जय गरिब निवाज ॥ ११७॥

सोरठा

श्री छवील मुनिराय , सतियाँ आठ सुहामणी ।
पूरव पुन्य पसाय , सभी सेव छव पाट नी ॥ ११८ ॥

पावस काल मझार, सतियाँ गणिवर सेव में ।
रहती केई वार, श्री भिक्षू वरतार में ।। ११६ ।।

इक परिवार मझार, दीक्षा हुई द्वाविंशति ।
सूरवाल री सार, चैन चिमन मुनि आदि दे ।।१२० ।।

दोहा

सही कष्ट मरणान्त-सो, गणि आदेश प्रमाण ।
वीदासर से जा कियो, पावस जय वीकाण ।। १२१ ।।

तप वेले वेले अरु, वीकाणे चौमास ।
कोद्रव छव संता तणी, भिक्षा ल्याता खास ।। १२२ ।।

जब लग नहिं गुरु दर्श है, त्याग्या तीनूं आहार ।
फल्यो अभिग्रह भोप रो, दिन गुणतीसम सार ।। १२३ ।।

सोरठा

संयम स्वीकृति कार, न्याती पग खोड़े दियो ।
दिन इकवीस मझार, तूट्यो रूपाँ तेज स्यूं ।। १२४ ।।

श्री मघवा वरतार, छगन मुनि आज्ञा ग्रहण ।
दिन पेंताली सार, पग जंजीराँ में रह्यो ।। १२५ ।।

इम बहु मुनि सति पेख, संयम स्वीकृति कारणे ।
झेली कष्ट अनेक, चरण ग्रह्यो उचरंग स्यूं ।। १२६ ।।

दोहा

शिशुवय संयम में अडिग, चल्यो नहिं मन रंच।
फतह करी छव मास में, कनक कनक सौटंच ॥ १२७ ॥
हुयो अपथ्य आहार में, मास खमण मन आश।
पचख्या धन्य अनूप मुनि, एक साथ छव मास ॥ १२८ ॥
चन्देरी स्यूं मालवे, गया तपस्या मांह।
पत्र पांच मौ आसरे, लिख्या धरी उत्साह ॥ १२९ ॥

शासन-महिमा प्रकरण

दोहा

श्री भिक्षू शासन जयो, अखिल विश्व में एक।
चमकै ज्यूं अम्बर मणी, चकित हुवे सहु देख ॥ १३० ॥
निमल नेकता एकता, सुविवेकिता सुहाय।
रहै सुगुरु हग देखता, साधु सती समुदाय ॥ १३१ ॥
सेनानी के शब्द पर, प्राण दान दातार।
श्वेत संघ रा शूरमा, सुभट इसा जूंभार ॥ १३२ ॥
नहीं स्थापना रूप को, दूषण गण में एक।
नीति निपुण साधू सती, गंगा जल जिम देख ॥ १३३ ॥
आगम कविता व्याकरण, काव्य कोष इतिहास।
संस्कृत लेखन आदि को, संघ खजानो खास ॥ १३४ ॥

वृद्ध बाल रोगी तणी, हद परिचर्या धार।
करे सहू अग्लान चित, निज कर्तव्य निहार॥ १३५॥

स्व पर शास्त्र वेत्ता परम, निर्भय हृदय सुजाण।
चरचावादी संघ में, श्रमण सती गुण खाण॥ १३६॥

गण मानस मर्याद तट, मुक्ता सद्गुण रूप।
चुगे चतुर चिहुं तीर्थ बण, हंस धरी चित चूंप॥ १३७॥

सद्गुण सौरभ स्यूं भरया, चार तीर्थ जिम फूल।
भावुक भवि भंवरा सरिख, गण वणिका अनुकूल॥ १३८॥

प्राणाधिक गुरु-आण नें, मानें सारो संघ।
गणिवर भी चिहुं तीर्थ नें, जाणे अपना अंग॥ १३९॥

निज तन मन साधू सती, सद्गुरु चरणे झोक।
संजम पाले सांतरो, चित चंचलता रोक॥ १४०॥

प्रेम परस्पर परम सहु, राखे विमल विचार।
वीर विभु आदिष्ट पथ, सकल बहे इकधार॥ १४१॥

सोरठा

पूरण गणि गण प्रेम, दृढ़ समकित धर दीपता।
निमल निभावण नेम, गणरा श्रावक श्राविका॥ १४२॥

दोहा

नंदन वन सम रम्य गण, वन पालू गुणधार।
श्री कालू पटधर प्रगट, तुलसी गण शृङ्गार॥ १४३॥

अखी रहो शासन सुखद , जब लौं नभ रवि चंद ।
पग पग जय लक्ष्मी वरो , श्री तुलसी गण इन्द ॥ १४४ ॥

शासन री दृढ़ आसथा , गणिवरभक्तिविशाल ।
तसु प्रसाद बरते सदा , सोहन मंगल माल ॥ १४५ ॥

प्रशस्ति

दोहा

गुरुवर की शुभ दृष्टि स्यूं , संग्रह कीधो सार ।
प्राचीना वार्ता विविध , शासन री सुखकार ॥ १४६ ॥

मंत्री मुनि स्यूं धार कर , अरु गण रा व्याख्यान ।
ख्यात आदि अवलोक मन , धर अति हर्ष महान ॥ १४७ ॥

पूज्य पितामह मांहरा , परम विज्ञवर वेश ।
उपकारी शिर सेहरा , मिल्यो तास आदेश ॥ १४८ ॥

प्रायः दोहा सोरठा , प्रकरण तेरह भाल ।
चुन-चुन गण उपवन सुमन , गूंथी मंजुल माल ॥ १४६ ॥

स्वीय बुद्धि अनुसार यो , 'शासन सुषमा' नाम ।
सार्ध शतक विरच्यो जयो , शासण जग विश्वास ॥ १५० ॥

सोरठा

दशायुत दो हजार , एकम कृष्णा श्रावणी ।
मध्याह्ने शशि वार , सफल सकल मन कामना ॥ १५१ ॥

संयमः खलु जीवनम्

(लय—दिल से शासन में रमें)

प्रेम से बोलें कि प्यारे ! संयमः खलु जीवनम् ।
नियम से बोलें कि सारे संयमः खलु जीवनम् ॥
(ध्रुव पद)

जन्म मानव का कहा है श्रेष्ठ इस संसार में ।
मोक्ष की आराधना का द्वार इस अवतार में ।
(पर) साधना के हर किनारे ॥ संयमः ॥ १ ॥

धर्म का आधार ही क्या और संयम के बिना ।
नीतियाँ होंगी निरांकुश क्योंन संयम के बिना ॥
एतदर्थ ही उचारें ॥ संयमः ॥ २ ॥

हाथ-संयम-पांव संयम, खाद्य संयम आद्य हो ।
दृष्टि संयम वचन संयम, आत्म संयम साध्य हो ॥
सब तरह सोचें विचारें ॥ संयमः ॥ ३ ॥

हो भले आध्यात्मवादी भूतवादी क्यों न हो ।
शांति मय जीवन कहाँ अपना नियंत्रण जो न हो ॥
हो अणुव्रत के सहारे ॥ संयमः ॥ ४ ॥

जो अनास्थावाद इस विज्ञान युग की देन है ।
हो रहा नैतिक पतन मानव बड़ा बेचैन है ॥
प्राण पथ "तुलसी" प्रचारें ॥ संयमः ॥ ५ ॥

श्री गजसुकुमाल मुनि की ढाल

(लय—सरवर पाणीड़ा नें जावू)

धन्य गजसुकुमाल, मुनि ध्यान धरे ।
ऊभा अटल श्मशान, गुण ज्ञान भरे ।
ज्ञान भरे, अघ शान हरे ॥ धन्य० ॥ ध्रुव पद ॥

जिन ही दिन दीक्षा लीनी, जिनवर नेमि पास ।
तिण ही दिन कीन्हों भारी, कठिन प्रयास ।
प्रतिमा बारहवीं भिक्षु की, अङ्गीकार करे ॥ ध० ॥१॥

जीवित ही कीन्हों, अपने अंग को उत्सर्ग ।
एक ध्यान दीन्हों, वरवा वारु अपवर्ग ।
इतले आयो सोमिल विप्र पूरव वैर समरे ॥ ध० ॥२॥

वर्ग ज्येष्ठ बात करी, दुष्टता कमाल ।
सन्त शीश खीरा धस्या बांध मिट्टी पाल ।
चटकै करतो त्यों चण्डाल या कसाई भी डरै ॥ ध० ॥३॥

हाहा !! रे पापी ! कैसो साहस कठोर ।
सींग पूंछ स्थान दाढ़ी मूंछ वाला ढोर ।
फिर भी आही है अधिकाई नहीं घास चरे ॥ ध० ॥४॥

रोम रोम दाह लागी सन्त के शरीर ।
तो भी नहीं मुंह से कियो आह वड़वीर ।
जूझ्यो जोधा ज्यूं अडोल मुनि खेत खरे ॥ ध० ॥५॥

खदबद-खदवद सीजे सिर जैसे खीचड़ी ।
तो भी तनु अविचल मानो आई मींटड़ी ।
अहा! कैसी है मजबूती कवि कल्पना परे ॥ ध० ॥६॥

रे रे चेतनियो! मेरे मतना हो अधीर ।
तू भी किण ही के ऐसी कीन्हीं होगी पीर ।
यह सच्ची है कहानी जो करे सो भरे ॥ ध० ॥७॥

ज्यादा ज्यादा वेदना जो नरकों में सही ।
एक ना अनेक ना अनन्त वार ही ।
त्राहि त्रहि की पुकार जीवड़ा! मत विसरे ॥ ध० ॥८॥

तूं है ज्ञानवान ज्ञानशून्य तेरो गात ।
गात के सम्बन्ध ही से होवे तेरी घात ।
अब तू बोलना लिगार देही जरे तो जरे ॥ ध० ॥९॥

अपनी अप्पा कत्ता है विकत्ता है विचार ।
शत्रु वही मित्र वही दुख सुखकार ।
अपनी आतमा सुधरे तो सारो जग सुधरे ॥ ध० ॥१०॥

ओ है उपकारी तेरो बांधी जेण पाल।
कर्म क्रय विक्रयार्थ वण्यो है दलाल॥
मत मन द्वेषभाव धरे उपकारी ऊपरे॥ ध०॥ ११॥

किंचित् ही कम्पन अब होणो न चहे।
अगनी के जीव कहीं पीड़ा न लहे।
देखै पीड़ यों पराई वे स्याबाश वरे॥ ध०॥ १२॥

चींटी को चटको सहणो केतो मुश्किल होय।
ऐसे कष्ट में तो जाणै जीव काया दोय।
तब ही 'तुलसी' विन नाव भव उदधि तरे॥ ध० ॥१३

शासन-मर्यादा

(लय—बधावो०)

भीखणजी स्वामी, भारी मर्यादा बाँधी संघ में।
प्रवल प्रतापी शासन वीर रो।
जिण में जग रही जगमग ज्योत हो॥ भी०॥
(ध्रुव पद)

देखी दशा है दयामणि, आ तो साधु संघ री आप हो। भी०।
कांप्यो कलेजो म्हारै पूजरो, किन्हीं मूल सहित थिर थाप हो॥१॥

सकल साधु अरु साध्वी, वहो एक सुगरु की आण हो।
चेला चेली आप आप रा, कोई मति करो करो पचखाण हो॥२॥

गुरु-भाई चेला भणी, कोई सूंपै गुरु निज भार हो ।
जीवन भर मुनि साहुणी, कोई मत लोपो तसु कार हो ॥३॥

आवै जिण नें मूड़ नें, कोई मति रे बधावो भेख हो ।
पूरी कर-कर पारखा, कोई दीक्षा दीज्यो देख देख हो ॥४॥

बोल श्रद्धा आचार रो, कोई नवो निकलियो जाण हो ।
मत चरचो जिण तिण खने, करो गणपति वचन प्रमाण हो ॥५॥

जो हिरदै बेसै नहीं, तोई मती करो खींचा ताण हो ।
केवलियाँ पर छोड़्यो, आ है अरिहंताँ री आण हो ॥६॥

उत्तरती गणी गण तणी, कोई मति करो मति सुणो सैण हो ।
संजम पालो सांतरो, कोई पल-पल छिन दिन रैण हो ॥७॥

अपछंदा गण सूं टलै, कोई इक दो त्रिण अवनीत हो ।
साधु त्यां नें सरधो मती, कोई मत करो परिचय प्रीत हो ॥८॥

इत्यादिक नियमै भख्यो, कोई लेख लिख्यो गुरुराज हो ।
संवत अठारह गुणसठै, कोई माह सुद सप्तमी साज हो ॥९॥

वार्षिक उत्सव आज रो, कोई होवै तिण उपलक्ष हो ।
दूरदर्शिता एह में, कोई जय गणि की परत्यक्ष हो ॥१०॥

शहर सरदार सुहामणो, जिहाँ च्यार तीर्थ रा झंड हो ।
'तुलसी' तेरापंथ जयो, कोई जुग जुग अटल अखंड हो ॥११

उत्तराध्ययन अध्ययन दशवें की जोड़

श्री मज्जयाचार्य

(लय—पायल वाली पदमणी)

जिम द्रुम पत्रज पांडुरो कांइ, पड़े वृक्ष थी जेह ।
दिवस निशागण अतिक्रमें कांइ, तिम मनु जीवित एह ॥
जिनेश्वर भाखै जी, शिष्य प्रति दाखै जी
होजी तू तो समय मात्र पिण रखे प्रमाद करेहो जी ।
गोयम गुण गेहो जी ॥ १ ॥

जिम कुशाग्र जल विन्दुओ कांइ, अल्प काल अवलोय ।
तिष्टै रहैज लहकतो कांइ, इम मनु जीवित जोय ॥ २ ॥
इम इत्वर ते अल्प ही कांइ, मनुष्य आउपा मक्त ।
विघ्न घणा जीवित विपै कांइ, टाल कर्म रुप रज ॥ ३ ॥
विशेप दुर्लभ मनुष्य भव कांइ, चिरकाले पिण माग ।
वहुलपणै सर्व जीव ने कांइ, गाढ़ा कर्म विवाग ॥ ४ ॥
पृथ्वीकाय मांहें गयो कांइ, उत्कृष्ट जीव वसेह ।
काल असंख्यातुं कह्यु कांइ, असंख काल चक्रेह ॥ ५ ॥
आउ काय मांहें गयुं कांइ, उत्कृष्ट जीव वसेह ।
काल असंख्यातुं कह्यु कांइ, असंख काल चक्रेह ॥ ६ ॥
तेउ काय मांहें गयो कांइ उत्कृष्ट जीव वसेह ।
काल असंख्यातुं कह्यु काइ, असंख काल चक्रेह ॥ ७ ॥

वाउ काय मांहें गयो कांइ, उत्कृष्ट जीव वसेह ।
काल असंख्यातुं कह्युं कांइ, असंख काल चक्रेह ॥ ८ ॥
वणस्सइ काय मांहें गयुं कांइ, उत्कृष्ट जीव वसन्त ।
काल अनन्तुं जाणवू कांइ, दुखे करी तस अन्त ॥ ९ ॥
बेइन्दिय काय मांहें गयुं कांइ, उत्कृष्ट जीव वसेह ।
काल संख्यातो नाम ही कांइ, संख सहस्र वर्षेह ॥ १० ॥
तेइन्दिय काय मांहें गयुं कांइ, उत्कृष्ट जीव वसेह ।
काल संख्यातो नाम ही कांइ, संख सहस्र वर्षेह ॥ ११ ॥
चउरिन्दिय काय मांहें गयुं कांइ, उत्कृष्ट जीव वसेह ।
काल संख्यातो नाम ही कांइ, संख सहस्र वर्षेह ॥ १२ ॥
पंचेन्दिय काय मांहें गयुं कांइ, उत्कृष्ट जीव वसेह ।
सात आठ भव ग्रहण ही कांइ, तिरि पंचेन्द्रिय जेह ॥ १३ ॥
देव नरक मांहें गयुं कांइ, उत्कृष्ट जीव वसेह ।
एक एक भव ग्रहण ही कांइ, पिण बीजुं न करेह ॥ १४ ॥
एवं भव संसार में कांइ, भ्रमै संसारी जीव ।
शुभ अशुभ कर्मे करी कांइ, बहुल प्रमाद अतीव ॥ १५ ॥
पामी नें पिण मनु पणुं फुन, आर्य खेत दुर्लभ ।
बहु दीसै म्लेछ चोरटा, तिण कारण नहीं सुलभ ॥ १६ ॥
आर्य पणुं पिण पाय नें, इन्द्रिय पूर्ण दुर्लभ ।
अंध बहिरादिक दीसै घणा, इण कारण नहीं सुलभ ॥ १७ ॥
इंद्रिय पूरण पिण लही, धर्म सुणवो उत्तम दुर्लभ ।
कुतीर्थिक जन सेवै घणा, इण कारण नहीं सुलभ ॥ १८ ॥

सुणवो उत्तम पाय ने, शुद्ध श्रद्धा परम दुर्लभ ।
मिथ्यात्व जन सेवै घणा, इण कारण नहीं सुलभ ॥ १६ ॥
शुद्ध धर्म पिण श्रद्ध कर, तनु करि फर्शवे दुर्लभ ।
इह काम गुणे मुर्छित घणा, इण कारण नहीं सुलभ ॥ २० ॥
वय तनु जीर्ण हुवै ताहरुं कांइ, श्वेत हुवै तुझ केश ।
श्रोतेन्द्रिय वल समर्थ पणुं कांइ, क्षीण हुवै सुविशेष ॥ २१ ॥
वय तनु जीर्ण हुवै ताहरुं कांइ, श्वेत हुवै तुझ केश ।
चक्षेन्द्रिय वल समर्थ पणुं कांइ, क्षीण हुवै सुविशेष ॥ २२ ॥
वय तनु जीर्ण हुवै ताहरुं कांइ, श्वेत हुवै तुझ केश ।
घ्राणेन्द्रिय वल समर्थ पणुं कांइ, क्षीण हुवै सुविशेप ॥ २३ ॥
वय तनु जीर्ण हुवै ताहरुं कांइ, श्वेत हुवै तुझ केश ।
जिभेन्द्रिय वल समर्थ पणु कांइ, क्षीण हुवै सुविशेप ॥ २४ ॥
वय तनु जीर्ण हुवै ताहरुं कांइ, श्वेत हुवै तुझ केश ।
फासेन्द्रिय वल समर्थ पणुं कांइ, क्षीण हुवै सुविशेष ॥ २५ ॥
वय तनु जीर्ण हुवै ताहरुं कांइ, श्वेत हुवै तुझ केश ।
वल हाथ पगादिक सर्व नुं कांइ, क्षीण हुवै सुविशेष ॥ २६ ॥
अरति गंडमाला विसूचिका, आतंक विविध फर्शेह ।
तुझ क्षीण हुवै वल देह नुं वलि आयु जीवित घटेह ॥ २७ ॥
छेद स्नेह निज आत्म नुं कांइ, मुझ ऊपर छै तेह ।
कुमुद शरद जल ऊपरै कांइ, इम सहु स्नेह तजेह ॥ २८ ॥
छांडी धन वलि भार्या, अणगार पणो प्रति धार ।
तेह वम्या प्रति पुनरपि कांइ, रखे करै अंगीकार ॥ २६ ॥

तजी मित्र नें बन्धवा कांइ, धन ओघ संचय बहु जेह ।
ते मित्रादिक प्रति रखे कांइ, द्वितीय वार वंछेह ॥ ३० ॥
हिवड़ाँ जिन दिसै नहीं बहु मत जिन-दर्शित मग ।
तेह हुस्ये तो साम्प्रत ही कांइ, छै शिव पन्थ उदग ॥ ३१ ॥
कंटक पन्थ दूरो करी तैं पाम्यो छै महा पन्थ ।
विशेप शोधी गोयमा, तूं जाये छै मग तंत ॥ ३२ ॥
भार वाहक वल रहित जे गृही विपम मार्ग धन मूक ।
घर आवी पछतावो करै कांइ, इम तूं पिण मत चूक ॥ ३३ ॥
महा भव उदधिज तैं तिस्यो, श्यूं तिष्टै आवी तीर ।
पार जायवा कारणै कर उद्यम साहस धीर ॥ ३४ ॥
सिद्ध श्रेणि ऊंची करी कांइ, उत्तरोत्तर परिणाम ।
सिद्धलोके गोयम जायस्ये शिव क्षेम अनुत्तर धाम ॥ ३५ ॥
विचरै बुद्ध शीतलीभूत जे, रह्यु ग्राम नगर में सन्त ।
मोक्ष-मार्ग नी वृद्धि करै, उपदेश देई मतिवंत ॥ ३६ ॥
जिन भापित सुकथित सांभली, अर्थ पदोपम शोभित ताम ।
राग द्वेष छेदी करी, लहि सिद्ध गति गोतम स्वाम ॥ ३७ ॥
सुधर्म जम्बू नें कहै कांइ, म्हे सुणियो जिन पाय ।
तिमज कहूं छूं तुझ भणी पिण स्वमति थी कहूं नांय ॥ ३८ ॥
उगणीसै पट वीस में कॉइ, महा विद तेरस ताय ।
जोड़ी दशमाँ झयण नीं कॉइ, जय जश हरष सवाय ॥ ३९ ॥

आराधना

प्रथम द्वारम्

दोहा

महावीर प्रणमी करी , आराधन अधिकार ।
अन्त्य समय में जोग्य ए , आखूँ तसु दश द्वार ॥ १ ॥
प्रथम आलोयण मन शुद्ध , करवी तज कपटाय ।
व्रत अतिचार आलोवियाँ , आतम निरमल थाय ॥ २ ॥
उच्चरवा वलि व्रत शुद्ध , ऊंचै शब्द उचार ।
अन्तकरण हर्ष आण नें , शांतिपणो मन धार ॥ ३ ॥
सगला जीव खमावणा , प्रतिकूल जे नर नार ।
जू जूआ नाम लेई करी , कलुष भाव परिहार ॥ ४ ॥
अष्टादश जे पाप प्रति , वोसिरावै धर प्रीत ।
चौथो द्वार कह्यो इसो , छांड़ै सर्व अनीत ॥ ५ ॥
अरिहंत सिद्ध साधु तणो , केवली भाषित धर्म ।
पड़िवज्जवा ए शरण चिहुं , पञ्चम द्वार सु पर्म ॥ ६ ॥
दुःकृत नी करवी निंदा , छट्ठा द्वार मझार ।
अशुभ कार्य पोतै किया , तसु निंदा दिल धार ॥ ७ ॥
सुकृत नी अनुमोदना , सप्तम द्वार उदार ।
शुभ करणी पोतै करी , तसु अनुमोदन सार ॥ ८ ॥

भावन रूड़ी भावची , धर्म शुक्ल वर ध्यान ।
अष्टम द्वार कह्यो इसो , संवेग रस गलतान ॥ ६ ॥
नवमें अणसण आदरै , करै आहार परिहार ।
अनन्त मेरू सम भोगव्या , पिण तृप्ति न हुवो लिगार ॥१०॥
दशमें श्री नवकार नो , समरण सहाय करंत ।
मन बंछित वस्तु मिलै , सुर शिव फल पावंत ॥११॥
इण विध दश द्वारे करी , तन मन वश कर सोय ।
आराधन पद पामियै , निर्भय चित अवलोय ॥१२॥
हिव विस्तार करी कहूँ , जू जूआ दशूं स्वरूप ।
प्रथम आलोयण विधिप्रवर , सांभलज्यो धर चूंप ॥१३॥

ढाल १ ली

(लय—अनित्य भावना भाई भरतेसर)

ज्ञान दर्शण चारित तप वीर्य, पंच आचार पिछाणी । अतिचार आलोवै उत्तम मुनी, समता रस घट आणीरा ॥ मुनीश्वर आलोयणा इम कीजै । समता रस घट पीजैरा मुनीश्वर, आतम वश कर लीजै ॥ १ ॥ काल विनय आदि आठ प्रकारे, ज्ञान आचार विध कहिजै । ते आठ प्रकार रहित ज्ञान भणियो, तो मिच्छामि दुक्कडं दीजैरा ॥ मु० ॥ २ ॥ आ० ॥ सूत्रपाठ अर्थ विरुद्ध कह्यो हुवै, अक्षर हीणाधिक आख्यो । जोग घोष हीण खोट तणो सहु, मिच्छामि दुक्कडं भाख्योरा ॥ मु० ॥ ३ ॥ आ० ॥ विनय करी ने रहित ज्ञान भणियो, सूत्र

अकाले गुणियो । असज्झाइ में सझाय करी हुवै, तो मिच्छामि दुक्कडं थुणियोरा ॥ मु० ॥ ४ ॥ आ० ॥ ज्ञान तणी तथा ज्ञानवन्त नी, अवज्ञा अशातना कीधी । तेहनो पिण मुझ मिच्छामि दुक्कडं, हिव निन्दा तज दीधीरा ॥ मु० ॥ ५ ॥ आ० ॥ ते ज्ञान तणा पंच भेद कह्या छै, त्यांरी करी निपेधणा जाणी । ज्ञान तणो वलि उपहास्य कीधो तो, मिच्छामि दुक्कडं पिछाणीरा ॥ मु० ॥ ६ आ० ॥ ज्ञान निन्हवियो नें ज्ञान गोपवियो, इम ज्ञानातिचार आलोवै । वले दर्शन ना अतिचार आलोवी, कर्म रूप मल धोवैरा ॥ मु० ॥ ७ ॥ आ० ॥ दर्शन आचार निःशङ्कता प्रमुख, अठ गुण सहित कहीजै । ते गुण सम्यक् प्रकारे न धार्‌या तो, मिच्छामि दुक्कडं दीजैरा ॥ मु० ॥ ८ ॥ आ० ॥ सूत्र साधु ने छःकाय माँहें, जे काई शङ्का आणी । तेहनो पिण सहु मिच्छामि दुक्कडं, त्रिविध २ कर जाणीरा ॥ मु० ॥ ९ ॥ आ० ॥ गहन वात काई देखी सिद्धन्त नी, शङ्का भरम मन आण्यो । तेहनो पिण सहु मिच्छामि दुक्कडं, हिव मैं सत्य कर जाण्योरा ॥ मु० ॥ १० ॥ आ० ॥ छःकाय जीवाँ माँहें शङ्का राखी, अथवा सिद्ध संसारी । भ्रम जाल पड़्‌यो तुच्छ लेखा कर, मिच्छामि दुक्कडं विचारीरा ॥ मु० ॥ ॥ ११ ॥ आ० ॥ आचार्यादिक साध साधवी, गण समुदाय गुणीजै । त्याँ में साधपणा री शङ्का राखी तो, मिच्छामि दुक्कडं दीजैरा ॥ मु० ॥ १२ ॥ आ० ॥ अनन्त गुणो फेर कह्यो चारित्र में, पजवा हीण वृद्धि देखी । संयम री मन शङ्का

आणी तो, मिच्छामि दुक्कडं विशेषीरा ॥ मु० ॥ १३ ॥ आ० ॥ एकम चवदश पूनम चन्द सम, मुनि कह्या यती धर्म धारी। त्यां में साधपणा री शङ्का राखी तो, मिच्छामि दुक्कडं उदारीरा ॥ मु० ॥ १४ ॥ आ० ॥ चौमासी छमासी दण्ड वालाॅ सूं, कलुष भाव कोई आयो। तेहनो पिण मुझ मिच्छामि दुक्कडं, हिव मैं भ्रम मिटायोरा ॥ मु० ॥ १५ ॥ आ० ॥ शील अनें चरित सहित मुनि केई, चरित सहित सुशील न कोई। एहवी प्रकृति वाला में संयम नवीं सरध्यो तो, मिच्छामि दुक्कडं होईरा ॥ मु० ॥ १६ ॥ आ० ॥ आचार्यादिक ना अवगुण बोली, घाली औरॉ रै शंको। तेहनो पिण मुझ मिच्छामि दुक्कडं, हिव मैं मेट्यो वंकोरा ॥ मु० ॥ १७ ॥ आ० ॥ देव गुरु धर्म रतन तीनूं में, देश सर्व शंक धारी। तेहनो पिण मुझ मिच्छामि दुक्कडं, हिव म्हें शंक निवारीरा ॥ मु० ॥ १८ ॥ आ० ॥ कंखा ते अन्यमत नी वांछा, तथा पासत्था बुगल ध्यानी। वाह्य क्रिया देखी त्यांरी वंछा कीधी तो, मिच्छामि दुक्कडं पिछाणीरा ॥ मु० ॥ १९ ॥ आ० ॥ विति-गिच्छा ते संदेह फल नो, प्रशंसा पाखण्डी नी कीधी, प्रीत भाव परचो कियो तेहनो, मिच्छामि दुक्कडं प्रसिद्धिरा ॥ मु० ॥ ॥ २० ॥ आ० ॥ इम दर्शन अतिचार आलोवै, हिव चारित्र अतिचारो। समिति गुप्त सहित व्रत न पाल्या तो, मिच्छामि दुक्कडं विचारोरा ॥ मु० ॥ २१ ॥ आ० ॥ इर्य्या समिति पूरी नहीं सोधी, चालंतॉ चिन्तवणा कीधी। अथवा चालंतॉ

बातॉ करी हुवै तो, मिच्छामि दुक्कडं प्रसिद्धिरा ॥ मु० ॥ २२ ॥ ॥ आ० ॥ क्रोध मान माया लोभ तणै वश, वचन काढ्यो मुख वारै। हास्य कितोल करी हुवै किण सूं तो, मिच्छामि दुक्कडं म्हारैरा ॥ मु० ॥ २३ ॥ आ० ॥ भय वश बोल्यो नें मुख नो अरिपणो, वलि करी विकथा विवादो। तेहनो पिण मुझ मिच्छामि दुक्कडं, हिव शुभ हुई समाधोरा ॥ मु० ॥ २४ ॥ आ० ॥ एषणा समिति गवेषणा न करी, शंका सहित आहार लीधो। राग द्वेष आण्यो सरस नीरस पर, मिच्छामि दुक्कडं दीधोरा ॥ मु० ॥ २५ ॥ आ० ॥ वस्त्र पात्रादिक लेतॉ मेलत्ताँ, रूड़ी रीत न जोयो। अथवा परठतॉ करी अजैणा तो, मिच्छामि दुक्कडं होयोरा ॥ मु० ॥ २६ ॥ आ० ॥ मन गुप्ति मांहें दोष लगायो, अशुद्ध मन वरतायो। तेहनो पिण मुझ मिच्छामि दुक्कडं, हिव हूं आनन्द पायोरा ॥ मु० ॥ २७ ॥ आ० ॥ वचन गुप्ति विराधना कीधी, सावज वचन उच्चार्यो। तेहनो पिण मुझ मिच्छामि दुक्कडं, हिवै समता रस धार्योरा ॥ मु० २८ ॥ आ० ॥ काय गुप्ति में करी खंडना, काय अशुद्ध वरताई। तेहनो पिण मुझ मिच्छामि दुक्कडं, हिव काय गुप्ति सवाईरा ॥ मु० ॥ २९ ॥ आ० ॥ बिन जोयॉ बिन पूंज्यॉ काया सूं, उटिङ्गणादिक लीधा। पसवाड़ो फेर्यो पगादि पसार्या तो, मिच्छामि दुक्कडं दीधारा ॥ मु० ॥ ३० ॥ आ० ॥ पृथ्वी अप् तेउ वाउ वनस्पति, वेइन्द्री चूरणिया-दिक जाणो। अलसिया ने पुंहरादिक हणिया तो, मिच्छामि

दुक्कडं पिछाणोरा ॥ मु० ॥३१॥ आ० ॥ तेइन्द्री जूं लीख मांकण आदि, चौइन्द्री माखी आदि कहीजै। पंचेन्द्री जलचरादिक हणिया तो, मिच्छामि दुक्कडं दीजैरा ॥ मु० ॥ ३२ ॥ आ० ॥ समूर्छिम गर्भज प्रमुख सहु हणिया, सहल गिणी तथा जाणी। प्रमाद वशे तथा शरीरादि कारण तो, मिच्छामि दुक्कडं पीछाणीरा ॥ मु० ॥ ३३ ॥ आ० ॥ क्रोध लोभ भय हास परवश पणै, मूर्ख पणै मृषावादो। शंकाकारी भाषा निश्चय कही हुवै तो, मिच्छामि दुक्कडं समाधोरा ॥ मु० ॥ ३४ ॥ आ० ॥ देव १ गुरु २ साधर्मीनी ३ चोरी, राज ४ गाथापति ५ अदत्तो। आज्ञा लोपी कोई कारज कीधो तो, मिच्छामि दुक्कडं सुदत्तोरा ॥ मु० ॥ ३५ ॥ आ० ॥ आज्ञा बिना आहार पाणी वस्त्रादिक, लियो दियो हुवै कोई। आचार्य नी आज्ञा विराधी तो, मिच्छामि दुक्कडं होईरा ॥ मु० ॥ ३६ ॥ आ० ॥ आचार्य नी आज्ञा विना दीक्षा दीधी हुवै, विन आज्ञा दीक्षा नो उपदेशो। त्रिविध २ तिण दोष नें निन्दूं, मिच्छामि दुक्कडं विशेपोरा ॥ मु० ॥ ३७ ॥ आ० ॥ देव मनुष्य तिर्यंच ना मैथुन, काम स्नेह दृष्टि रागे। मन वच काया कर सेव्या तो, मिच्छामि दुक्कडं सागैरा ॥ मु० ॥ ३८ ॥ आ० ॥ आल जंजाल सुपन स्त्रियादिक ना, हस्त-कर्मादिक कीधा। हास रामत ख्याल सर्व लहरनो, मिच्छामि दुक्कडं दीधारा ॥ मु० ॥ ३९ ॥ आ० ॥ सचित्त अचित्त मिश्र द्रव्य नी मूर्छा, वस्त्र पात्र आहार पाणी, साध गृहस्थ ऊपर ममत

भावनो, मिच्छामि दुक्कडं पिछाणीरा ॥ मु० ॥ ४० ॥ आ० ॥ मर्यादा उपरान्त वस्त्रादिक राख्या, तथा शरीर ऊपर मूर्छा आणी। शोभा विभूषा नी लहर आई हुवै तो, मिच्छामि दुक्कडं पिछाणीरा ॥ मु० ॥ ४१ ॥ आ० ॥ रात्री भोजन लागो हुवै कोई, दिन उगाँ पहिली वस्तु लीधी। पाणी औषध आदि मोड़ो चुकायो तो, मिच्छामि दुक्कडं प्रसिद्धिरा ॥ मु० ॥ ४२ ॥ आ० ॥ दूजा दिन रै अर्थे औषधादिक, अधिक जाच्यो हुवै जाणी। ते और घरे मेहली नें भोगवियो तो, मिच्छामि दुक्कडं पिछाणीरा ॥ मु० ॥ ४३ ॥ आ० ॥ इत्यादिक चारित्र विषै, अतिचार निन्दुं आत्म साखे। गर्हा करूं देव गुरु नी साख सूं, त्रिविध २ कर दाखेरा ॥ मु० ॥ ४४ ॥ आ० ॥ तप आचार ते वारै प्रकारे, अभिग्रह त्याग अनेको। ते तप विषै अतिचार लाग्यो हुवै तो, मिच्छामि दुक्कडं विशेषोरा ॥ मु० ॥ ४५ ॥ आ० ॥ मोक्ष साधक व्रत पालण विध में, बल वीर्य गोपवियो। वीर्य आचार विराधना कीधी तो, मिच्छामि दुक्कडं उच्चरियोरा ॥ मु० ॥ ४६ ॥ आ० ॥ वली याद करी करी करै आलोयण, न्हाना मोटा अतिचारो। पाप पंक पखाली ने निशल्य हुवै, मुक्ति साहमी दृष्टि धारोरा ॥ मु० ॥ ४७ ॥ आ० ॥ पंच समिति तीन गुप्ति विषै जे, पंच महाव्रत मांह्यो। अतिचार लागो हुवै कोई तो, मिच्छामि दुक्कडं ताह्योरा ॥ मु० ॥ ४८ ॥ आ० ॥ गणपति ना, वा संत सत्याँ रा, अथवा गणना कोई। अवर्णवाद वोल्या हुवै तो, मिच्छामि

दुक्कडं जोईरा ॥ मु० ॥ ४६ ॥ आ० ॥ स्वारथ अणपूगाँ गणपति सं, आण्या कलुष परिणामो । उतरतो जो वचन कह्यो हुवै तो, मिच्छामि दुक्कडं तामोरा ॥ मु० ॥ ५० ॥ आ० ॥ समकित नें चारित्र ना दाता, गणपति महा उपगारी । अणगमतो ज्यो त्यां सूं प्रवर्त्यों तो, मिच्छमि दुक्कडं विचारीरा ॥ मु० ॥ ५१ ॥ आ० ॥ भिक्षु गण श्री जिन शासन में, आसथा तास उतारी । शंका कंखा घाली ओर रै तो, मिच्छामि दुक्कडं विचारीरा ॥ मु० ॥ ५२ ॥ आ० ॥ पाप अठारै जाण अजाणे, सेव्या सेवाया होई । सेवताँ नें अनुमोद्या हुवै तो, मिच्छामि दुक्कडं जोईरा ॥ मु० ॥ ५३ ॥ आ० ॥ अतिचार मूल उत्तर गुण में, लाग्यो ते संभारी संभारी । माया रहित आलोई लियै दण्ड, कपट प्रपंच निवारी रा ॥ मु० ॥ ५४ ॥ आ० ॥ भोला बालक जेम आलोवै, आचार्यादिक पासो । न्हाय धोय नें निर्मल हुवै जिम, आतम उज्जल जासोरा ॥ मु० ॥ ५५ ॥ आ० ॥ इह विधि आलोवण करै मुनि, ते उत्तम जीव सधीरा । परभव री अति चिन्ता जेहनें, कर्म काटण बड़ वीरा रा ॥ मु० ॥ ५६ ॥ आ० ॥ असाता वेदनीनुं अति भय जसु, नरक निगोद थी डरिया । आतमीक सुख नी अति बांछा, आलोयण करी तिरियारा ॥ मु० ॥ ५७ ॥ आ० ॥ बिनाँ आलोई मूआँ विराधक, अभियोग सुर होई । सूत्रे आख्यो तेह संभारी, करै आलोयण सोईरा मु० ॥ ५८ ॥ आ० आलोयण करी मूआँ आराधक, अनाभोगिक सुर होई ।

ए पिण सूत्र नो वचन संभारी, करै आलोयण सोईरा ॥ मु० ॥ ५६ ॥ आ० ॥ आलोयाँ विण उत्कृष्ट भांगै। काल अनन्त रुलीजै। नरक निगोद में झींका खावै। इम जाण आलोयण कीजैरा ॥ मु० ॥ ६० ॥ आ० जातिवन्त कुलवंत आलोवै, कह्यो ठाणांग मझारो। ए पिण सूत्र नो वचन संभारी। करै आलोयण सारोरा ॥ मु० ॥ ६१ ॥ आ० ॥ छोटा मोटा दोष आलोवै, पिण लाज शरम नहीं ल्यावै। उत्तम जीव कहीजै तेहनें, देव जिनेन्द्र सरावैरा ॥ मु० ॥ ६२ ॥ आ० ॥ दश द्वारॉ में प्रथम द्वार ए, आलोवणा नो आख्यो। शुद्ध मन सू आलोवै तेहनो, सुयश सिद्धान्ते दाख्योरा ॥ मु० ॥ ६३ ॥ आ०

द्वितीय द्वारम्

दोहा

प्रथम द्वार आख्यो प्रवर , आलोयण अधिकार।
व्रत उच्चरवा नो हिवैं , दाखू दूजो द्वार ॥ १ ॥

ढाल २ जी

लय—माथो धोई माल संवारै दरपण मैं मुख देखेजी रे)

पूर्वे गणी आज्ञा थी धास्या, पञ्च महाव्रत जाणी जी रे हिवड़ॉ पिण सिद्ध अरिहंत गणि नी, साख करी पहिचाणी रे ॥ सैणॉ थइयैजी रे ॥ १ ॥ सर्व प्राणातिपात प्रति पचखूं, त्रस थावरना प्राणोजी रे। मन वच काय करी हणवा ना, जावजीव

पचखाणो रे ।। सै० ।। २ ।। इमज हणावा तणा त्याग मुझ, बलि हणतो हुवै कोईजी रे। ते अनुमोदन तणा त्याग बलि, जाव जीव अवलोई रे।। सै० ।। ३ ।। मृपावाद सर्वथा पचखूं, क्रोधादिक दिल आणोजी रे। मन वच काय करी मृपा वच, बोलण रा पचखाणो रे ।। सै० ।। ४ ।। इमज बोलावण तणा त्याग मुझ, अनुमोदण ना एमोजी रे। त्रिविध २ वच अलिक तणा इम, जाव जीव लग नेमो रे ।। सै० ।। ५ ।। सर्व अदत्ता दानज पचखूं, अदत्त लेवण रा त्यागोजी रे। अदत्त लेवावण तणा त्याग फुन, द्वितीय करण ए मागो रे ।। सै० ।। ६ ।। अदत्त लियै तसु अनुमोदन रा, छै मुझ त्याग सुजाणोजी रे। मन वच काया त्रिविध जोग करी, जाव जीव पचखाणो रे ।। सै० ।। ७ ।। फुन सहु मैथुन प्रति हूं पच्चखूं, सुर नर तिरि त्रिय फंदोजी रे। मैथुन सेवणरा त्याग अछै मुझ, ए धुर करण प्रबंधो रे ।। सै० ।। ८ ।। मैथुन सेवावण तणा त्याग फुन, अनुमोदण ना आमोजी रे ।। मन वच तनु करी जाव जीव लग, त्याग अछै मुझ तामो रे ।। सै० ।। ९ ।। सर्व परिग्रह प्रति फुन पच्चखूं, प्रथम करण पहिचाणो जी रे। ममत्व भाव करी परिग्रह प्रतिज, ग्रहिवारा पच्चखाणो रे ।। सै० ।। १० ।। परिग्रह ग्रहण करावणरा फुन, छै मुझ त्याग सदीवोजी रे। अनुमोदण ना त्याग इमज त्रिहूं जोग करी जाव जीवो रे ।। सै० ।। ११ ।। फुन रात्रि भोजन प्रति पच्चखूं, निशि भोजन ना नेमोजी रे। तीन करण नें तीन जोग करी, जाव जीव लग एमो रे ।। सै० ।। २१ ।। पंच मुहाव्रत फुन व्रत छठो

अंत्य समय अणगारोजी रे। इह विधि उच्चरै सम-भावे करि, आणी हर्ष अपारो रे॥ सं०॥ १३॥

तृतीय द्वारम्

दोहा

उम व्रत उच्चरिवा तणो , आख्यो दूजो द्वार।
तृतीय द्वार कहिये हिवै , खमायवू तज खार॥ १॥

ढाल ३ जी

(लय—सीता आवै रे धर राग)

सप्त लक्ष जे जाति पृथ्वी नी, सप्त लक्ष अपूकाय। इत्यादिक चउरासी लक्ष जे, जीवायोनि खमाय॥ १॥ सुगुणा खमावियै तज खार॥ ए आँ०॥ गण में संत सती गुणवंता, सगलाॅ भणी खमाय। निज आतम प्रति नरम करी ने, मच्छर भाव मिटाय॥ सु०॥ २॥ किणहिक संत सती सू आया, कलुप भाव जो ताम। कठण वचन तसु कह्या हुवै तो, खामें ले-ले नाम॥ सु०॥ ३॥ इमहिज श्रावक अने श्राविका, सगलाँ भणी खमाय। कलुप भाव करि कटु वच आख्या तो, नाम लेई नें ताहि॥ सु०॥ ४॥ द्रव्यलिंगी वा अन्यदर्शणी खामें सरल पणेह। क्रोधादिक करि कटु वच आख्या तो, नाम लेई पभणेह॥ सु०॥ ५॥ वड़ा संत नी करी आशातन, त्रिहुं जोगे करी ताम। सर्व खमावै उजल भावे, लेई जूजूआ

नाम ॥ सु० ॥ ६ ॥ चिहुं तीरथ अथवा अन्य जन प्रति, राग द्वेष दिल आण। वचन कह्या हुवै तास खमावूं, इम कहै मुनी सुजाण ॥ सु० ॥ ७ ॥ रेकारा तूंकारा किण नें, राग द्वेष वश दीध। तेहथी खमत खामणा म्हांरा, एम वदै सुप्रसिद्ध ॥ सु० ॥ ८ ॥ कठिन सीख दीधी हुवै किण नें, लहर वैर मन आण। खमत खामणा म्हांरा तेह थी, वदै नरम इम वाण ॥ सु० ॥ ६ ॥ महा उपकारी गणपति भारी, सम्यक्त चरण दातार। वारम्वार खमावै त्यां नें। अविनय कियो किवार ॥ सु० ॥ १० ॥ स्वारथ अणपूगॉ गणपति ना, वोल्या अवर्ण-वाद। ते पिण वारम्वार खमावै, मेटी मन असमाध ॥ सु० ॥ ॥ ११ ॥ विनयवन्त गणपति ना, त्यां थी, धस्या कलुष परि-णाम। वारम्वार खमावै तेह नें, लेई जूजूआ नाम ॥ सु० ॥ १२ ॥ च्यार तीर्थ अथवा अन्य जन थी, मेटी मच्छर भाव। इह विधि खमत खामणा करतो, ते मुनि तरणी न्याव ॥ सु० ॥ १३ ॥ परम नरम इम आतम करवी, धरवी समता सार। ए विधि वारू रीत बताई, तीजा द्वार मझार ॥ सु० ॥ १४ ॥

चतुर्थ द्वारम्

दोहा

खमत खामणा नो कह्यो, तीजो द्वार उदार।
हिव अष्टादश अघ प्रते, वोसिरावै अणगार ॥ १ ॥

ढाल ४ जी

(लय—नीको सीखड़ली रे लहिये)

प्राणातिपात प्रथम अघ आख्यो, दूजो मृषावाद। अदत्तादान तीजो अघ कहिये, चौथो मैथुन विपाद॥ सुगुणा पाप पङ्क परहरिये॥ पाप पङ्क परहरिये दिल सूं, वोसिरावै अघ भार। इह विधि निज आतम निस्तार॥ सु०॥ १॥ पञ्चम पाप परिग्रह ममता, क्रोध मान माया लोभ। दशमों राग एकादशमों फुन, द्वेष करै चित्त क्षोभ॥ सु०॥ २॥ बारमों कलह अभ्याख्यान तेरम, ते पर शिर आल विपाद। चवदमों पिशुन तिको खाय चुगली, पनरमो पर-परिवाद *॥ सु०॥ ३॥ जेह असंयम में रति पामै, अरति संयम रै मांय। रति-अरति ए पाप सोलमों, दाख्यो श्री जिनराय॥ सु०॥ ४॥ सतरमों, कपट सहित झूट बोलै, माया मोसो तेह। मिथ्या दर्शन शल्य पाप आठारमों, तेह थी ऊंधो सरधेह॥ सु०॥ ५॥ मोक्ष नू मारग संसर्ग तिहाँ ही, विघ्नभूत कहिवाय। फुन दुर्गति ना कारण छै ए, पाप अठारै ताय॥ सु०॥ ६॥ ते अष्टादश पाप प्रते मुनि, वोसिरावै धर खंत। संयम तप करी भावित आतम, महा ऋषि मतिवंत॥ सु०॥ ७॥ इह विधि पाप प्रते वोसिरावी, भावै भावन सार। परभव री चिन्ता तस पूरी, ए कह्यो चउथो द्वार॥ सु०॥ ८॥

---

* द्वेष सूं पर ना अवर्णवाद बोलै। अनें समभाव सूं छै जिसी वस्तु ओलखावै ते पर-परिवाद पाप नहीं।

पञ्चम द्वारम्

दोहा

अघ वोसिरावा नुं अख्यूं , तूर्य द्वार तंत सार ।
पञ्चम द्वारे परिचजे , चारू शरणा च्यार ॥ १ ॥

ढाल ५ मी

(लय—जग वाल्हा २ जिनंद पधारिया)

चउतीस अतिशय युक्त ही, अष्ट महा प्रतिहार्य हो । वर शोभा, अति शोभा अशोकादिक तणी । समवसरण शोभे रह्या, ते देव जिनेन्द्र सु आर्य हो । मुझ शरणो, मुझ शरणो थावो अरिहंत नो ॥ सुख करणं भव तरणं शरण भगवंत नो ॥ १ ॥ च्यार कषाय तजी तिणे, चिहुं दिशि मुख दीसंत हो । तसु अतिशय, वर अतिशय श्री जिनराज नी । चिहुँ विधि धर्म कथा कही, करै चिहुँ गति दुःख नो अंत हो ॥ मुझ शरणो २, एहवा अरिहंत नो ॥ सुख करणं भव तरणं शरण भगवंत नो ॥ २ ॥ दग्ध बीज जिम तरु तणो, अंकुर प्रकट न होय हो । तिम स्वामी, तिम० कर्म बीज दग्ध ही । भव अंकुर प्रकट हुवै नहीं, तिण सूं अरुहंत कहिये सोय हो ॥ मुझ शरणो, मुझ० थावो अरुहंत नो । शिव वरणं भव तरण शरण भगवंत नो ॥ ३ ॥ अंतरंग अरि जीपवे करी, अरिहंत कहिये तास हो । मुझ शरणो, मुझ शरण थावो ते अरिहंत नो । पूजण जोग्य त्रिण

जगत नें, वारु अर्हंत कहिये विमास हो। मुझ शरणो, मुझ शरण थावो ते अर्हंत नो। सुख करणं, शिव वरण शरण भगवंत नो ॥४॥ दुर्लंघ्य संसार समुद्र तिरी, जिके शिव सुख पाम्या सार हो। अविनासी २, लही गति पञ्चमी। सुख आतमीक अति ओपता, रह्या आवागमण निवार हो मुझ शरणं मुझ शरण थावो ते सिद्धाँ तणो। सुख शाश्वत सुख० २ सुर थी अनन्त गुणो ॥ ५ ॥ निविड़ कठिन जे कर्म ही, भांजी तप मुद्गर करी ताम हो। थई आतम, थई० २ शीतली भूत ही। लोक ना अग्र विषै रह्या, अनावाध क्षेम शिव ठाम हो ॥ मु० ॥ ६ ॥ वंध्या कर्म रूप इंधण प्रते, शुक्ल ध्यान रूप अनलेह हो। दग्ध कीधा दग्ध० ते सिद्ध कहीजिये। मल रहित सुवर्ण सरीप ही, जसु आतम निमल अधिकेह हो ॥ मु० ॥ ७ ॥ तिहाँ जन्म जरा रु मरण नहीं, वलि रोग सोग दुःख नाहिं हो। एक समये, एक० लोकाँत जई रह्या। वारू अष्ट गुणे करी सहित ही, जसु प्रणमें श्री जिनराय हो ॥ मु० ॥ ८ ॥ जे दोष वंयासीस रहित ही, लिये भ्रमर तणी पर आहार हो। मतिवंता, म० २ मुनि महिमा निला। मंडला ना पञ्च दोष परहरि, आहार भोगवै समचित सार हो। मुझ शरणो, मुझ शरणो थावो ते साधु तणुं। भव तरणं भव तरण संतोषनुं सुख घणुं ॥ ६ ॥ पञ्च इन्द्रिय दमण विषै जिके, अति तत्पर छै ऋषिराय हो ॥ वश कीधो, वश० दुष्ट हय मन जिणे। जीत्यो कंदर्प्प ना जे दर्प नें, सिद्धान्त नें वच करी ताय हो ॥ मु० ॥ १० ॥ मेरु समा पञ्च महाव्रत तणो,

भार वहिवा वृषभ समान हो। पञ्च समिते, पञ्च समिते करी समिता सदा। पंच आचार सु पालता, पंचम गति अनुरक्त पिछाण हो॥ मु० ॥ ११॥ छांड्या सर्व संग स्त्रियादिक तणा, ज्यांरै शत्रु नें मित्र समान हो। तृणमणि सम, तृण० सुख दुःख सम वली। ज्यांरै निन्दा प्रशंसा समान ही, सम मान अनें अपमान हो॥ मु० ॥ १२॥ सप्तवीस गुणे करी शोभता, समता दमता निश दीह हो। शुद्ध किरिया २ मुक्ति-पन्थ साधता। डरिया नरक निगोद ना दुःख थकी, मुनि लोपै नहिं जिन लीह हो॥ मु० ॥ १३॥ केवलज्ञानी परूपियो, वारू तेहिज धर्म विचार हो। हितकारी, सुखकारी मुगति तेह थी लहै। वले दुर्गति पड़ता जीव ने, धार राखै ते धर्म उदार हो। मुझ० मुझ शरण जिनाज्ञा धर्म नो। भवतरणं भव तरण वरण शिव शर्म नो॥ १४॥ वीस भेद संवर तणा, वले निर्जरा ना भेद वार हो। जिण आणा, जि० विषै ए सर्व ही। कर्म रुकै कटै तेह थी, आख्यो तेहिज धर्म उदार हो॥ मु० ॥ १५॥ सूत्र धर्म प्रभु आखियो, वलि चारित्र धर्म उदार हो। हलुकर्मी २, जीव तसु ओलखै। ए दोनूं ही जिन आज्ञा मझे, तिण स्यूं धर्म कहीजै सार हो॥ मु० ॥ १६॥ संयम नें तप शोभता, वर संयम थी रुकै कर्म हो। तप सेती २, वन्ध्या अघ निर्जरै। ए दोनूंई जिन आज्ञा मझे, तिण सूं धर्म कहीजै पर्म हो॥ मु० ॥ १७॥

षष्ठम् द्वारम्

दोहा

इह विधि पञ्चम द्वार में , शरण पडिवज्जै च्यार ।
दुकृत नी निन्दा हुवै , छट्ठा द्वार मझार ॥ १ ॥

ढाल ६ ट्ठी

(लय—सुख कारण भविणय)

भव मांहें भमतें, ऊंधी श्रद्धा धारी । मिथ्या मत सेव्यो, ते निन्दूं इह वारी ॥ १ ॥ वले ऊंधो परूपी, घाली औरां रे शंक । सगलाँ री साख सूं, ते निन्दूं तज बंक ॥ १ ॥ कुतीर्थिक सेवा, अथवा तेहना देव । तसु प्रीते प्रशंसा, ते निन्दूं स्वयमेव ॥ ३ ॥ गण थी निकलिया, टालोकड़ गण वार । तसु वंद्या पूज्या, ते निन्दूं इह वार ॥ ४ ॥ पञ्च आस्रव सेव्या, कीधी च्यार कषाय । सहु साखे निन्दूं, दुर्गति हेतु ताय ॥ ५ ॥ वीतराग नो मारग, मैं ढांक्यो किह वार । प्रगट कियो कुमारग, ते निन्दूं धर प्यार ॥ ६ ॥ यन्त्र घरटी ऊंखल, मूसल घाणी आदि । कीधा नें कराव्या, ते निन्दूं तज व्याधि ॥ ७ ॥ बली कुटम्ब पौष्या, दियो कुपात्रे दान । सहु साखे निन्दूं, पाप हेतु पहिचान ॥ ८ ॥ इत्यादिक दुकृत, त्रिहुं जोगे करि कीध । तेहनी करै निन्दा, ए छट्ठो द्वार प्रसिद्ध ॥ ९ ॥

सप्तम द्वारम्

दोहा

दुकृत नी निन्दा कही , छट्ठा द्वार मझार ।
हिवै सुकृत अनुमोदना , दाखूं सप्तम द्वार ॥ १ ॥

ढाल ७ मी

(लय—प्रभवो मन में चिंतवै, सीता सती सुन जनमियो)

ज्ञान दर्शण चारित तप भला, भव-दधि मांहीं जिहाज। सम्यक् प्रकारे सेविया, ते अनुमोदूं आज ॥ १ ॥ अरिहंत सिद्ध नें आयरिया, उवज्झाया अणगार। तसु नमस्कार वंदना करी, ते अनुमोदूं, सार ॥ २ ॥ सामायिकादिक जे भला, छऊं आवश्यक सार। उद्यम तेह विषै कियो, अनुमोदूं इहवार ॥ ३ ॥ सूत्र सज्झाय कीधी वली, ध्यायो चारू ध्यान। जती धर्म* दश विध धर्‌युं, ते अनुमोदूं जान ॥ ४ ॥ पंच समित तीन गुप्त ही, महाव्रत वलि पंच। रूड़ी रीत आराधिया, ते अनुमोदूं सुसंच ॥ ५ ॥ वलि वेयावच‡ दश विधि करी, साधु श्रावक नो धर्म। अदरायो उपदेश दे, ते अनुमोदूं पर्म ॥ ६ ॥ दान शील तप भावना, म्हैं सेव्या धर चित्त। दृढ़ समकित

---

* क्षान्ति मुत्ति ए दश विधि यति धर्म।

‡ आचार्य उपाध्यायादिक दश नी वेयावच।

धरी आसथा, अनुमोदूं पवित्त ॥ ७ ॥ शासण एक दिढ़ावियो, गणपति ना गुणग्राम । अधिक हरष धर उचरया, ते अनुमोदूं ताम ॥ ८ ॥ इत्यादिक सुकृत तणी, अनुमोदन सुविचार । मान अहङ्कार तजी करै, सप्तम द्वार मझार ॥ ९ ॥

अष्टम द्वारम्

दोहा

सुकृत अनुमोदन कही , सप्तम द्वार मझार ।
अष्टम द्वार विषै हिवै , भावै भावन सार ॥ १ ॥

ढाल ८ मी

(लय—साहजी कठै पोढ़ै किण जागां सोवै रे)

पुन्य पाप पूर्व-कृत, सुख दुःख ना कारण रे । पिण अन्य जन नहीं, इम करै विचारण रे ॥ भावै भावना ॥ १ ॥ पूरव-कृत अघ जे, भोगवियां मुकाई रे । पिण वेद्यां विना, नहीं छूटको थाई रे ॥ भा० ॥ २ ॥ जे नरक विषै म्हैं, दुःख सह्यो अनन्तो रे । तो ए मनुष्य नो, किंचित् दुःख हुंतो रे ॥ भा० ॥ ३ ॥ जे समकित विण म्है, चारित्र नी किरियारे । वार अनन्त करी, पिण काज न सरिया रे ॥ भा० ॥ ४ ॥ हिव समकित चारित्र, दोनूं गुण पायो रे । वेदन सम पणै, सह्यां लाभ सवायो रे ॥ भा० ॥ ५ ॥ ओतो अल्पकाल में, तूटै अघ-जालो

रे। भगवती सूत्र में, कह्युं परम कृपालो रे॥ भा०॥ ६॥ सूको त्रिण पूलो, जिम अग्नि विषेह्रो रे। शीघ्र भस्म हुवै, तिम कर्म दहेह्रो रे ॥ भा०॥ ७॥ जिम तप्त तवै जल, बिंदु विललावै रे। तिम दुःख समचित्ते सह्यॉ, अघ क्षय थावै रे ॥ भा०॥ ८॥ दुःख अल्प काल में, मुनि गजसुकुमालो रे। सम भावे करी, लही शिव पट्ट शालो रे॥ भा०॥ ९॥ अति तीव्र वेदना, बहु वर्ष विचारो रे। सही शिव संचरया, चक्री सनतकुमारो रे॥ भा०॥ १०॥ जिन कल्पिक साधू, लियै कष्ट उदीरो रे। तो आव्यॉ उदय, किम थाय अधीरो रे॥ भा०॥ ११॥ सही चरम जिनेश्वर, वेदन असरालो रे। सम भावे करी, तोड्या अघजालो रे॥ भा०॥ १२॥ कष्ट अल्प काल रो, पछै सुर पद ठामो रे। काल असंख्य लगे, दुःख रो नहीं कामो रे॥ भा० ॥ १३ ॥ सह्या बार अनंती, दुःख नर्क निगोदो रे। तो ए वेदना, सहूॅ आण प्रमोदो रे॥ भा०॥ १४॥ रह्यो गर्भावासे, सवा नव मासो रे। तो या वेदना, सहूॅ आण हुलासो रे॥ भा०॥ १५॥ अति रोग पीड़ाणा, जग दुःख बहु पावै रे। ते संभरी सहै, वेदन समभावै रे॥ भा०॥ १६॥ शूली फांसी फुन, भालाँ सूं भेदै रे। बहु जन जग विषै, अति वेदन वेदै रे॥ भा० ॥ १७॥ ते तो जीव अज्ञानी, हूॅ तो ज्ञान सहितो रे। समभावे सहूॅ, वेदन धर प्रीतो रे॥ भा०॥ १८॥ ए तो सुख नो हेतु, सहियॉ सम भावे रे। बहु अघ निर्जरै, पुन्य थाट बंधावै रे भा०॥ १९॥ बहु कर्म निरजरयॉ, थोड़ा

भव मांह्यो रे। शिव पद संचरै, आवागमन मिटायो रे ॥ भा० ॥ २० ॥ सुर-सुख नी वांछा, मन में नहीं कीजै रे। सुख सुरलोक ना, दुःख हेतु कहीजै रे ॥ भा० ॥ २१ ॥ सुख आतमीक नी, वांछा मन करतो रे। इह विधि वेदना, सहै समचित धरतो रे ॥ भा० ॥ २२ ॥ पुद्गल सुख पामला, तिण में गृद्ध थावैं रे। तो अघ संचो हुवैं, अधिको दुःख पावै रे ॥ भा० २३ ॥ नर इन्द सुरिन्द ना, काम भोग कंटाला रे। तसु वांछा कियाँ, दुःख परम पयाला रे ॥ भा० २४ ॥ तिण सू मुनि वेदन, सहै शिव-सुख कामी रे। धर्म शुकल भलो, ध्यावै चित्त धामी रे ॥ भा० २५ ॥ वहु कर्म निर्जरा, तिण ऊपर दृष्टि रे। राखै महामुनि, समता अति श्रेष्ठी रे ॥ भा० ॥ २६ ॥ स्वजनादिक ऊपर, छाँड़े स्नेह पाशा रे। अति निर्मल चिते, शिव पुर नी आशा रे ॥ भा० ॥ २७ ॥ संग स्त्रियादिक ना, जाणै भुयंग समाणा रे। समभावे रहै, मुनिवर महा स्याणा रे ॥ भा० ॥ २८ ॥ क्रोधादिक टाली, सम भावन सारो रे। दृढ़ चित्त करि धरै, ए अष्टम द्वारो रे ॥ भा० ॥ २९ ॥

नवम द्वारम्

दोहा

अष्टम द्वारे भावना, आखी अधिक उदार।
नवमा द्वारा विषै हिवै, अणसण नो अधिकार ॥ १ ॥

ढाल ६ वीं

(लय—वैरागे मन वालियो। हिव राणी पद्मावती)

अनन्त मेरू मिश्री भखी, पिण तृप्त न हुवो लिगार। इम जाणी मुनि आदरै, अणसण अधिक उदार॥ इह विधि अणसण आदरै॥ १॥ ते अणसण द्वि विध जिन कह्यो, पंचम अंगे पिछाण। पाउवगमन ते प्रथम ही, दूजो भत्त पचखान ॥ २॥ इ०॥ प्रथम नमोत्थुणं गुणै, सिद्ध भणी सुखकार। द्वितीय नमोत्थुणं बली, अरिहंत नें धर प्यार॥ धन्य २ धन्य महा मुनि॥ ३॥ धर्माचार्य नें करै, निर्मल चित्त नमस्कार। त्याग करै त्रिहुं आहार ना, जाव जीव लग सार॥ ध०॥ ४॥ अवसर देखी नें करै, उदक तणो परिहार। तृषा परीषह ऊपनाँ, अडिग रहै अणगार॥ ध०॥ ५॥ धन्नो काकंदी तणो, पाउवगमन पिछाण। मास संथारै सुर थयो, सव्वठसिद्ध महा विमाण॥ ध०॥ ६॥ पाउवगमन खंधक कियो, मास संथारो सार। अच्युत-कल्पे ऊपनो, चव लेसी भव पार॥ ध०॥ ७॥ इमहिज मेघ मुनि भणी, आयो मास संथार। विजय विमाणे ऊपनो, मनु थई शिव-सुख सार॥ ध०॥ ८॥ पांचूं पांडव परवड़ा, मास पारणो न कीध। पचख्यो पाउवगमन ही, मास संथारै सिद्ध॥ ध०॥ ९॥ तीसक मुनिवर नें भलो, मास संथारो न्हाल। सामानिक थयो शक्र नो, अष्ट वर्ष चरण पाल ॥ ध०॥ १०॥ कुरुदत्त चरण छःमास ही, अठम २ तप जाण।

संथारो अर्द्ध मास नो, पाम्यो कल्प ईशान ॥ ध० ॥ ११ ॥ मदनसंव महिमा निलो, वलि अनिरुद्ध कुमार। अधिक हर्ष अणसण करी, पहुंता मोक्ष मझार ॥ ध० ॥ १२ ॥ आठू अग्र-महेषियाँ, कृष्ण तणी चरण धार। अति तप करी अणसण ग्रही। पहुँती मोक्ष मझार ॥ ध० ॥ १३ नंदादिक तेरै बली, नृप श्रेणिक नी नार। चरण ग्रही अणसण करी, पामी शिव सुख सार ॥ ध० ॥ १४ ॥ इत्यादिक मुनि महा सती, याद करै मन मांय। भूख तृषादिक पीड़ियाँ, दृढ़ चित्त अधिक सवाय ॥ ध० ॥ १५ शूर चढ़ै संग्राम में, तिम मुनि अणसण मांय। कर्म-रिपु हणवा भणी, शूरवीर अधिकाय ॥ ध० ॥ १६ ॥ जन्म मरण दुःख थी डरया, शिव सुख बांछा सार ॥ ते अणसण में सैंठा रहै, ए कह्युं नवमुं द्वार ॥ ध० ॥ १७ ॥

दशम द्वारम्

दोहा

नवम द्वार अणसण कह्युं , हिव कहुँ दशमो द्वार।
नमुक्कार परमेष्ठी पंच , जपतॉं जय जयकार ॥ १ ॥

ढाल १० वीं

(लय—प्रभु वासुपूज्य भजले प्राणी)

नाना विधि पाप तणो कामी, जिको मरण तणो अवसर पामी। सुर पणो ते लहै सारं ॥ इम जाण जपो श्री नवकारं

॥ १ ॥ जेहनें सखाय पणैज करी, पामें परभंव में सम्पति सखरी। लहै मन बांछित फल सुखकारं॥ इ० ॥ २ ॥ सुलभ रमणी राज्य लहै, बलि सुलभ देव पणो जग है। पिण समकित सहित एह दुर्लभ सारं॥ इ० ॥ ३ ॥ जे समकित चरण सहित नवकार धरै, तिको भव दधि गौपद जेम तिरै। वारु शिव सुख नें ए संचकारं॥ इ० ॥ ४ ॥ पञ्च परमेष्ठी प्रते समरी, तिको भील तणो भव दूर करी। ओ तो पञ्चम कल्पे अवतारं॥ इ० ॥ ५ ॥ ते भील नी रत्नवती नारी, पञ्च परमेष्ठी तिमज हियै धारी। आ पिण पञ्चम कल्पे अवतारं॥ इ० ॥ ६ ॥ पन्नग पुष्प नी माल थई, नवकार प्रभावे कीर्ति लही। सुख श्रीमती उभय भवे सारं॥ इ० ॥ ७ ॥ अग्नि ठण्डी कीधी देवा, कियो कनक सिंघासण ततखेवा। ऊपर अमरकुमर प्रति बैसारं॥ इ० ॥ ८ ॥ नवकार मन्त्र सेठ संभलायो, सुण जाप जण्यो तिण सुखदायो। लह्यो मावत सुर नों अवतारं॥ इ० ॥ ९ ॥ बाल बछड़ा चरावतो जिह बारं, नदी पूर आयाँ गुण्यो नवकारं। थई तत्क्षिण सरिता दोय डारं॥ इ० ॥ १० ॥ सेठ समुद्र में डूबंतो, नवकार गुण्यो धर चित्त शांतो। सुर जहाज उठाय म्हेली पारं॥ इ० ॥ ११ ॥ तो चारित्र सहित जिको नाणी, पञ्च परमेष्ठी ओलख जपै जाणी। तो स्यूं कहियै तसु फल सारं॥ इ० ॥ १२ ॥ शुद्ध एकाग्र चित्त तन मन सेती, पार पुगावै निपजाई खेती। ध्यान सुधारस दिल धारं॥ इ० ॥ १३ ॥ ओ तो चरण अमोलक कर आयो, पद आधारक जे मुनि

पायो। करै सर्व दुखाँ रो छुटकारं ॥ इ० ॥ १४ ॥ मरणांत आराधना इह रीतं, करै दश विधि तन मन धर प्रीतं। ते संसार समुद्र तिरै पारं ॥ इ० ॥ १५ ॥ संवत् उगणीसै वर्ष पणतीसं, रची जोड़ श्रावण विद छट्ठ दिवसं। पायो शहर बीदासर सुखसारं ॥ इ० ॥ १६ ॥ भिक्षु भारीमाल गणि ऋषिरायो, शुद्ध तास प्रसादे सुख पायो। वारू जय जश सम्पति जयकारं ॥ इम ॥ १७ ॥

मोहजीत राजा को व्याख्यान

दोहा

सुधर्म स्वर्ग सुधरमी, सभा मांय शक्रेन्द्र।
सहस्त्र चौरासी सुर भला, सामानिक सुखकन्द ॥ १ ॥

त्रि लख छत्तीस सहस्त्र सुर, आत्म रक्षक अधिकार।
तीन परिषदा परवरी, लोकपाल वले च्यार ॥ २ ॥

अग्र महेषी आठ वर, इक इक नो परिवार।
सोलह २ सहस्त्र सहु, एक लाख अठावीस हजार ॥ ३ ॥

सुर सहु सुणताँ अमरपति, आखै वेण उदार।
मोहजीत राजा तणो, निरमोही परिवार ॥ ४ ॥

इन्द्र प्रशंसा करी घणी, सांभल ने इक देव।
आयो नृप छलवा भणी, आणी अति अहमेव ॥ ५ ॥

राय कुमर प्रच्छन कियो, धार्‌यो योगी भेष ।
कुमर किहाँ लाधो नहीं, जोय रह्या सुविशेष ॥ ६ ॥

एक दासी फिरती थकी, आई नगरी बाहर ।
योगी होइने गल गलो, आखै वयण तिवार ॥ ७ ॥

सोरठा

सुण दासी मुझ बात रे , कुमर भणी मुझ मठ कन्हे ।
सिंह हण्यो साक्षात रे , कहताँ हिवड़ो थड़ हड़े ॥ १ ॥

ढाल १ ली

(लय—महलाँ में बैठी राणी कमलावती)

ए वचन सुणी नें दासी इम भणै, करती ज्ञान विलास । सहु परिवार कह्यो जिन कारमो, तूं क्यूं थयो रे उदास ॥ सांभल रे योगी, तैं योग री युक्ति रीत जाणी नहीं ॥ (ए आंकड़ी) ॥ १ ॥ सुरपति नरपति सर्व अथिर छै, श्वास रो किसो विश्वास तूं क्यूं हुवो रे योगी गल गलो, थारै नहीं आयो ज्ञान प्रकाश ॥ सां ॥ २ ॥ ऊंच नें नीच रङ्क राजा सहु, अविच मरण अपेक्षाय । क्षण क्षण मरै छै श्री जिन भाखियो, तू सोच देख मन मांय ॥ ३ ॥ निज आतम ज्ञान स्वभावे थिर कह्या, ते किण सूं लूंट्या नहीं जाय । थारो रे म्हांरो माया जाल छै, मूरख रह्या मुरझाय ॥ सां ॥ ४ ॥ जे नर आत्म स्वाभाव नहीं ओलख्यो, पुद्‌गल नें जाणै निज स्वभाव । मोहजाल में खूता मानवी, ते

किम पामै तिरण रो डाव ॥ सां ॥ ५ ॥ तूं अन्तर रोगी योगी कहण रो, निज आत्म स्वभाव रो अजाण । कुमर रो मरण देख दुमणो थयो, थारै मोटो रोग पिछाण ॥ सां ॥ ६ ॥ जे जीवन में हर्ष प्रमोद होवै घणो, मरण में होवै दिलगीर । राग द्वेष में खूता मानवी, ते किम पामै भव जल तीर ॥ सां ॥ ७ ॥ असं-यती जीव रो वंछै जीवणो, ते प्रत्यक्ष राग पहिचान । राग छै ते तो दशमो पाप छै, राग नें दया कहै ते अजाण ॥ सां ॥ ८ मरणो वंछै ते तो द्वेष छै, ते ओलखणो सोरो जग मांय । राग ओलखणी दोरी तेह थी, श्री वीतराग कहै वाय ॥ सां ॥ ९ ॥ जे राग नें द्वेष तणै वश मानवी, ज्यारे हर्ष शोक रह्यो व्याप । ते भ्रमण करसी चिहुंगत संसार में, सहसी नरक निगोद सन्ताप ॥ सां ॥ १० ॥ ए फल मोह कर्म ना जिन कह्या, ते टालै राग द्वेष नी ताप । निज आतम ज्ञान स्वभावे रम रह्या, सम भावे चित्त थाप ॥ सां ॥ ११ ॥ जीव अनन्ता नित्य ही मर रह्या, मच्छ गलागल पेख । तू सोच करसी रे किण किण जीव रो, तिण स्यूं समभाव रहणो विशेष ॥ सां ॥ १२ ॥ योगी तो सुण ने रह्यो जोवतो, इणरे तो मूल न दाह । अद्भुत रचना देखी एहनी, मन दृढ़ बोलै अथाह ॥ सां ॥ १३ ॥

दोहा

ए दासी तिण कारणै, मोह नहीं मन मांय ।
जाय कहूं हिवं राय नें, तात हियै दुःख थाय ॥ १ ॥

एहवी करी विचारणा, आयो सभा मझार।
चित दुमणो नृप आगले, वोलै कौन प्रकार ॥ २ ॥

सोरठा

सुण राजन मुझ वाण रे, कुमर भणी सिह मारियो।
छुट्या नहीं मुझ प्राण रे, कहताँ पिण कम्पै हियो ॥ १ ॥

ढाल २ जी

(लय—सोही तेरापंथ पावै छो)

किणरो सुत केहनो पिता, सहु स्वपना री माया रे। एक एकिका जीव स्यू , बार अनन्ती पाया रे। सगपण महा दुःख-दाया रे॥ योगेश्वर तूं कांई भूल्यो रे ॥ ए आंकड़ी ॥ १ ॥ योगी नाम धराय नें, कपट जपै जप-माला रे। तूं कंप्यो किण कारणे, थारी जीभ अग्नि री ज्वाला रे। सुण तूं मोह-मतवाला रे ॥ यो० ॥ २ ॥ योग युक्ति जाणै नहीं, अध्यात्म बिन आयाँ रे। तूं अलुझ्यो मोह जाल में, स्यू हुवै राख लगायाँ रे। ज्ञान दशा बिन पायाँ रे ॥ यो० ॥ ३ ॥ इन्द्रजाल संसार ए, योगी तू कांई राचै रे। मोहजाल तन पहर नें, जीव नटवा जिम नाचै रे। मूरख नर माचै रे॥ यो० ॥ ४ ॥ बाप मरी बेटो हुवै, माता मर हुवै नारी रे। इत्यादिक सगपण घणा, कर्म तणी गति भारी रे। आणै सांग अपारी रे ॥ यो० ॥ ५ ॥ ओ बार अनन्ती पुत्र हुवो, हूं बाप अनन्ती बारो रे। मोह तणै प्रताप स्यूं, सह्या दुःख

अपारो रे । नरक निगोद मझारो रे ॥ यो० ॥ ६ ॥ ज्ञान दर्शन गुण निरमला, ए सुखदाक म्हांरा रे । और वस्तु म्हारी नहीं, ए तो सर्व निकारा रे॥ दुःख दायक सारा रे ॥ यो० ॥ ॥ ७ ॥ निज स्वभाव भूली रह्यो, मोह वशे मतवालो रे । बुद्ध हीण जीव वापड़ा, पामै दुःख असरालो रे । नरक निगोद विचालो रे ॥ यो० ॥ ८ ॥ सोच करै गई वस्तु नो, महा मूरख वाला रे । समझाया समझै नहीं, दृढ़ कर्मां ना ताला रे । जीव पड़ै जंजाला रे ॥ यो० ॥ ९ ॥ हर्ष नहीं सम्पति विषै, विपत्ति पड्यॉ नहीं विपवादो रे । धीरपणै स्थिर आतमा, धर्म अमोलक लाधो रे । ज्यारे सदा समाधो रे ॥ यो० ॥ १० ॥ कष्ट पड्यॉ कायम रहै, शूरा रहै सम भावै रे । निश्चल मन स्थिर आतमा, चित्त विमन नहीं थावै रे । ते स्याणा सुख पावै रे ॥ यो० ॥ ११ ॥ निन्दा स्तुति सुख दुःख, लाभ अलाभ मझारो रे । समचित जीतव मरण में, ज्ञान गुणा रा भण्डारो रे । पामै शिव सुख सारो रे ॥ यो० ॥ १२ ॥ मोह थकी दुःख नरक ना, मोह तज्यॉ सुख सूझै रे । तिण स्यू मोह न कीजिये, योगी तू कांई अलूझै रे । ज्ञान कांई नहीं बूझै रे ॥ यो० ॥ १३ ॥ योगी सुण इचरच हुवो, करवा लागो विचारो रे । वज्र हियो एहनो सही, जीत्यो मोह विकारो रे । मोहजीत नाम सारो रे ॥ यो० ॥ १४ ॥

दोहा

पिता तणै मोह अल्प हुवै, तिण स्यूं धरै न दुःख ।
जाय कहूं हिवे मात नें, तिण राख्यो निज कूख ॥ १ ॥
एहवी करी विचारणा, आयो राणी पास ।
तन कम्पै तरु-पान ज्यूं, बोले थई उदास ॥ २ ॥

सोरठा

सुण मैया मुझ वाण रे, कुमर भणी सिंह मारियो ।
छूट्या नहीं मुझ प्राण रे, कहतां पिण कम्पै हियो ॥ १ ॥

दोहा

वचन सुणी योगी तणा, माता कहै तिण बार ।
रे योगी सुत सिंह हण्यो, सांभल वचन उदार ॥ १ ॥

ढाल ३ जी

(लय—मुनि बलभद्र वसै रे वैराग में)

रे भोला भरम में क्यूं भमै (ए आंकड़ी) क्यूं तुझ झालज उठी रे। किणरी माता सुत केहना, ए सहु बातज झूठी रे॥ रे भोला भरम में क्यूं भमै ॥ १ ॥ ज्ञान दर्शन चरण तांहरा, ते तो कोइय न लूटै रे। निरमल गुण शुद्ध आतमा, कहो किण विध खूटै रे ॥ २ ॥ सम्पति सहु सुपना जिसी, योंही कर रह्या आशा रे। दिन थोड़ा में विललावसी, जिम पाणी ना पतासा रे ॥ रे० ॥ ३ ॥ लाखाँ मनुष्य भेला हुवै, देश २ ना

आई रे। मास तांई भेला रहै, (पिछा) आवै जिण दिश जाई रे॥ रे० ॥ ४ ॥ मनुष्य विछड़िया तेहनो, इचरज मूल न आवें रे। ते मास तांई भेला रह्या, इचरज तेह कुहावै रे॥ ५॥ अनन्ता प्रमाणु भेला थई, कुमर नो शरीर वन्धाणो रे। इतरा वरस रह्या एकठा, हिव विछड़िया पिछाणो रे॥ रे० ॥ ॥ ६ ॥ पुद्गल विछड़िया तेहनो, इचरज नहीं लिगारो रे। एता वरस रह्या एकठा, इचरज एह अवधारो रे॥ रे० ॥ ७ ॥ ये वार अनन्ती पुत्र हुवो, हूं वार अनन्ती हुई माता रे। मोह तणै प्रताप स्यूं, किया नया नया नाता रे॥ रे० ॥ ८ ॥ सगपण सहु संसार ना, सगला भूठा हूं जाणूं रे। कारण कर्म बंधन तणो, त्यांरो मोह किम आणू रे॥ रे० ॥ ६ ॥ पो ऊपर भेला हुवै, उन्हाले नर आई रे। तेम सहु आई मिल्या, क्षणमॉ विछड़ जाई रे॥ रे० ॥ १० ॥ तरु ऊपर रवि आंथम्याँ, पंखी हुवै वहु भेला रे। प्रात समय सहु विछड़ै, तिम ही सजना ना मेला रे ॥ रे० ॥ ११ सहु परिवार छांड़ी करी, संयम ले सुख पाऊं रे। एहवी निर्मल भावना, हूं तो निश दिन भाऊं रे॥ रे० ॥१२॥ नरक निगोद दुःख मोह थी, मोह अनरथ मूलो रे। विपति आगर दुःख मोह छै, मोह अग्नि रो पूलो रे॥ रे० ॥ १३ ॥ पामर जीव अजाण ते, मोह तणै वश पड़िया रे। आत्म स्वभाव भूली रह्या, नरक निगोद रड़ भड़िया रे॥ रे० ॥ १४ ॥ तिण स्यूं कुमर म्हांरो नहीं, म्हांरा गुण मुझ पासो रे। कुटम्ब विटम्ब दुःख दायका, हूं तो जाणूं तमासो रे॥ रे० ॥ १५ ॥

योगी मन इचरज हुवो, सांभल माता री वाणी रे। अद्भुत रचना एहनी, मैं तो प्रत्यक्ष जाणी रे ॥ रे० ॥ १६ ॥

दोहा

ए माता डाकण जिसी, इण नैं सोच न कोय ।
केतो सुत इणरो नहीं, के हियो कठिन अति होय ॥ १ ॥
कुमर अवर ही सम्पजैं, माता नें जग मांय ।
जाय कहूं हिव नार नें, ते दुःख धरै अथाय ॥ २ ॥
एहवी करी विचारणा, आयो नारी पास ।
थर हर लाग्यो धूजवा, बोलै थई उदास ॥ ३ ॥

सोरठा

सांभल वहिनी वात रे, तुम्क वल्लभ मुम्क मठ कन्है ।
सिंह हण्यो साक्षात रे, कहताँ हिवड़ो थरहरे ॥ १ ॥

ढाल ४ थी

(लय—जावो २ के करो सहियां बैठो जाजम ढाल)

मुम्क वल्लभ मुम्क मांय विराजैं, ज्ञान चरण गुण धीर । अवर सहु सुपनाँ री माया, तूं क्यूं हुवो दिलगीर ॥ तूं क्यूं हुवो दिलगीर, योगेश्वर। तूं क्यूं हुवो दिलगीर। आत्म स्वरूप ओलख करणी स्यूं, ज्यूं पामो भव जल तीर ॥ १ ॥ स्थिति अनुसार परिवार सहु जन, मात तात सुत वीर। पिउ तिरिया

वहिनी भतीजी भाणेजी, कोइय न भांजे भीर ॥ को० यो० को० ॥ २ ॥ तूं क्यूं योगी थर हर कम्प्यो, केम हुवो दिलगीर ॥ भस्म लगाय भरम नहीं भाग्यो, नहीं जाण्यो निज गुण हीर। न० यो० न० ॥ आत्म ॥ ३ ॥ मुझ प्रीतम मुझ पास निरन्तर, आतम स्वभाव अमीर। अयोगी अभोगी अरोगी असोगी, ज्ञान अखण्ड गुण धीर ॥ ज्ञा० यो० ज्ञा० ॥ आत्म ॥ ४ ॥ अभेदी अवेदी अखेदी अछेदी, चेतन निज गुण हीर। तेह हण्या किण रा न हणीजे, नहि कोई नो सीर ॥ न० यो० न० ॥ आत्म० ॥ ५ ॥ हर्ष शोक तज सज संयम गुण, धर ज्ञान प्रमोद सधीर। संवेग रस आनन्द मन सींच्याँ, तूटै कर्म जंजीर। तू० यो० तू० ॥ आत्म० ॥ ६ ॥ ए प्रीतम कर्म बंधवा नो कारण, भोग दायक महा भीर। सहजेई विरह थयाँ विप-पोटली, खुल गई गांठ कठीर। खु० यो० खु० ॥ आत्म० ॥ ७ ॥ भोग थकी दुःख नरक निगोद ना, अनन्त काल सही पीर। ते भोगदायक नो मोह किम आणूं, केम होऊं दिलगीर। के० यो० के० ॥ आत्म० ॥ ८ ॥ आतम मित्र एही सुखदायक, आतम निज गुण हीर। आत्म अमित्र राग द्वेष तणें वश, चिहुं गति भ्रमण जंजीर। चि० यो० चि० ॥ आत्म० ॥ ९ ॥ धन धन जे नर नार बाला पणै, धारै चरण गुण धीर। उपशम रस अवलम्बन करि नें, अजर अमर शिव सीर ॥ अ० यो० अ० ॥ आत्म० ॥ १० ॥ हूं पिण चरण धार करूं करणी, हर्षे मुझ मन हीर। मोह विलाप करूं किण कारण, सांभल तूं मुझ वीर ॥ सा० यो० सा०

॥ आत्म० ॥ ११ ॥ तूं योगेश्वर धूजण लागो, न आयो ज्ञान सधीर। ज्ञान दर्शन घर है अति ऊंडो, तू फसियो मोह जंजीर ॥ तू० यो० तूं ॥ आत्म० ॥ १२ ॥ योगी सुण मन मांय विमासै, अहो अहो वचन अमीर। धन २ सुन्दर अधिक अमोलक, धन २ ज्ञान गम्भीर ध० यो० ध० ॥ आत्म० ॥ १३ ॥

दोहा

योगी सुण हर्ष्यो घणो, मन में करै विचार।
मोहजीत राजा तणो, निरमोही परिवार ॥ १ ॥
इन्द्र प्रशंसा करी, ते सहु साची जाण।
योगी रूप फेरि कियो, देव रूप पहिचाण ॥ २ ॥

ढाल ५ मी

(लय—धीज करै सीता सती रे लाल)

कानॉ कुण्डल झल हलै रे लाल, हिवड़ै शोभै हार हो। राजेश्वर। आंगुलियॉ दश मुद्रिका रे लाल, मस्तक मुकट उदार हो, राजेश्वर ॥ धन २ करणी तांहरी रे लाल ॥ १ ॥ धन २ तुम परिवार हो, रा० देव गुरु धन थांहरा रे लाल। धन तुम ज्ञान उदार हो। राजेश्वर ॥ ध० ॥ २ ॥ रत्न तिलक अति झल हलै रे लाल, झिगमिग २ ज्योत हो। रा० कड़ियॉ कड़नोलो दीपतो रे लाल, दशो दिशि करत उद्योग हो रा० ॥ ध० ॥ ३ ॥ एहवो रूप वैक्रे करी रे लाल, लाग्यो राजाजी रे पाय हो रा०।

मुख सूं गुण ग्राम करतो थको रे लाल, बोलै एहवी वाय हो रा० ॥ ध० ॥ ४ ॥ शक्रेंद्र गुण किया तांहरा रे लाल, मैं सह्या नहीं मन मांय हो रा० । हूं आयो छलवा भणी रे लाल, योगी रूप बणाय हो रा० ॥ धं० ॥ ५ ॥ शक्रेंद्र गुण किया मुख थकी रे लाल, ते देख लिया इण वार हो, राजेश्वेर । मोहजीत राजा तणो रे लाल, निरमोही परिवार हो रा० ध० ॥ ६ ॥ आत्म ज्ञान गुणे करी रे लाल, अहो २ अध्यात्म रूप हो रा० इचरज आवै मन तांहरो रे लाल, समपणो अधिक स्वरूप हो रा० ॥ ध० ॥ ७ ॥ नृप राणी त्रिया कुमर नी रे लाल, चौथी दासी जाण हो रा० मोह हरामी ने जीतियो रे लाल, इचरज ए असमान हो रा० ॥ ध० ॥ ८ ॥ राय कुमर प्रकट कियो रे लाल, लाग्यो राजाजी रे पाय हो रा० । सुर वहु मान देई करी रे लाल, आयो जिण दिश जाय हो रा० ॥ ध० ॥ ९ ॥ ए इधकार मोह-जीत नो रे लाल, जोड़्यो कथा तणे अनुसार हो रा० । विरुद्ध वचन आयो हुवै रे लाल, तो मिच्छामि दुक्कडं सार हो रा० ॥ ध० ॥ १० संवत् उगणीसै साते समय रे लाल, जेठ सुद वीज रविवार हो । रा० जोड़ कीधी मोहजीत नी रे लाल, शहर सुजानगढ़ मझार हो ॥ रा० ॥ ११ ॥

पञ्च ऋषि (विघन हरण) की ढाल

लय—सो ही तेरापंथ पावै हो

भिक्षु भारीमाल ऋषिराय जी, खेतसी जी सुखकारी हो ।
हेम हजारी आदि दे, सकल सन्त सुविचारी हो ।
प्रणमूं हर्ष अपारी हो, अ. भी. रा. शि. को. उदारी हो ।
धर्ममूर्त्ति धुन धारी हो, विघनहरण वृद्धिकारी हो ।
सुख सम्पति सिरदारी हो, भजो मुनि गुणॉं रा भंडारी हो ॥ १ ॥

दीपगणी दीपक जिसा, जय जश करण उदारी हो ।
धर्म प्रभावक महाधुनी, ज्ञान गुणॉं रा भण्डारी हो ।
नित प्रणमो नर नारी हो ॥ भजो० ॥ २ ॥

सखर सुधारस सारषी, वाणी सरस विशाली हो ।
शीतल चन्द सुहामणी, निमल विमल गुण न्हाली हो ।
अमीचन्द अघ टाली हो ॥ भजो० ॥ ३ ॥

उसन शीत वर्षा ऋतु समै, वर करणी विस्तारी हो ।
तप जप कर तन तावियो, ध्यान अभिग्रह धारी हो ।
सुणतॉं अचरजकारी हो ॥ भजो० ॥ ४ ॥

सन्त घनो आगे सुण्यो, ए प्रगट्यो इह आरी हो ।
प्रत्यक्ष उद्योत कियो भलो, जाणै जिन जयकारी हो ।
ज्यांरी हूं बलिहारी हो ॥ भजो० ॥ ५ ॥

धोरी जिन शासन धुरा, अह निश में अधिकारी हो।
परम दृष्टि में परखियो, जबर विचारणा थांरी हो।
सुयश दिशा जयकारी हो, ऋषि प्रगट्यो तू भारी हो ॥भ०॥ ६ ॥

वृद्ध सहोदर जीत नो, जशधारी जयकारी हो।
लघू सहोदर सरूप नो, भीम गुणाँ रो भण्डारी हो।
सखर सुयश संसारी हो ॥ भजो० ॥ ७ ॥

समरण थी सुख सम्पजै, जाप जप्याँ जश भारी हो।
मनवंछित मनोरथ फलै, भजन करो नर नारी हो।
वारु बुध विस्तारी हो ॥ भजो० ॥ ८ ॥

रामसुख रलियामणो, तेसठ उदक आगारी हो।
अड़सठ पैंतालीस भला, वलि उगणीस चौविहारी हो।
वड़ तपसी तपधारी हो ॥ भजो० ॥ ९ ॥

मन दृढ़ वच दृढ़ महा मुनि, शील दृढ़ सुविचारी हो।
परम विनीत पिछाणियो, श्रद्धा दृढ़ सु धारी हो।
समरण सुख दातारी हो ॥ भजो० ॥ १० ॥

शिव वासी ल्हावा तणो, तप गुण राशी उदारी हो।
आसासी निज आतमा, पटमासी लग धारी हो।
शीतकाल मझारी हो, सह्यो शीत अपारी हो ॥भ०॥ ११॥

उष्ण शिला अरु रेत नी, आतापना अधिकारी हो।
तप वर्णन चोमासाँ तणो, सुणताँ अचरजकारी हो।
गुण निपन नाम भारी हो ॥ भजो० ॥ १२ ॥

कोदर तप करड़ो कियो, पटमासी लग धारी हो।
व्यावचियो मुनि बालहो, षट षट अठम उदारी हो।
जाव जीव जयकारी हो ॥ भजो० ॥ १३ ॥

शीत उसन बहु तप कियो, सुगुरु थकी इकतारी हो।
परम प्रीत पाली मुनि, जाभी कीरत थारी हो।
समरण सुखदातारी हो ॥ भजो० ॥ १४ ॥

विघ्न मिटै अरियण हटै, प्रगटै सुख भारी हो।
दल रूप दोहग हटै, नाम रटो नर नारी हो।
एहवो भजन उदारी हो ॥ भजो० ॥ १५ ॥

कर्म निर्जरा कारणे, जाप जपो नर नारी हो।
निरवद्य कारज निरमलो, शिव सुख नो सहचारी हो।
सावद्य आणा बारी हो ॥ भजो० ॥ १६ ॥

भीम अमीचन्द मुनि भला, कोदर शिव वृद्धिकारी हो।
रामसुख रलियामणो, समण पञ्च सिरदारी हो।
जाप परम जशधारी हो ॥ भजो० ॥ १७ ॥

शिव मङ्गल सुख साहिबी सम्पति समय सु धारी हो।
अधिक आनन्द सुयश भलो, होवे हर्ष अपारी हो।
एहवो भजन उदारी हो ॥ भजो० ॥ १८ ॥

उदधि अग्नि अरि विष तणो, सकल विघ्न परिहारी हो।
सत्य शील प्रभावे जिन कह्यो, दशमाँ अंग मझारी हो।
तिमज भजन तंत सारी हो, परम मन्त्र सम धारी हो ॥ भ० ॥ १६ ॥

तस्कर त्रास न पराभवै, चर्चा में जयकारी हो।
भूत रोग आपद हरै, अघ दल रूप परिहारी हो।
समरण महा सुखकारी हो ॥ भजो० ॥ २० ॥

चन्द्रपन्नती सूत्र नी, गाथा द्वितीय विचारी हो।
तिमहिज भजन ए ऋषि तणो, अधिष्टायक अधिकारी हो।
थिर दृढ़ आसता थारी हो ॥ भजो० ॥२१ ॥

दवदन्ती सुरी दीपती, जयवन्ती जशधारी हो।
इन्द्राणी सुरी आदि दे, साज्य करण सुखकारी हो।
पुन्यवन्ती प्यारी हो ॥ भजो० ॥ २२ ॥

गुणठाणे चोथै गुणी, समण सत्यॉ हितकारी हो।
अ. सि. आ. उ. सा. ने सदा, प्रणमें वारम्वारी हो।
आणी हर्ष अपारी हो ॥ भजो० ॥ २३ ॥

सिणगारॉ जी मोटी सती, हरखूजी हितकारी हो।
माता तास सुहामणी, अणसण चरण उदारी हो।
आराध्यो इकतारी हो ॥ भज० ॥ २४ ॥

हिम्मतवान सती हुंती, व्यावच करण विचारी हो।
विघन हरण वच्छलकारणी, दिल सम्पत दातारी हो।
जयजश हरष अपारी हो ॥ भज० ॥ २५ ॥

श्री जिन शासन शोभतो, अधिष्टायक अधिकारी हो।
अहो निश अवधि प्रजुंजती वंच्छित पूरण हारी हो।
सुख सम्पत सहचारी हो ॥ भजो० ॥ २६ ॥

जाणै तिके नर जाणता, अवर न जाणे लिगारी हो ।
धर्म उद्योत करण धुरा, निर्वद्य कारज सारी हो ।
आणा तास मझारी हो ॥ भजो० ॥ २७ ॥

परम प्रीत सतगुरु थकी, विड़द बहे इकधारी हो ।
पूरण आशा आसता, म्हांरे दिल मझारी हो ।
जबर दशा जयकारी हो ॥ भजो० ॥ २८ ॥

अधिक विनय गुण आगली, थिर दृढ़ आस्था धारी हो ।
तसु मिटवा योग्य उपद्रव मिटै, ते अघ दल रूप परिहारी हो ।
निश्चय री बात न्यारी हो, न टलै होणहारी हो ।
जिम जिन अतिशय उदारी हो ॥भ०॥ २६ ॥

उगणीसै तेरै समै, बसन्त पञ्चमी सोमवारी हो ।
पञ्च ऋषि नो परवड़ो, तवन रच्यो तन्तसारी हो ।
प्रसिद्ध शहर सिरियारी हो, गणपति जय गुणकारी हो ॥भ०॥३०॥

विघ्न-हरण री स्थापना, भिक्षुनगर मझारी हो ।
महा बिद चवदश पुष्प दिने, कीधी हर्ष अपारी हो ।
तीरथ चार मझारी हो, तास सीख वच धारी हो ।
ठाणा एकाणुं तिवारी हो ॥ भजो० ॥ ३१ ॥

स्वामीजी रो शासण

(लय—माढ)

स्वामीजी रो शासण, म्हाँने घणो सुहावैजी ।
वीर प्रभूजी रो आसण, म्हाँने घणो सुहावैजी ।
घणो सुहावैं, हृदय लुभावैं तारक तेरापंथ ॥

(ध्रुव पद)

मर्यादामय जीवन सारो, मर्यादा रो मान ।
आत्म नियंत्रण अरु अनुशासन, है शासण री शान ॥ १ ॥

एकाचार्य एक समाचारी, एक परूपणा पंथ ।
ओ नूतन अद्भुत निकाल्यो, वाह ! वाह ! भिखणजी संत ॥ २ ॥

पावस मे प्रसरैं, करैं अपणों, शीत काल संकोच ।
निर्झरिणी जिम शासण सरणी, अन्तर मन आलोच ॥ ३ ॥

सेवा भावी सुविनिताँ रो, वढ़ै सहज वहु मान ।
खेतसीजी, तथा रायचंद ओ ल्यो प्रत्यक्ष प्रमाण ॥ ४ ॥

निन्नाणुं रुपिया नोली में, आयो विनय आचार ।
शेप एक वाकी, वाकी गुण, स्वर्ण सुरभि संचार ॥ ५ ॥

विद्या भारभूत वणज्यावै, कला कलंकित होय ।
नहिं धारी गणि गण इकतारी, वारी खूव विलोय ॥ ६ ॥

जो दलवंदी रा दल-दल स्यूं, दूर रहै दश हाथ ।
संघ हितेच्छु तिण री तुलना, रखिया रोहिणी साथ ॥ ७ ॥

बा वक्तृत्व कला बेचारी, बिन वारी घन गाज ।
नहिं विकसावै गण वन क्यारी, मूल बिना किहाँ व्याज ॥ ८ ॥
बात-बात प्रवचन-प्रवचन में, गण गणपति रो नाम ।
सुविनिताँ री सरल कसौटी, दो चावल कर थाम ॥ ६ ॥
लिखित लेख ओ स्वामीजी रो, शासण री बुनियाद ।
हर वर्षे मरयाद महोत्सव, 'तुलसी' तिण री याद ॥१०॥
सतरे पंचसया मुनि समणी श्रावक संघ सजोर ।
शहर सरदार त्रयोदश संवत् शासण हर्ष विभोर ॥११॥

पञ्च परमेष्ठी को स्तवन

दोहा

पाँच पद परमेश्वरु, मोटा महा गुणखान ।
सर्व लोक में सार ए, विध सू करूं बखाण ॥ १ ॥
पहिले पद अरिहन्त भजो, दूजै सिद्ध दयाल ।
आचार्य तीजै अखो, चौथे उपाध्याय भाल ॥ २ ॥
साध सकल पद पंच में, समख्याँ शिव सुख होय ।
गुण गाऊं ए ओलखी, सूत्र स्हामो जोय ॥ ३॥
पांच पदाँ में गुण घणा, पूरा कह्या न जाय ।
नहीं पहुंचे नर नारियाँ, इन्द्र कहत थक जाय ॥ ४ ॥
पिण थोड़ासा प्रकट करूं, लहेश मात्र लिव लाय ।
गुणमाला गुणवन्त री, समरूं हूं सुखदाय ॥ ५ ॥

ढाल

वीस विहरमान सदा शाश्वता, जघन्य पदे परिमाणं। सौ साठ ने नित २ नमिये, उत्कृष्टे पद आणं॥ भवियण नमो अरिहन्ताणं। नमो सिद्ध निरवाणं। मन शुद्ध करनें भजिये, भवियण, ते पामें कल्याणं॥ भ०॥ १॥ अनन्त ज्ञान दर्शण चारित्र तप, वल कर अनन्त आणन्दा। एक सहस्र आठ लक्षण विराजै, सेवत चौष्ठ इन्दा॥ २॥ चौतीस अतिशय अति शोभता, वहु विस्तार वखाणं। पंच तीस प्रकार करी नें, तारै जीव अयाणं॥ ३॥ दश अठ दोषण टाला वारै गुणवाला, सुरेन्द्र सू अति रूपाला। वाण विशाला समझै वृद्ध बाला, कट जावै कर्म पुराला॥ ४॥ नाम स्थापना द्रव्य निक्षेपो, चौथो भाव पिछाणं। भाव भगवन्त ने नित २ नमिये, ते पामें कल्याणं॥ ५॥ नमो कहतॉ नमस्कार छै, अरि कहतॉ कर्म कष्टाणं। हंता कहतॉ हणिया अरिहन्त, ते पाया निरवाणं॥ ६॥ कर करणी कर्मा नें काट्या, पाया सिद्ध निरवाणं। जन्म जरा दुःख मेट दिया सर्व, नहीं कोई आवण जावण॥ ७॥ सिद्धजी आठ गुणाकर शोभै, अतिशय गुण इकतीसा। कर्म विदाख्या कारज साख्या, जीता राग नें रीसा॥ ८॥ अवर्ण अगंध अरस अफर्श, नहीं जोग लेश आहारं। अनन्त सुख आत्मीक सोहै, सिद्ध सदा सिरदारं॥ ९॥ नमो कहतॉ नमस्कार छै, सिद्धाणं कारज साख्या। सुख शाश्वता सदा काल छै, आवागमण निवाख्या॥ १०॥ छतीस गुणे करी शोभ रह्या छै, आचारज अणगारा। निश

दिन चरचा न्याय बतावै, गुण कर ज्ञान भण्डारा ॥ ११ ॥ धर्माचार्य धुरा धुरिन्धर, मोटा मुनिवर म्हांरा, भरत क्षेत्र में भिक्षु शोभ्या, शिष्य भारीमाल सिरदारा ॥ १२ ॥ गुणरा आगर बुद्धि रा सागर, मोटा मुनि मुनिन्दा। साधाँ मांहि शोभ रह्या छै। जिम तारॉ विच चन्दा ॥ १३ ॥ अङ्ग इग्यारह उपांग बारह, भणै भणावै सारा। पचीस गुणा कर शोभा रह्या छै, उपाध्याय अणगारा ॥ १४ ॥ जघन्य दोय सहंस कोड़ जाम्भेरा, उत्कृष्टा नव सहंस कोड़ा। अढाई द्वीप पनरै क्षेत्रॉ में, मुनिश्वराँ रा जोड़ा ॥ १५ ॥ बारह आठ छतीस पचीस, साधु सतावीस गुण वाला। एक सौ ने आठ गुणारी, ए गावो गुणमाला ॥ १६ ॥ दोष बंयांलीस बहरत टालै, बावन टालै अणाचारा। पांच दोष मंडला रा टालै, गुण कर ज्ञान भण्डारा ॥ १७ ॥ पांच पद परमेश्वर पूरा, गुण ओलख ने गावो। सम्यक सहित व्रत पालने, आवागमण मिटावो ॥ १८ ॥ समत अठारह वर्ष गुणसाठे, अषाढ़ जाणीज्यो मासं। गुण गाया छै पांच पदॉ रा, शहर पीसांगण चौमासं ॥ १९ ॥
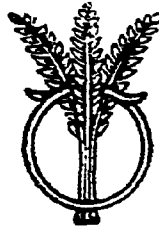
महासतियाँजी श्री छोगाँजी को छव ढालियो

दोहा

शान्त सुधारस सेव धी, सुधी संघ शिरमोड़ ।
सुविधिनाथ समरूं सदा, विधि युत वेकर जोड़ ॥ १ ॥

भिक्षु भिक्षु-गण अधिपति, भिक्षु भिक्षु-गण भूप ।
भिक्षु भिक्षु-गण सेहरो, भिक्षु भजूं जिन रूप ॥ २ ॥

सुकृत समुद्र कला निधि, कला कला-निधि सिन्धु ।
भावुक भ्रम तामस हरण, श्री कालू शरदिन्दु ॥ ३ ॥

प्रणमी तास पदाम्बुजे, तसु जननी जग ख्यात ।
छोगाँ नो छव ढालियो, रचू रसीली वात ॥ ४ ॥

भावे गुणि गुण गावतॉ, कटै कर्म नी कोड़ ।
आगम में अर्हन् अखै, माटै मुझ मन दोड़ ॥ ५ ॥

ढाल १

(लय—राणी भाखै सुण रे सुड़ा)

जम्बूद्वीपे भरत सनूरो, थली देश देशॉ में रूड़ो । भू भामिनी मस्तक चूड़ो रे । गुण रसिया, गुरू-जननी चरित्र सुणीजे ॥ ए आंकड़ी ॥ १ ॥ कोटासर ग्राम करारो, साह नरसिंहदास निहारो । जस जात लूणिया धारो रे ॥ गुण रसिया० ॥२ ॥

घर घरणी जेहनी गोगाँ, जाया नव संतान निरोगा। छाजै इक पुत्री छोगाँ रे॥ गुण० ॥ ३॥ सम्वत् उगणीसै एकै, अषाढ़ कृष्ण सुविवेकै। तिथि चउदश जन्म विशेषे रे॥ गुण० ॥ ४॥ इम सोलह संवत् आई, लख प्रौढ़ी पुत्री डाही। परणावे तात उमाही रे॥ गुण० ॥ ५॥ बसे ग्राम ढढेरू मांही, बुद्धसिंहजी चौपड़ा ग्राही। जस पंच तनय त्रिण बाई रे॥ गुण० ॥ ६॥ तेह में मूलचंदजी संगे, छोगाँ नो परम उमंगे। कियो पाणि-ग्रहण प्रसंगे रे॥ गुण० ॥ ७॥ कालान्तरे छापुर द्रंगे, आवी वसिया मन ने रंगे। सुख में निशि वासर लंघे रे॥ गुण० ॥ ८॥ तेतीसै फाल्गुन मासे, तिथि द्वितीया सित पख वासे। प्रसव्यो सुत परम हुल्लासे रे॥ गुण० ॥ ६॥ जननी धन्य जीवित जाण्यो, मन मोद अमिणित माण्यो। बिन ज्ञानी कवण बखाण्यो रे ॥ गुण० ॥ १०॥ उपसर्ग भयंकर सहियो, दिन तीजै जाय नें कहियो। पिण सुत नें अहल न अड्यो रे॥ गुण० ॥ ११॥ कालू अभिधान कहायो, सहु साजन नें रे सुहायो। गोरड़ियाँ मिल जश गायो रे॥ गुण० ॥ १२॥ सुत नो मुख निरखै माता, कर-कोमल राता राता। तिम लोयण अमिय भराता रे॥ गुण० ॥ १३॥ रूं रूं में साता पावै, हद हेजे हृदय लगावै। शिर चुम्बी स्तन्य पिलावै रे॥ गुण० ॥ १४॥ कब ही उत्संगे ठावै, मन मोदे गोद गहावै। कर साही पाय चलावै रे॥ गुण० ॥ १५॥ क्यांरे कोष्ण जले न्हवरावै, क्यांरे हालरियो गावै। क्यांरे हंस हंस नें हुलरावै रे॥ गुण० ॥ १६॥ क्यांरे

तोतली वोली वोलावै, सुण हृदय-कमल विकसावै। जननी इम मन वहलावै रे॥ गुण०॥ १७॥ कही पहली ढाल रसाली, सुत जन्म महोत्सव वाली। हिवै आगल वात विशाली रे ॥ गुण०॥ १८॥

दोहा

सयल वंश हुलसित थयो, निरखी कालू नूर।
परम प्रभाविक पूतलो, संचित पुन्य प्रचूर॥ १॥
मूलचन्द जी नो तदा, थयो देह अवसान।
अशुभ उदय लोगाँ भणी, असुख थयो असमान॥ २॥
दिये दिल नें आश्वासना, अंगज मुख अवलोक।
समझे पुत्र प्रसाद थी, थारा सारा थोक॥ ३॥
आशा जग में अमर धन, दुःखित जीवन प्राण।
आशे सीताजी लह्यो, विरह तणो अवसान॥ ४॥
पुत्र युक्त माता गई, निज पीहर आवास।
संकट समये नारि नें, पितु-घर नो विश्वास॥ ५॥

ढाल २

(लय—घोड़ी तो आई थारे देश में मारूजी)

विक्रम चालीसै समै वारू जी, पीहर वाला प्राय हो। सुणो चारू॥ सु०॥ चरित्र गुरु-मात नो वारूजी॥ ए आंकड़ी॥

डूंगरगढ़ वासी थया बालजी, तिहाँ रहै तिहुं सुत नाय हो। सुणो चाल। सु०॥ चरित्र० ॥१॥ इक चालीसै तिहाँ थयो बालजी। मृगांजी को चउमास हो॥ सुणो चाल॥ सतियाँ नी संगत करै बालजी। छोगाँ चित हुल्लास हो॥ सुणो चाल। सु०। चरित्र० ॥२॥ आर्या ना उपदेश थी बालजी, उपनो मन वैराग्य हो। । सुणो०। संयम लेवा कारणे बालजी, पूछै सुत महाभाग हो। सुणो चाल। सु०॥ चरित्र० ३॥ रे सुत आपाँ उभय ही बाल जी, मघवा गणिवर पास हो। सुण नंदन। सु०। जननी इम भणै नंदन जी॥ चरण रयण अंगीकरी नंदनजी, मेटाँ भव भ्रम पास हो। सुणो चाल। सु०॥ चरित्र० ४॥ प्रभणे सुत इम सांभली माताजी, आतो आच्छी बात हो। सुणो०। शय्या मिलै नतु उंघताँ बालजी, एहवो थयो अवदात हो। सुणो चाल। सु०॥ चरित्र० ५॥ वय बालक बुद्धि वड़ी बालजी, नहिं कोइ अद्भुत एह हो। सुणो०। बुद्धि नहिं वय अनुसरे बालजी, जोवो तिहुं नो त्रेह हो। सुणो चाल। सु०॥ चरित्र० ६॥ उदय भाव थी वय हुवै बालजी, बुद्धि क्षयादिक भाव हो। सुणो०। तेह थी बुद्धि वय तणो बालजी, न हुवै एक स्वभाव हो। सुणो चाल। सु०॥ चरित्र० ७॥ विमल विवेकी शिशु हुवै बालजी, नेकीवान अनेक हो। सुणो०। वय वृद्धा गृद्धा हुवै बालजी, अविवेकी नर केक हो। सुणो चाल। सु०॥ चरित्र० ८॥ सुत वच निसुणी मात जी बालजी, पामी परमानंद हो। सुणो०। मतिशाली महिमा निलो बालजी, परख्यो पुत्र अनन्द हो। सुणो चाल।

सु० ।। चरित्र० ६ ।। भगिनी-पुत्री पुत्र सह वारूजी, आव्या गढ़ सरदार हो । सुणो० । निरख्यो जन मन मोहनो वारूजी, मघवा पूज्य दिदार हो । सुणो चारू । सु० ।। चरित्र० १० ।। भावी वाल विलोक नें वारूजी, उमग्यो मघवा मन्न हो । सुणो० । जौहरी नी परे जाणिये वारूजी, लखि वहु मूल्य रतन्न हो । सुणो चारू । सु० ।। चरित्र० ११ ।। तिव्र कामना त्रिहुं तणी वारूजी, ग्रहिवा संयम भार हो । सुणो० । काल्ह कल्प अडीक में वारूजी, फिर आया निज द्वार हो । सुणो चारू । सु० ।। चरित्र० १२ ।। स्थिरी-करण दिल भावना वारूजी, श्री मघवा गण धार हो । सुणो० । डूंगरगढ़ में मोकल्या वारूजी, वलि वलि मुनि मनुहार हो । सुणो चारू । सु० ।। चरित्र० १३ ।। चढ़ते परिणामें त्रिहुं वारूजी चम्मालीसै साल हो । सुणो० । वीदासर चउमास में वारूजी, आव्या हुलसित चाल हो । सुणो चारू । सु० ।। चरित्र० १४ ।। मघवा गणी पद भेटिया वारूजी, विनवे वलि-वलि एम हो । सुणो० । तारो तारो तातजी वारूजी, जिम हुवै तन मन क्षेम हो । सुणो चारू । सु० ।। चरित्र० १५ ।। तृतीया शुक्ला सोज नी वारूजी, शुभ महुरत शुभ वार हो । सुणो० । श्री मुख प्रभु पच-खावियो वारूजी, पहिलो संयम भार हो । सुणो चारू । सु० ।। चरित्र० १६ ।। बीजी ढाले वालहा वारूजी, मघवा कर शिर धार हो । सुणो० । त्रिहुं भव सायर स्यूं तिख्या वारूजी, कीधो सफल जमार हो । सुणो चारू । सु० ।। चरित्र० ।। १७ ।।

दोहा

मघवा गणिवर पास में, किया पांच चउमास ।
पच्चासै इक्कावने, माणक गणि सह खास ॥ १ ॥
नवल सती संग बावने, तेपने तिम गणि साथ ।
वलि नवलाँ संग चौपने, पिचपने पूज्य संगात ॥ २ ॥
कान कंवरजी नो कियो, डाल गणी संघाट ।
छपने छोगाँजी तदा, तसु संग रह्या सुघाट ॥ ३ ॥

ढाल ३

(लय—डाल गणी पाट विराज्या)

कान कंवरजी संगे छोगाँ मातजी रे। हांरे हांरे सुगणा जन, विचरै परम उमंगे तन मन रंगे रे। सुण सुण रे सुरि जन, जगदम्बा गुरु अम्बा नी गुण-भंभा बाजै रे॥ आंकड़ी० ॥ मारवाड़, मेवाड़, मालवे देश में रे। हांरे हांरे सुगणा जन, नव नव रंगी जंगी भंगी लंघै रे। सुण सुण रे सुरि जन ॥ १ ॥ इम करताँ छासट्ठे डालम गणपति रे। हांरे हांरे सु०, कालू नें निज युवपद भालू थाप्यो रे। सुण २ रे सु०। लेख एक गण नायक निज कर थी लिखी रे। हांरे सु०, भिक्षु गण नो सारो भार समाप्यो रे। सुण २ रे सुरि जन० ॥ २ ॥ भाद्रवी पूनम पाट विराज्या थाट स्यूं रे। हांरे हांरे सुगणा जन, वाट वाट जश कीरति जेहनी फैली रे। सुण २ रे सु०। जय जय छोगाँ नन्दन

चन्दन बावनो रे। हारे २ सुगणा जन०। डालम गण चालम नी गादी झेली रे। सुण २ रे सुरि जन० ॥ ३ ॥ बीकाणे चौमास करि नें आविया रे। हांरे २ सु०, मिगसर मासे छननन छोगाँ भाजी रे। सुण २ रे सु०। सहु सतियाँ सामेलो साम्यो तिह समै रे। हांरे २ सु०, सुत मुख निरखत भूख त्रिषा सहु भाजी रे। सुण २ रे सुरि जन० ४॥ वलि २ वन्दे, दिल आनन्दे मात नो रे।। हांरे २ सु०। हसित वदन गुण गावै अति हुलसावै रे। सुण २ रे सु०। धन्य दिहाड़ो धन्य घड़ी पुल आजरी रे। हारे २ सु०। त्रिभुवन तिलक निहार्यो निज सुत भावे रे। सुण २ रे सु० ५ ॥ सफल मनोरथ आज थया सहु मांहरा रे। हांरे २ सु०। पुत्रवती युवती में धुर पद पायो रे। सुण २ रे सु०। वीर विलोक्या देवानन्दा इम सुणी रे। हांरे २ सु०। सो आनन्द आज अनुभव में आयो रे। सुण २ रे० सुरि जन ॥ ६ ॥ सारी दुनियाँ सौख्य सरोवर झूलती रे। हारे २ सु०। जननी मन हुलसाई स्यूं अधिकाई रे। सुण २ रे सु०। जिनवर जन्मे छिन एक सुर तिरी नें नेरिया रे। हांरे २ सु०। सुख मानै तिहाँ नर नूं कहिवो कांई रे। सुण २ रे सुरि जन ॥ ७ ॥ गुरु-मुख जननी गुरु जननी-मुख गौर स्यूं रे। हांरे २ सु०। चिहुं तीरथ तिम विहुं नो वदन निहालै रे। सुण २ रे सु०। सो व्यतिकर किम कहिये लहिये लय थकी रे। हांरे २ सु०। अद्भुत दृश्य निहाल्यो जेह तिण काले रे। सुण २ रे सुरि जन ॥ ८ ॥ श्री मुख स्यूं जिन-शासन राजा ताम ही रे। हांरे २ सु०। ताजा वच

फरमाई कुरब बधाई रे। सुण २ रे सु०। काम काज अरु बोझ भार उतार नें रे। हांरे २ सु०। तिमज असाण पाण पांती वकसाई रे। सुण २ रे सु० ॥ ९ ॥ मध्याने तिम कानकंवरजी नें करी रे। हांरे २ सु०। काम बोझ बकसीस ईश मन राजी रे। सुण २ रे सु०। च्यार सत्याँ छोगाँजी ने तिम सूंपिया रे। हांरे २ सु०। भत्तु मखु, प्रतापाँ, खूमाजी रे। सुण २ रे सुरि जन ॥ १० ॥ सड़सट्ठे चौमासो गढ़ सरदार में रे। हारे २ सु०। श्री गणिवर नी सेव समण सती साझी रे। सुण २ रे सु०। तीजी ढाले चाल अति मिठी मलपती रे।। हारे २ सु०। धन्य धन्य छोगाँ जी गणपति माजी रे। सुण सुण रे सुरिजन ॥ ११ ॥

दोहा

अड़सट्ठे बीदासरे, गुणंतरे गुणकार।
चूरू चन्देरी विपे, साल सित्तरे सार ॥ १ ॥
चातुरगढ़ इकोत्तरे, चौमासा इम च्यार।
सुगुरु सेवा मांही किया, छोगाँ सती सु धार ॥ २ ॥
मेद पाट में महा मुनि, विहरण कियो विचार।
वृद्ध भणी निज मात नें, राखी थली मझार ॥ ३ ॥

ढाल ४

(लय—बधज्यो रे चेजारा थारी बेल)

विनवे माता वारू बेकर जोड़। कांइ वारू०। लखि प्रभु मन शीघ्र प्रयाण में जी, म्हांरा राज। वृद्ध अवस्था म्हारी

शासन-मोड़ । कांइ० । नहीं थांरै ईश अजाण में जी । म्हांरा० ॥ १ ॥ आप पधारो मेदपाट मरू देश । कांइ० मेद० । हिवै दर्शन दुर्लभ मो भणीजी । म्हांरा० । म्हांरो तनु नहिं माने मुझ आदेश । कांइ० । स्यू करिये सुजन सिरोमणी जी ॥ म्हांरा० ॥ २ ॥ तुझ दरशन विन खिण २ जासी जेह । कांइ० । लाखीणी मांहरा लाडलाजी ॥ म्हांरा० ॥ तनु पिंजरियो धरियो रहसी एह । जिवड़ो नहीं जोसी गाडलाजी ॥ म्हारा० ॥ ३ ॥ मुझ आतम नॉ तुम ही आतम राम । काइ० । वसु यामा दिल माही वसो जी । म्हांरा० । सोवत जागत उठत बैंठत स्वाम । कांइ० । म्हांरै प्रभु नांव तणो नशोजी ॥ म्हारा० ४ ॥ जो प्रभुवर नो विहरण थयो विचार । कांइ० । अवधारो मुझ आशीपड़ीजी ॥ म्हांरा० । थांरो वधज्यो दिन-दिन भाल विशाल । कांइ० । जय लच्छी वाट जोवे खड़ी जी ॥ म्हांरा० ५ ॥ क्रोड दिवाली तपज्यो तपन समान कांइ० । रहो तेज सवायो वाधतोजी ॥ म्हांरा० । ईड़ा पीड़ा परही करो प्रयान । कांइ० । रहो त्रिभुवन तुझ आराधतोजी ॥ म्हांरा० ६ ॥ सुखे सुखे विभु विचरो देश प्रदेश । कांइ० । पिण पाछा वेग पधारज्योजी ॥ म्हांरा० दीज्यो दर्शन ए अम नो आदेश । कांइ० । माजी नी लाज वधारज्योजी म्हांरा० ७ ॥ श्री गणिवर तव कोमल वयण उच्चार । कांइ० । संतोष्यो मन माता तणोजी । म्हांरा० । माता माणै तन मन हरप अपार । कांइ० । तव नन्दन नो नन्दनपणोजी ॥ म्हांरा० ८ ॥ पभणै वासी वीदासर ना ताम । कांइ० । वैंगाणी शोभा-

चन्दजीजी ॥ म्हांरा० ॥ माजी नें मेल्हावो म्हारै ग्राम । कांइ० । वकसावो वचन गणिन्दजीजी ॥ म्हांरा० ९ ॥ जिहॉं तिहॉं पिण रहिवूं पड़से राज । कांइ० । तो सरसे काज वीदाण नो जी ॥ म्हांरा० । करसे करुणा करुणा कर गणि आज । कांइ० । है खरो भरोसो राण नो जी । म्हांरा० १० ॥ इम अनुनय लखि विनय विविध पर तास । कांइ० । जय गादीधर नॉ जाईयाजी ॥ म्हांरा० । माजी मेली श्री मुख वचन प्रकाश । कांइ० । वीदासर जन हुलसावियाजी ॥ म्हांरा० ११ ॥ उगणीसे इकोत्तर शोभन साल । कांइ० । पोष कृष्ण पख द्वादशीजी ॥ म्हांरा० । बीदासर नूं वरनूं भाल विशाल । कांइ० । गणि-माता सुख साता वसीजी ॥ म्हांरा० १२ ॥ देशान्तर कर गणिवर वे चौमास । कांइ० । करी आश सफल माजी तणीजी । म्हांरा० । वलि वलि लीधो बीदासर सुखवास । कांइ० । करवाई सेवा मा भणीजी ॥ म्हांरा० १३ ॥ तिण चौमासा नो आछो अवकाश । कांइ० । बकसायो गणिवर मात नें जी । म्हांरा० । शेष काल में तिम ही स्वमति विमास । कांइ० । धन्य एहवा जननी जात नें जी ॥ म्हांरा० १४ ॥ एक वरस में एक वे त्रिण चिउं बार । कांइ० । वहुवार पधारया महामतीजी । म्हांरा । लोगॉं मन में तिम तिम हरष बधार । कांइ० । लियो लाहो सेवा नो सती जी ॥ म्हांरा० १५ ॥ संत सत्यॉं रो आवागमन अपार । कांइ० । पुर वास्यॉं री विनती बिनाजी । म्हांरा० । सीतकाल तिम उष्ण काल अवधार । कांइ० । ए फल माजी सुपसाय नॉ जी ॥ म्हांरा० १६ ॥ देश

देश नाँ लोक हजाराँ चाल । कांइ० । आणी हरष घणो घणोजी ॥ म्हांरा ॥ आया बीदासर पुर में हर साल । कांइ० । ए महात्म सव माजी तणोजी ॥ म्हांरा० १७ ॥ विदित भयो बीदासर मुलकाँ मांय । कांइ० । प्रभु-मात प्रसाद पुनीत में जी । म्हांरा० । नहिं कोइ इचरज माता नै सुपसाय । कांइ० । नोखो गवराणो गीत में जी । म्हारा० १८ ॥ तुलसी गणपति तूर्य्यं ढाल सुविशाल । कांइ० । बीदासर वर्णन नी भणी जी । म्हांरा० । आगल वतिका सुनिये सुज्ञ रसाल । कांइ० । मति चूको अवसर नी अणीजी ॥ म्हारा० १६ ॥

दोहा

इह अवसर जोधाण जन, आव्या कर मंडाण ।
निज पुर प्रभु पधरायवा, विनती नों सुविहाण ॥ १ ॥

ठाट किया थलियाँ महिं, वहु वर्षां लग पूज ।
मारवाड़ महि तारिवा, अजहु किम नहिं बूझ ॥ २ ॥

अम पिण सेवक आप ना, कदमी किंकर नाथ ।
हिवै खाविंदी कीजिये, श्रमण संघ गहि साथ ॥ ३ ॥

सुण सजोर विनती सुघड़, गणिवर नवती साल ।
चातुरगढ़ चउमास करि, कियो विमर्ष विशाल ॥ ४ ॥

दर्शन वीदासर देई, गहि मात आशीष ।
पूरव वत् वर्णन वही, लही विदाई ईश ॥ ५ ॥

ढाल ५

(लय—कीड़ी चाली सासरै रे)

जोधाणे इकाणवे रे करवायो चउमास। तिम उदियापुर बाणमें रे। पूरी जनता प्यास। सुगण जन सांभलो रे। गुरु-जननी आख्यान, सुगण जन सांभलो रे। एक मना इक तान, सुगण जन सांभलो रे ॥ १ ॥ कृपया मालव देश नी रे, करी स्पर्शना स्वाम। बाम हस्त व्रण वेदना रे, उपनी अति उद्दाम ॥ सु० २ ॥ गंगापुर चौमास में रे, क्रम स्यूं वध्यो विकार। भाद्रव मासे मुझ भणी रे, सूंप्यो युवपद भार ॥ सु० ३ ॥ मुनि गण में गण बालहो रे, बलि फुरमायो ताम। छोगां जी नें पास में रे, करवूं हुतुं ए काम ॥ सु० ४ ॥ पिण आयु बल अल्पता रे, लखि युवपद यहाँ दीध। आयु अर्पित आमना रे, कुण स्वीकृत नहीं कीध ॥ सु० ५ ॥ कालू कल्पित कल्पना रे, एहने छोड़ी आन। सिद्ध थई सद्भाव में रे, म्हारो ए अनुमान ॥ सु० ६ ॥ छोगां माटे पूछीयां रे, फुरमायो इम स्वाम। जिम संयम सुख में पलै रे, तिम कीज्यो तुम काम ॥ सु० ७ ॥ जिम उपजै जननी भणी रे, हृदय अति अह्लाद। तिम तूं कीजे बलि २ रे, म्हारो ए संवाद ॥ सु० ८ ॥ छोगाँ मन में तिह समये रे, सांभलतां ए बात। विरह विखिन्न प्रसन्नता रे, समकाले संजात ॥ सु० ९ ॥ भावी बल बलवान है रे, जग ओखाणो एह। स्वर्गवास गुरु नों थयो रे, तेह थी निसंदेह

॥ सु० १० ॥ कहो कुण मन इम जाणतो रे, छोगाँ जी नें छोड़ । स्वर्ग सिधास्ये साहेबो रे, भिक्षुगण शिरमोड़ ॥ सु० ११ ॥ कहो कुण मन इम जाणतो रे, विचरी मालव देश । मील आठ सौ आसरें रे, सुरपुर गमन गणेश ॥ सु० १२ ॥ कहो कुण मन इम जाणतो रे, कुणसी फुणसी एक । वणसी भारत एहनो रे, काल रूप दृढ़ टेक ॥ सु० १३ ॥ कुण जाणी जनु कुण्डली रे, जेता ज्योतिष जाण । सुकुन स्वपन नी वात में रे, पड़स्ये इम भूठाण ॥ सु० १४ ॥ माटै म्हारी वातड़ी रे, सौ वातॉ की एक । टालन हारो को नहीं रे, भावी नो जे लेख ॥ सु०' १५ ॥ जन कहे छोगॉजी हिवें रे, करसी सही संथार । केई कहे संथारो नहीं तो, करस्ये नहींज आहार ॥ सु० १६ ॥ आहार ही करस्ये जो कदा रे, तो पिण कहिवा मात्र । विरह वाण स्यू विंधियो रे, जेहनो सारो गात्र ॥ सु० १७ ॥ लोक हजारॉ नैन सू रे, प्रसस्यो अश्रु प्रवाह । स्वर्गवास सुण स्वाम नो रे, उपनो खेद अथाह ॥ सु० १८ ॥ पिण छाती छोगाँ तणी रे, कहिवी पड़स्ये धन्य । दिल दृढ़ता वाली सती रे, एहवी न मिले अन्य । सु० १९ ॥ अश्रुपात तो आंतरें रे, दिलगीरी पिण दूर । भावी भाव विभावती रे, नहिं फेस्यो निज नूर ॥ सु० २० ॥ सहु जन ने सम-जावणी रे, प्रत्युत्तर करी पिछाण । वाह २ माजी तांहरो रे, पायो जन्म प्रमाण ॥ सु० २१ ॥ माताजी राजी लखी रे, हरख्या सारा लोक । पंचमी ढाले है सही रे । लोक प्रवाह आरोक ॥ सु० २२ ॥

दोहा

गंगापुर चउमास करि, वीदासर में वेग ।
माजी नें दर्शन दिया, लंघी देश अणेग ॥ १ ॥

तब ही अतुल हुलसित मना, वन्दन विधि प्रारम्भ ।
गुण ग्राम नी धोरणी, उच्चै शब्द अदम्भ ॥ २ ॥

मैं धन्या पुन्या महा, अन्य नहीं मुझ ओल ।
सुगुरु सरण्या जो भई, सरिया सारा कोल ॥ ३ ॥

कालू गुरु मुख ना वयण, सयल सुणाया ताम ।
एक एक अनमूल रयण, सयण सुखद अभिराम ॥ ४ ॥

माताजी माता भया, अद्भुत उपनो चैन ।
सारी बातॉ शॉत चित्त, पूछी प्रभु नी ऐन ॥ ५ ॥

कालू गणि म्हारै हता, तेह थी आप सवाय ।
उणायत कोइ बात री, म्हारै रहसी कांय ॥ ६ ॥

कोइ नो पिण चालै नहीं, आयु आगल जोर ।
माटै म्हारै आप ही, कालू गणिवर ठोर ॥ ७ ॥

ढाल ६

(लय—पदम प्रभु नित समरिये)

च्यार वर्ष लग चाह थी, निज शक्ति प्रमाण २ । सेवा साझी महा सती, गणी कालू जाण । अजब छबी छोगॉ तणी ॥ ए आंकड़ी ॥ १ ॥ इक चउमास करावियो, तिम शेषे काल २ ।

वलि २ म्है दर्शन दिया, वय वृद्ध निहाल ॥ अ० २ ॥ साल सित्ताणु लाडणूं, महा मोच्छव धार २। होली चउमासी करी, गढ़ चातुर विचार ॥ अ० ३ ॥ वासीड़ा वीदाण नॉ, इम शब्द उचार २। चाड़वास म्है आविया, आवी खवर तिवार ॥ अ० ४ ॥ माजी सक्त वीमार है, हुवो सोच अपार २। वेनाथे दिन दूसरें, तिम सुण्या समाचार ॥ अ० ५ ॥ तिणहिज दिन ताकीद सूं, सही धूप अपार २। वीदासर जननी भणी, दिया दरश सु प्यार ॥ अ० ६ ॥ दृढ़ परिणामा पचखियो, तेलो तिण दिन्न २। चोला में चित चूंप सूं, वदै विमल वचन्न ॥ अ० ७ ॥ अणसण हिवै अदराइये, करि करुणा स्वाम २। हिवै करवा हित पारणो, नहि मुझ परिणाम ॥ अ० ८ ॥ वहुला कीधा पारणा, नहिं सरियो काम २। अव म्हारो मन उठियो. करूं नूतन नाम ॥ ९ ॥ मुनि अज्ञा पिण इम कहै, इकधार अशेप २। एहवो अवसर दोहिलो, हिवे वेलॉ शेप ॥ अ० १० ॥ चैत्र कृष्ण तिथि सप्तमी, शुभ सायंकाल २। तीन आहार पचखाविया, तुलसी गणपाल ॥ अ० ११ ॥ परम प्रमोद लह्यो सती, वचने न कहाय २। आज सफल जनु मांहरो, इम वोलै वाय ॥ अ० १२ ॥ वात वेग सूं विस्तरी, वहु ग्रामोगाम २। लोक हजारॉ आविया, तिम खामोखाम ॥ अ० १३ ॥ त्याग वैराग वध्यो घणो, चिहुं तीरथ मांह २। स्वमती अन्यमती गृहे, भयो परम उत्साह ॥ अ० १४ ॥ पूछै कोइ माजी भणी, परिणामा-नी वात २। धीमेसी वोलै सती, है अधिक उदात ॥ अ० १५ ॥

क्यांरे मन संशय हुवै, आसे श्वास बे श्वास २। छिन में तनु छबि छाजती। मानु काढ़से मास ॥ अ० १६ ॥ क्यांरे तो बातां करे, जन साजो जेम २। क्यांरे बहु बतलावियाँ, मानुं बोलण नेम ॥ अ० १७ ॥ अद्भुत लीला एहवी, लखी माजी गात २। बीजा में न विलोकिये, जुवो इचरज बात ॥ अ० १८ ॥ चैत्र कृष्ण एकादशी, धुर याम उदार २। सवा सात बजे आसरै, सीझ्यो संथार ॥ अ० १६ ॥ झमकूजी आदे सहु। दियो साझ अपार २। वदनाँजी माजी तणुं, कोइ भव संस्कार ॥ अ० २० ॥ लाड घणो लाडाँ तणो, माजी मन चाव २। चिहुं तीर्थ पर एकसो, तिम वत्सल भाव ॥ अ० २१ ॥ खूमा सती करी चाकरी, करी तन मन झोक २। माजी मन रही खातरी, सहु जाणै लोक ॥ अ० २२ ॥

अंतर ढाल

(लय—एसो जादूपति २, परणवा चाल्या सति राजेमती)

रटो रोज मिती २, धन्य धरा पर छोगाँ सती। सुणिये सुकृति ॥ धन्य० ए आंकड़ी ॥ जेहनी कुखे ज्यूं जिनराज, अवतरियो कालू गणिराज। खाता में जश ख्यात खती ॥ धन्य० १ ॥ तैंयालीस वर्ष गृहवास, तेपन लग करी आतम तलाश। सयलायुः समा षण्वती ॥ धन्य० २ ॥ कर विच ग्रही तप रूप कृपाण, कर्म कटक सह कियो आह्वान। संग सहाय सरव विरती ॥ धन्य० ३ ॥ मासखमण गुणतीसो एक, ए गुण विंशति सतरै स टेक। सोलै चतुर्दश सुकृति श्रुति ॥ धन्य० ४ ॥ ग्यारह

युग पंचोला ग्यार, छव एक चोला सतरै सार । तेला नी पड़ शीति तती ॥ धन्य० ५ ॥ पन्द्रहसै छंयासिय ख्यात, वेला हिवै उपवास नी वात। गुणचालीसै चवदे इती ॥ धन्य० ६ ॥ सयल तपस्या दिन परिमाण, पिचोत्तर सौ नवती पिछाण। साधिक वत्सर इकविंशति ॥ धन्य० ७ ॥ साल सितंतर जेष्ठ ही मास, एकान्तर तप धास्यो हुल्लास। शेप समय लग न हुई क्षती ॥ धन्य० ८ ॥ औपध मात्र ना त्याग तमाम, सेलड़ी वस्तु तजी तिह ठाम। साल छंयासिय थी सुमती ॥ धन्य० ६ ॥ नित्य प्रति एकादश उपरांत, द्रव्य तज्या जननी चित शांत। रही नहीं खाद्य-पदार्थ रती ॥ धन्य० १० ॥ ठंडो खीच पयो दधी घोल, पारणे दिन ग्रहिवू मनु कोल। पुनरपि पचखाण घणी फुरती ॥ धन्य० ११ ॥ पंच दिवस अणसण तिविहार, आराध्यो दिल दृढ़ता धार। एकादशी ग्रही स्वर्ग स्रुती ॥ धन्य० १२ ॥ सूत्र स्वाध्याय करी धरी प्रेम, लाखाॅ नो लहुं लेखो केम। स्मरणी कर विच नित्य रहती ॥ धन्य० १३ ॥ वीदासर स्थिर थाणो थाप, अहो उपकार कियो अण माप। सारो ग्राम करै स्वीकृती ॥ धन्य० १४ इकविंशति धारा पड़विंशति वर्ष, टारी सारी जनता तर्प। किम विसराये सा किरती ॥ धन्य० १५ ॥

ढाल मूल

(लय—पदम प्रभु नित समरिये)

माटै जन वीदाण नाॅ, हुवा अधिक उदास २। स्वर्गवास सती नों लखी, कियो विविध विखास ॥ अ० २३ ॥ इकचाली

खंडी सझी, मंडी महिमाण २। छोगाँ लेवण आवियो, मनु देव विमाण ॥ अ० २४ ॥ ठाट हगाम किया घणा, एह लोकाचार २। पिण लोकोत्तर नो इहाँ, नहिं अंश लिगार ॥ अ० २५ ॥ गुरु-जननी मन नी सहु, थई पूरण हाम २। गुरुवर नी तिम सीखड़ी, थई सफल तमाम ॥ अ० २६ ॥ छोगाँ नों छव ढालियो, रचियो रुचिकार २। गुरु अष्टक सुपसाय थी। 'तुलसी' गणधार ॥ अ० २७ ॥ उगणीसै सताणुवै, मधु मास मझार २। शुक्ल पक्ष बीदासरे, तृतीया रविवार ॥ अ० २८ ॥ जो विस्मृति योगे कही, न्यूनाधिक बात २। मिथ्या दुष्कृत तेह नू, त्रिकरण योगात ॥ अ० २९ ॥

महासतियाँजी श्री छोगाँजी को सिलोको

छोगाँ माता सुख साता नी दाता। माता मरुदेवा ज्यू महि में विख्याता। ख्याता जेहनी दुनियाँ में अखियाता। बाताँ कहिताँ पिण लागै दिन राताँ॥ १ ॥ सारी उमर तो २। छिन्नु वरसाँ री। तेपन वरसाँ निज आतम ने तारी। भारी धारी तप रूपी तरवारी। तनु पांसलियाँ करि न्यारी जी न्यारी ॥ २ ॥ इक गुण तीसाँ नो २। थोकड़ो करियो। इक उगणीसो तिम सतरै अनुसरियो। सोले धोले दिल इक चवदै चारू। कीन्हा इग्यारा बे बारा वारू ॥ ३ ॥ ग्यारह पंचोला २। छवनी इकलासी। चोला सतरे तिम तेला छंयासी। बेला

हेला कर-कर नें वोलाया। ऊपर छंयासी पनरह सै पाया ॥ ४ ॥ अब उपवासाँ नी २। संख्या सुण लीज्यो। ए गुणचालिसै चवेदे गिण लीज्यो। तेले तिविहाराँ अणसण पचखीज्यो। वासर पांचाँ सूं साचे मन सीज्यो ॥ ५ ॥ अव दिन साराँ री २। समचै है गिणती। पिच्योत्तरसैं अरु नवती नी मिणती। जेहना संवत्सर सारा इकवीस। एक मास ना ऊपर दिन तीस ॥ ६ ॥ खाणो पारणे २। ठण्डो खीचड़ियो। साजोसोतो पण खावै नहीं अड़ियो। इण पर खायाँ पिण हुवै गड़वड़ियो। मानो माजी तनु धुर संघयणे घड़ियो ॥ ७ ॥ प्रति दिन गिणती रा २। खाणा द्रव्य ग्यारा। नित-नित वाइसाँ सू कर-कर न्यारा। वचता तेहमाँ पण वे त्रण वेचारा। ग्यारह वरसाँ लग इम इक धारा ॥ ८ ॥ त्यागी कारण में २। औपधि तप टारी। भारी भारी भइ व्याधि जब जारी। पाणीभारी तिम वेदन लकवा री। खांसी कण्डूज्वर टारी परवारी ॥ ९ ॥ साल सितन्तर थी २। धाख्यो एकन्तर। अन्तिम अवसर लग पड़ियो नहिं अन्तर। मध्यं दिन री तिम प्रहराँ निरन्तर। पचखण पचखावण फुरती अभ्यन्तर ॥ १० ॥ नवकरवाली तो २। रहती नित पासे। कर शाखाली तिम वहती प्रति सांसे। गाथा सूत्र वाली सति स विलासे। गणमण गणमण कर गिणती हुल्लासे ॥ ११ ॥ क्यांरे भिक्षु गणि २। भिक्षु गणि भजती। क्यांरे कालू नवकर-वाली सभती। क्यांरे परमेष्ठी पांचाँ सजधजती। क्यांरे विकथा फणकारे ज्यूं तजती ॥ १२ ॥ तीरथ चाराँ सूं २। अति राजी।

तीरथ-स्वामी नी सेवा हद साजी। अति भक्ति हित भाजीजी भाजी। महिमा माजी नी मुलकाँ में छाजी ॥ १३ ॥ वरसाँ छावीसाँ २। थाणो दृढ़ थाप्यो। तो पिण बीदासर जन व्रज नहिं धाप्यो। माता सद्गुण धन आप्यो अण माप्यो। सो पुर वासी वपु मन्दिर में थाप्यो ॥ १४ ॥ मेल्यो माताजी २ अन्तिम हद मोको। केहना दिल में पिण रहियो नहिं धोको। चिणियो 'तुलसी' गणि छव ढालियो ओको। ऊपर सिलोको गूंथ्यो मनु गोखो ॥ १५ ॥

मुनि-गुण वर्णन की ढाल

मुणिन्द मोरा, भिक्षु नें भारीमाल।
वीर गोयम री- जोड़ी रे, स्वामी मोरा ॥
अति भला रे, मोरा स्वाम ॥ १ ॥

मुणिन्द मोरा, आप मांहि तथा गण में जाण।
सुध संजम जाणो तो रे, स्वामी मोरा ॥
रहिवो सही रे, मोरा स्वाम ॥ २ ॥

मुणिन्द मोरा, ठागा स्यूं रहिवा रा पच्चखाण।
बलि अनन्त सिद्धाँ री साखे रे, स्वामी मोरा ॥
समसही रे, मोरा स्वाम ॥ ३ ॥

मुणिन्द मोरा, अवगुण बोलण रा त्याग ।
गण में अथवा बाहिर रे, स्वामी मोरा ॥
विहुँ तणै रे, मोरा स्वाम ॥ ४ ॥

मुणिन्द मोरा, मुनिवर जे महाभाग्य ।
एह मर्याद आराधै रे, स्वामी मोरा ॥
हित घणो रे, मोरा स्वाम ॥ ५ ॥

मुणिन्द मोरा, तीजै पट ऋषिराय ।
खेतसीजी सुखकारी रे, स्वामी मोरा ॥
मुनि-पिता रे, मोरा स्वाम ॥ ६ ॥

मुणिन्द मोरा, सम दम उदधि सुहाय ।
हेम हजारी भारी रे, स्वामी मोरा ॥
गुणरत्ता रे, मोरा स्वाम ॥ ७ ॥

मुणिन्द मोरा, जय जश करण जिहाज ।
दीपगणी दीपक-सा रे, स्वामी मोरा ॥
महामुनि रे, मोरा स्वाम ॥ ८ ॥

मुणिन्द मोरा, गणपति में सिरताज ।
विदेह क्षेत्र प्रगटिया रे, स्वामी मोरा ॥
महाधुनी रे, मोरा स्वाम ॥ ९ ॥

मुणिन्द मोरा, अमियचन्द अणगार ।
महातपस्वी वैरागी रे, स्वामी मोरा ॥
गुण निलो रे, मोरा स्वाम ॥ १० ॥

मुणिन्द मोरा, जीत सहोदर सार ।
भीम जबर जयकारी रे, स्वामी मोरा ॥
अति भलो रे, मोरा स्वाम ॥ ११ ॥

मुणिन्द मोरा, कोदर तपस्वी करूर ।
रामसुख ऋषि रुड़ो रे, स्वामी मोरा ॥
राजतो रे, मोरा स्वाम ॥ १२ ॥

मुणिन्द मोरा, शिव-दायक शिव शूर ।
सतीदास सुखकारी रे स्वामी मोरा ।
गाजतो रे, मोरा स्वाम ॥ १३ ॥

मुणिन्द मोरा, उभय पिथल वर्द्धमान ।
साम राम युग बन्धव रे, स्वामी मोरा ॥
नेम स्यूं रे, मोरा स्वाम ॥ १४ ॥

मुणिन्द मोरा, हीर वखत गुण खान ।
थिरपाल फते सु जपिये रे, स्वामी मोरा ॥
प्रेम स्यूं रे, मोरा स्वाम ॥ १५ ॥

मुणिन्द मोरा, टोकर नें हरनाथ ।
अखयराम सुखरामज रें, स्वामी मोरा ॥
ईश्वरु रे, मोरा स्वाम ॥ १६ ॥

मुणिन्द मोरा, राम शम्भू शिव साथ ।
जवान मोती जाचा रे, स्वामी मोरा ॥
दमीश्वरु रे, मोरा स्वाम ॥ १७ ॥

मुणिन्द मोरा, इत्यादिक वहू सन्त।
वले समणी सुखकारी रे, स्वामी मोरा॥
दीपती रे, मोरा स्वाम॥ १८॥

मुणिन्द मोरा, कल्लू महा गुणवन्त।
तीन वन्धव नी माता रे, स्वामी मोरा॥
जीपती रे, मोरा स्वाम॥ १९॥

मुणिन्द मोरा गंगा नें सिणगार।
जैतॉ दोलॉ जाणी रे, स्वामी मोरा॥
महासती रे, मोरा स्वाम॥ २०॥

मुणिन्द मोरा, जोतॉ महा जश धार।
चम्पा आदि सयाणी रे, स्वामी मोरा॥
दीपती रे, मोरा स्वाम॥ २१॥

मुणिन्द मोरा, शासन महा सुखकार।
अमर सुरी अधिष्ठायक रे, स्वामी मोरा॥
दायका रे, मोरा स्वाम॥ २२॥

मुणिन्द मोरा, दवदन्ती जैयन्ती सार।
अनुकूल वलि इन्द्राणी रे, स्वामी मोरा॥
सहायका रे मोरा स्वाम॥ २३॥

मुणिन्द मोरा, उगणीसै पनरै उदार।
फागुण सुदि तिथि दशमी रे, स्वामी मोरा॥
गाइयो रे मोरा स्वाम॥ २४॥

मुणिन्द मोरा, जय जश सम्पति सार।
बीदासर सुख साता रे, स्वामी मोरा॥
पाइयो रे, मोरा स्वाम॥ २५॥

श्री भिक्षु गणी के गुणाँ की ढाल

(लय—कड़खा)

मेट भवि चरण ले शरण भिक्षु तणो,
मरण को डरण सब दूर भागै।
करण जोगाँ तणी खबर पडियाँ थकाँ,
स्वाम भिक्षु तणी छाप लागै॥ मेट० ॥१॥
बुद्ध के पूज्य भाजन भये भरत में,
पंचमें काल असराल आरै।
सूत्र नें बांचिया ज्ञान में राचिया,
तरण तारण भवी-जीव तारै॥ मेट० ॥२॥
प्रेम सूं पूज रो जाप जपताँ थकाँ,
बीज का चन्द ज्यूं अधिक थाई।
दर्शन कीजिये चरण चित्त दीजिये,
भीजिये ज्ञान वैराग्य मांही॥ मेट० ॥३॥
नाम सुणियाँ थकाँ स्वाम भिक्षु तणो,
हूंस हिया में हष उठै।
और हूँ ओपमा कहा कहूँ भविकजन,
आंगणै दूध को मेह बूठै॥ मेट० ॥४॥

त्याग संसार वैराग मन आण के,
जाण के खायला कवण खोटा ।
सूतर शोधिया ज्ञान प्रमोदिया,
जब छोडिया पाखण्ड जाण खोटा ॥ भेट० ॥५॥
काम एकन्त शिवपंथ को स्वाम के,
देव अरिहन्त को ध्यान ध्यावै ।
आगन्यॉ वारला धर्म की वारता,
कुण अज्ञानी के मन भावै ॥ भेट० ॥६॥
सीख स्वामी तणी शीश राखो सदा,
बीस विश्वॉ तणी बात जाणो ।
जिनवर भाखिया तिम हिज दाखिया,
शंक मन मांहि मत मूल आणो ॥ भेट० ॥७॥
शोध श्रद्धा सली, नाहिं राखी गली,
आकरो एम आचार झाल्यो ।
आप श्री पूजजी व्रत ले शुद्ध हुवा,
शूरवीर साधु भणी मांहि घाल्यो ॥ भेट० ॥८॥
काम करड़ो घणो स्वाम श्रद्धा तणो,
हियै वैसणी दोहिली जाण भाई ।
हिम्मत धारज्यो बात विचारज्यो,
मरदमी राखज्यो मन मांही ॥ भेट० ॥९॥
काल अनादि सूं आप अरिहन्त कह्यो,
आगन्यॉ मांहिलो धम म्हारो ।

निर्वद्य बात ते आगन्याँ मांय छै,
सावद्य काम संसार सारो ॥ भेट० ॥१०॥
वीर गणधर तणी पूज्य भिक्षु तणी,
एक श्रद्धा कछु फेर नाहीं ।
दूसरो मोय बताय द्यो भविकजन,
शुद्ध साधू इण भरत माहीं ॥ भेट० ॥११॥
पूज्य भिक्षु तणा साध अरु साधवी,
वीर गणधर तणी चाल चालै ।
पांचमा काल में चीज चौथा तणी,
भागलाँ रै मन मांहि सालै ॥ भेट० ॥१२॥
हूं आवलो बावलो आय के बैठतो,
बूझतो बोल विपरित बांको ।
"महेश" अरजी करै एम कर जोड़ नें,
हेमजी स्वाम उपकार थाँको ॥ भेट० ॥१३॥
कहे कुगुराँ तणे करम बांध्या घणा,
हेम को मो शिर शीश दावो ।
करज चुकाय द्यूं किशनगढ़ मांय नें,
एक बार बलि फेर आवो ॥ भेट० ॥१४॥
करम कठोर बांध्या घणा चीकणा,
हेमजी स्वाम कूं दुःख दीधो ।
जोख आवै जिके आप कीज्यो हिवे,
पूज्य का चरण को शरण लीधो ॥ भेट० ॥१५॥

श्री भिक्षु गणी के गुणाँ की ढाल

स्वाम भिक्षु परगटे, जग माहे कीरति थई रे।
श्री जिन आणा शिर धरी, वर न्याय वार्ताँ कही रे॥
कही रे स्वाम साचा, अद्भुत वाचा कही रे॥ १॥

आगूंच उत्तराध्ययन में, त्रण आर पंचम मंही रे।
जिन विना शिवपन्थ होसी, सन्त तन्त सही रे॥
सही रे स्वाम साचा, अद्भुत वाचा कही रे॥ २॥

संवत् अठारा तेपना पछै, सूत्र संघ वृद्धि थई रे।
वंक चूलिया माहि वारता, तू जोय प्रत्यक्ष सही रे॥
सही रे स्वाम साचा, अद्भुत वाचा कही रे॥ ३॥

द्वादश मुनि आगे हुता, त्याँ पछै वृद्धि थई रे।
हेम चरण सु वृद्धि कारण, प्रत्यक्ष वयण मिलई रे॥
मिलई रे स्वाम साचा, अद्भुत वाचा कही रे॥ ४॥

स्वाम पारश सारिपा, चिन्तामणी कर लही रे।
भवदधि पोत उद्योत करवा, स्वाम सूरज सही रे॥
सही रे स्वाम साचा, अद्भुत वाचा कही रे॥ ५॥

स्वाम भिक्षु समरिया, उगणीस चवदै मंही रे।
बीदासर चौमास में, जय जश कीरति स्थुई रे॥
स्थुई रे स्वाम साचा, अद्भुत वाचा कही रे॥ ६॥

भजिये निश दिन काळू गणिन्द

(लय—सीता आवै रे धर राग)

भिक्षु शासन अधिक विकासन, अष्टम आसन धार ।
काळू कलिमल राश विनाशन, प्रगटे जगदाधार ॥
भजिये निशि दिन कालु गणिन्द ॥ १ ॥

थलवट देश प्रसिद्ध प्रदेशे, छापर नयर सुजान ।
कोठारी कुल दीपक उदयो, उदयाचल जिम भान ॥ भ० ॥ २ ॥

सज्जन जन मन हरण करंतो, मूलनन्द कुल चन्द ।
छोगाँ अङ्गज रङ्ग सलूणो, जाणक पूनमचन्द ॥ भ० ॥ ३ ॥

उगणीसै तेतीसे वर्षे, प्रभु नो जन्म प्रसिद्ध ।
चम्मालीसे गुरु मघवा कर, पामी संयम ऋद्ध ॥ भ० ॥ ४ ॥

जननी संगे अति उचरंगे, मासी दुहिता साथ ।
चित्त चंगे रस रंगे संयम, पालै स्वामी नाथ ॥ भ० ॥ ५ ॥

अल्प समय में समय निहारी, रहस्य विचारी सार ।
विद्या विविध प्रकारे धारी. कोविद-कुल सरदार ॥ भ० ॥ ६ ॥

छ्यासठ साल डालगणनायक, पद लायकहद पेख ।
लेख एक निजकर थी लिख नें, कियो राज अभिषेक ॥ भ० ॥ ७ ॥

भाद्रवी पूनम पाट विराजत, थाट लगाया स्वाम ।
बाट २ जश कीरति फैली, पुर पुर ग्रामो ग्राम ॥ भ० ॥ ८ ॥

विचर्‌या गणि उपगार करण हित, देश प्रदेश मझार ।
घणा भव्य भवजल थी तारण, करुणा-दृष्टि निहार ॥ भ० ॥ ९ ॥

एकाणुं चौमास करायो, जोधाणै गण ईश ।
अति मण्डाणे दीधी दीक्षा, एक साथ चावीस ॥ भ० ॥ १० ॥
मरुधर तार पधास्या स्वामी, मेदपाट में खास ।
दोय मास विचरी नें कीधो, उदियापुर चौमास ॥ भ० ॥ ११ ॥
तिहाँ पूज्य ना दर्शण कीधा, मेदपाट भूपाल ।
सुण उपदेश सुयश मुख कहियो, लहियो हर्ष विशाल ॥ भ० ॥ १२ ॥
चौमासो उतरियाँ गणपति, त्याँ थी कीध विहार ।
मालव देश पधारण कारण, पक्की दिल में धार ॥ भ० ॥ १३ ॥
च्यार मास अन्दाजे विचस्या, मालव देशे आप ।
जिन मारग दीपायो अधिको, आगम दीपक थाप ॥ भ० ॥ १४ ॥
नवली २ रचना प्रभु नी, देखी जन समुदाय ।
सच वचनामृत पान करी ने प्रमुदित पुर पुर थाय ॥ भ० ॥ १५ ॥
फिर पाछा पधास्या प्रभुजी, मेदपाट शुभ देश ।
वाम हस्त व्रण पीड़ा प्रगटी, रोग मूल सुविशेष ॥ भ० ॥ १६ ॥
काय-कष्ट में पिणगणि कीधो, मजलो मजल विहार ।
गंगापुर चौमास करायो, श्रीमुख वचन उचार ॥ भ० ॥ १७ ॥
अनुक्रमे वहु रोग समुहे, घेस्यो स्वाम शरीर ।
अङ्गअति पीड़ाणो तो पिण, पूज्य मनोबल धीर ॥ भ० ॥ १८ ॥
जिम संग्रामे शूरवीर नर, जूझै अति जूझार ।
तिम वेदन संघाते जूझया, गणपति साहस धार ॥ भ० ॥ १९ ॥
जिम जिन-कल्पिक मुनिवर वेदन, वेदै सम परिणाम ।
तिम तनुव्याधि उदयहुवाँ थी, गिणत न राखी स्वाम ॥ भ० ॥२० ॥

सहनशीलता परम पूज्य नी, निरख २ नर नार ।
चकित थई इम पभणै वहा वहा, धन्य २ जग तार ॥ भ० ॥ २१ ॥
लोक हजारॉ ग्राम ग्राम ना, आव्या दरशन काज ।
परमानन्द लह्यो मन मांही, लख अद्भुत महाराज ॥ भ० ॥ २२ ॥
अल्पशक्तिमें पिण गणिवरजी, शिक्षा अधिक रसाल ।
आपी सन्त सत्यॉ नें सखरी, वचन अमूल्य विशाल ॥ भ० ॥ २३ ॥
भाद्रव शुक्ल तीज दिन मुझ नें भिक्षु गण शिरताज ।
बिन्दु नो सिन्धु कर थाप्यो, आप्यो पद युवराज ॥ भ० ॥ २४ ॥
अति उपगार कियो मुझ ऊपर, गुरुवर गुणमणि धाम ।
किम विसराये तन मन सेती, समरूं आठूं याम ॥ भ० ॥ २५ ॥
सम्वत्सरी नो आप करायो, हर्ष धरी उपवास ।
छट्ठ पारणो कियो प्रभुजी, प्रथम याम सुविमास ॥ भ० ॥ २६ ॥
सायंकाले स्वाम शरीरे, प्रसर्‍यो श्वांस प्रकोप ।
तो पिण समचित सखरो राखी, कियो कष्ट नो लोप ॥ भ० ॥ २७ ॥
पुद्गल खीण पड़तॉ जाणी, पचखायो संथार ।
सरंधी नें समभावे गणिवर, पहुंता स्वर्ग मझार ॥ भ० ॥ २८ ॥
सप्तवीस वत्सर लग कीधी, शासन नी सम्भाल ।
मात-पिता सम चिहुं तीरथ नी, कीधी हद प्रतिपाल ॥ भ० ॥ २९ ॥
चउशत दश दीक्षा निज कर थी, दीधी प्राय:गणिन्द ।
अखिलजक्त में जेहनो अधिको, तपियो भाल दिनन्द ॥ भ० ॥ ३० ॥
गुण गम्भीर धीर धरणी पर, निर्मल गंग सुनीर ।
भञ्जन भीर वीर सम करणी, तरणी तारण तीर ॥ भ० ॥ ३१ ॥

अमृत झरणी शिव निस्सरणी, करणी करण सप्रेम ।
वाणी भ्रम हरणी तसु महिमा, वरणी जावै केम ॥ भ० ॥ ३२ ॥
प्रवल प्रतापी कुमता कापी, धापी सुमता स्वच्छ ।
जन भ्रमता तमता उत्थापी, आपी अद्भुत लच्छ ॥ भ० ॥ ३३ ॥
इत्यादिकगुण गण वत्सल ना, समस्था चित्त अहलाद ।
वह गुण वा प्रभु मोहनी मुद्रा, खिण २ आवै याद ॥ भ० ॥ ३४ ॥
उगणीसै तेराणू वर्षे, द्वितीय भाद्रपद मास ।
अल्प वुद्धि थी गणि गुण गाया, पटधर आण हुल्लास ॥ भ० ॥ ३५ ॥

आचार्य श्री तुलसी के गुणाँ की ढाल

(रचयिता—सोहनलाल सेठिया)

ढाल १

(लय—वधावे का गीत)

जय वदना नन्दन कलुष निकंदन,
गण गगनांगण दिनमणी ।
प्रभु मंगलमय भल पल पल कीरत,
जग में थे वरज्यो घणी ॥ आंकड़ी ॥

प्रभु सूरज सो थांरो तेज तपोवल,
वढ़ती कला सुद चांदणी ।
थांरी संपत तो वड़-शाखा ज्यूं वधज्यो,
दिन दूणी निशि चोगुणी ॥ जय ॥ १ ॥

थांरी ईड़ा ओ पीड़ा जाज्यो देश विदेशाँ,
रहज्यो सुख साता बणी ।
थांरी आभा तो छाज्यो घनघोर घटा ज्यूं,
पावन जन मन भावणी ॥ जय ॥ २ ॥

थांरी रीति ओ नीति प्रीति जीती जागती,
रहज्यो जग आखी अणी ।
थांरी वाणी तो प्राणी प्राणी नस नस में,
बसज्यो रचज्यो ज्यूं मंहदी राचणी ॥ जय ॥ ३ ॥

थांरी यश परिमल महितल महकाज्यो,
भावुक भंवर लुभावणी ।
प्रभु जन-जन जीवन पार लगाज्यो,
बण कर तरणी तारणी ॥ जय ॥ ४ ॥

जय विजय लहीज्यो अमर रहीज्यो,
श्री तुलसी शासन धणी ।
प्रभु गंगाजल सम निर्मला,
ध्रुव ज्यूं रहज्यो गण गणी ॥ जय ॥ ५ ॥

कवित्त

पाट पे विराज राज उन्नति अपार करी,
विद्या को खजानो खूब संघ में बढ़ायो है ।
अणुव्रत आंदोलन तेरह और ग्यारह सूत्री,
योजना चलाके लोक-जीवन उठायो है ॥

देश ओ दिशावरॉं में घूम के हजारों मील,
सत्य धर्म मर्म सही रूप समझायो है।
जन-जन में जैन तत्व सुलभ वणाणे हेत,
आगम को महान कार्य हाथ में उठायो है॥
(रचयिता—सोहनलाल सेठिया)

ढाल २

(रचयिता—सोहनलाल सेठिया)

(लय—मनवा नांय विचारी रे)

जयो तुलसी जयकारी रे, जयो गुरुवर जशधारी रे।
मंगलकारी उग्र विहारी, पर उपगारी रे॥ जयो॥
सुंदर सुरत मंजुल मुरत, मोहनगारी रे।
मीठी बोली हीरॉं तोली, लागे प्यारी रे॥ जयो॥ १॥
महितल में महिमा महकावे, मुनिपति थांरी रे।
कलियुग में रचना सागी, चौथा आरा री रे॥ जयो॥ २॥
नैतिक क्रांति मचाई सारे, जग में भारी रे।
जन-जन मन में ज्योति जगाई, अणुव्रतॉं री रे॥ जयो॥ ३॥
तारण तरण हरण अघ शरण, सदा सुखकारी रे।
शासन नायक मंगल दायक, भव भय हारी रे॥ जयो॥ ४॥
विजय वरो प्रभु थांरी उमर, हुवो हजारी रे।
पट्टोत्सव पर मंगल आशा, म्हॉं सगलॉं री रे॥ जयो॥ ५॥

ढाल ३

(रचयिता—सोहनलाल सेठिया)

(लय—अमर रहेगा धर्म हमारा)

जय तुलसी गण गगन सितारे,
वदनाँ मां के लाल दुलारे ।
मरुधर महि के उज्ज्वल तारे,
झूमर कुल के विमल उजारे ॥
कालू गुरु के शिष्य सुप्यारे,
भैक्षव शासन के रखवारे ॥ जय ॥

मानव मानवता फिर पाये,
प्राण जांय पर प्रण नहीं जायं ।
कलि में सतयुग लहरे लायें,
सत्य धर्म के सबल सहारे ॥ जय ॥ १ ॥

सत्य अहिंसा को अपना कर,
विश्व मैत्री की ज्योति जगाकर ।
जीवन में धार्मिकता लाकर,
तरे स्वयम् फिर जग को तारे ॥ जय ॥ २ ॥

वस्तु सत्य को सब पहचानें,
व्यर्थ विवाद वाद नहीं तानें ।
सत्य सत्य है झूठ झूठ है,
ये अटूट सिद्धान्त हमारे ॥ जय ॥ ३ ॥

सच्ची श्रद्धा हो जन जन में,
अटल आसथा गणिवर गण में ।
तुलसी तव पावन भावन के,
'सोहन' हम सब अमर पुजारे ॥ जय ॥ ४ ॥

मंत्री मुनि श्री मगनलालजी की स्मृति में

दोहा

वयोवृद्ध शासन सुखद, मंत्री मगन महान ।
महा विद छठ मंगल दिवस, कर्‌यो स्वर्ग प्रस्थान ॥ १ ॥
अद्भुत अतुल मनोबली, शासन स्तम्भ सुधीर ।
दृढ़ प्रतिज्ञ सुस्थिर मति, आज विलायो वीर ॥ २ ॥
उदाहरण गुरु-भक्ति को, दिल को वड़ो वजीर ।
सागर-सो गम्भीर वो, आज विलायो वीर ॥ ३ ॥
विनयी विज्ञ विशाल जो, मनो द्रौपदी चीर ।
सफल सुफल जीवन मगन, आज विलायो वीर ॥ ४ ॥
नानक कोठी नहर में, सांझ प्रार्थना सीन ।
सुन सचित्र सारा रह्या, उदासीन आसीन ॥ ५ ॥
रिक्त-स्थान मुनि मगन रो, भरो संघ के संत ।
मगन मगन-पथ अनुसरो, करो मतो मतिवंत ॥ ६ ॥
सुख ! अब कर अनशन सुखे, आज फली तुझ आस ।
हाथाँ में थारै हुयो, वावै रो सुरवास ॥ ७ ॥

ढाल

(लय—माढ़)

मंत्री मुनि मगनेश, थांरी याद सतावै जी ।
बखतो बखत हमेश, थाँरी याद सतावै जी ॥
याद सतावै बलि बलि आवै, धन्नाँ सुत सुविशेष । थाँ० ।
(ध्रुव पद)

शिशु-सो सरल स्थविर-सो दानी, नौजवान सो जोश ।
बालक वृद्ध युवक समकाले, राख रह्यो नित होश । थाँ० १ ।
मघवा महर, डाट डालिम री, कालू-कृत सनमान ।
साठ वरस समभावे सहताँ, पायो मंत्री स्थान । थाँ० २ ।
मधु-सो मधुर, कुटक-सो कड़वो, कोमल ज्यूं अकतूल ।
वज्र कोठर समय लख वरत्यो, सुगुरु- दृष्टि अनुकूल । थाँ० ३ ।
गण गणपति जीवन में कीन्हो, निज व्यक्तित्व विलीन ।
सदा सोचतो रह्यो संघ-हित, अभिनव पद आसीन । थाँ० ४ ।
तहत सिवाय शब्द नहिं कहणो, रहणो संयम राख ।
आचारज जब दे रे ! ओलंभो, आ मंत्री री भाख । थाँ० ५ ।
चोटाँ खमणी सीखो चतुराँ ! बधसी थांरो तोल ।
हिम्मत री किम्मत मत भूलो, ऐ मंत्री रा बोल । थाँ० ६ ।
खिण राजी खिण में नाराजी, गिरगिट का-सा रूप ।
स्वार्थ साधना हित मत ल्यावो, मंत्री वचन अनूप । थाँ० ७ ।

अवनीताँ स्यूं रूंह मत जोड़ो, हो चाहे सागी बाप ।
आचार्यां री मीट आराधो, मंत्री रो इन्साफ । थाँ० ८ ।

करड़ो ही काम पड़्याँ पण सुगणाँ ! मत लोपो गण-लीक ।
गण गणपति है जीवन जामाँ, आ मंत्री री सीख । थाँ० ६ ।

सोवत जागत ऊठत बैठत, शासन-हित रो ध्यान ।
गण गणपति हित प्राण समर्पण, मंत्री रो अभियान । थाँ० १० ।

अद्भुत स्मरण-शक्ति शासन रो, हो जीवित इतिहास ।
सहनसीलता की प्रति-मूर्ति, स्थिरमति दृढ़ विश्वास । थाँ० ११ ।

सुणतो घणी सुणातो थोड़ी, दिल ऊँडो दरियाव ।
अधिक काम कम बात सुहाती, रहता सुघड़ सुभाव । थाँ० १२ ।

इक्काणूं वर्षां री वय में, संयम चउत्तर साल । -
मघवा गणि रो हाथ धरायो, विनय विवेक विशाल । थाँ० १३ ।

काया-कष्ट चउतीस वर्ष लग, सात वर्ष अति घोर ।
सह्यो अटल दिल, रह्यो मनोबल, प्रतिपल, सबल सजोर । थाँ० १४ ।

दो-दो लम्बी यात्रा रो आनन्द लियो थिर ठाण ।
पण तीजी रे बीच अचानक, कीन्हो स्वर्ग प्रयाण । थाँ० १५ ।

सेवक कहूँ (या) सहायक म्हाँरो, सलाहकार मंत्रीश ।
उपकारी अधिकारी गुण रो, "तुलसी" है नत शीश । थाँ० १६ ।

घोर तपस्वी मुनि श्री सुखलालजी के संथारा के उपलक्ष में

ढाल

(लय—ओर रंग दे रे बाल्या ओर रंग दे)

घोर तपसी हो मुनि घोर तपसी,
थांरो नाम उठ उठ जन भोर जपसी ।
घोर तपसी हो 'सुख' घोर तपसी,
थांरो जाप जप्यॉ करमॉ री कोड़ खपसी ।। घोर० ।।
(ध्रुव पद)

दो सौ वरसॉ री भारी ख्यात है बणी,
थांरो नाम मोटा तपस्यॉ रै साथ फबसी ।
ओ अनशन आ सहज समता,
लाखॉ लोगॉ रै दिलॉ में थांरी छाप छपसी ।। घोर० १ ।।

काया पर कुहाड़ी व्हाणी काम करड़ो,
सोरी पाटॉ ऊपर बैठ करणी गपसप-सी ।
तपस्या आतापना स्वाध्याय करणी,
थांरी सेवा भावना रै लारै सारा दबसी ।। घोर० २ ।।

स्वामीजी रो शासण तप संयम री सुरसरी,
इण में न्हावसी जकॉं रो सारो पाप धुपसी ।

आपणै शासण री संतॉ! चढ़ती कला,
इण में घणा ही तप्या है ओ घणा ही तपसी ।।घोर० ३।।

शिखर चढ़्या है और चढ़ता ही रहसी,
गण रो शीश आभै पैर जा पाताल रूपसी ।
इण स्यूं विमुख अवनीत जो हुसी,
वां रै भाग रो भानुड़ो जा छिती में छुपसी ।। घोर० ४।।

संयम जीवन जीवो पंडित मरण मरो,
थांरै दोन्यूं हाथॉ लाडू खावो खुशी रे खुशी ।
लंघी लम्बी यात्रा मंगल फागण वदी,
'सुख' साधना सुखदाई गाई गणी तुलसी ।। घोर० ५।।

दोहा

भद्रोत्तर तप ऊपरै, अनशन दिन इकीस ।
घोर तपस्वी 'सुख' मुनी, साधक ।विश्वावीस ।।
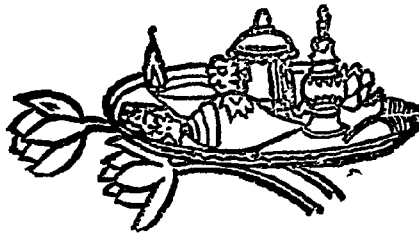
साधु-सतियों को शिक्षा

(लय—पिया दूर देशान्तर जाई नें)

मतिमन्त मुणी, सुकुलीणी हो श्रमणी, गुरु शिक्षा धारिये ।
पश्चिम रयणी, ऊठ-ऊठ अक्षर-अक्षर सम्भारिये ॥ ए आँकड़ी ॥

मुनि पञ्च महाव्रत आदरिया, तजि धण कण कञ्चन परवरिया ।
मनु कञ्चन गिरिवर कर धरिया ॥ मतिमन्त० ॥ १ ॥

पणवीस भावना पांचाँ नी, गिणवाई गुरु गणधर ज्ञानी ।
भावो निज-निज कण्ठे ठानी ॥ मतिमन्त० ॥ २ ॥

नव बाड़ ब्रह्मव्रत नी भाखी, एक कोट नी ओट अजब राखी ।
समरो निशि-वासर दिल साखी ॥ मतिमन्त० ॥ ३ ॥

तेवीस विषय पंचेन्द्रिय ना, बे सय चालीस विकार बना ।
परहरिये पल-पल शुद्ध मना ॥ मतिमन्त० ॥ ४ ॥

हलवै-हलवै मारग हालो, गाडर वत् नीची दृग न्हालो ।
पग-पग धुर समिति सम्भालो ॥ मतिमन्त० ॥ ५ ॥

कटु कर्कश भाषा मति वोलो, बोलो तो वयण रयण तोलो ।
तो लोक उभय भय नहिं डोलो ॥ मतिमन्त० ॥ ६ ॥

बंयालिस एषण दूषणियाँ, तिम पञ्च मण्डला ना भणिया ।
सहु राखो आङ्गुलियाँ गिणिया ॥ मतिमन्त० ॥ ७ ॥

उपयोगे उपधि ग्रहो मूको, पञ्चमी नी जयणा मति चूको ।
गुप्ति त्रय गुप्त सुमग ढूको ॥ मतिमन्त० ॥ ८ ॥

है आठूं ही प्रवचन माता, जो रहिस्ये एह नें सुख साता।
तो नहिं थइस्ये कोई दुखदाता ॥ मतिमन्त० ॥ ९ ॥

विधि-युक्त उभय टक पड़िकमणो, त्रिण दृष्टिए पड़िलेहण करणो।
है पूंजण हेत रजोहरणो ॥ मतिमन्त० ॥ १० ॥

पड़िलेहण पड़िक्कमणो करतॉं, पच्चसि गोचरियें संचरतॉं।
मति वात करो तिम फिर घिरतॉं ॥ मतिमन्त० ॥ ११ ॥

इच्छा-मिच्छादिक जे भारी, कहि दश विध शुद्ध समाचारी।
आचरियें अहो-निशि अनिवारी ॥ मतिमन्त० ॥ १२ ॥

तैंतीशाशातन टालीजै, असमाधिय नो मद गालीजै।
सवला सह मूल उखाड़ीजै ॥ मतिमन्त० ॥ १३ ॥

छल-कपट झूठ में मति रे फंसो, दिल वाहिर मांहि रखो इकसो।
विल पैसत पन्नगराज जिसो ॥ मतिमन्त० ॥ १४ ॥

गुरु-आणा प्राणाधिक जाणो, गुरु-दृष्टिए निज दृष्टि ठाणो।
कोई वात मनोगत मत ताणो ॥ मतिमन्त० ॥ १५ ॥

रयणाधिक मुनि नो विनय करो, अविनय अपलच्छन दूर टरो।
म'करो ललनाजन रो लफरो ॥ मतिमन्त० ॥ १६ ॥

निज अवगुण क्षण-क्षण सम्भारो, पर-गुण सह प्रेम परम धारो।
मन मत्सर टारो परवारो ॥ मतिमन्त० ॥ १७ ॥

गणि-गण स्यूं राखो इकतारी, प्रीतड़ली पय-साकर वारी।
तिम उद्धरसे आतम थॉंरी ॥ मतिमन्त० ॥ १८ ॥

गृह मूक्यो मुनि जिह वरागे, ग्रही दीक्षा गुरु-कर बड़भागे।
तिम पालण प्रेम रखो सागे॥ मतिमन्त०॥ १६॥

परिषह थी मन मति कम्पावो, सज्झाय, झाण प्रतिपल ध्यावो।
शासण नी महिमा सहु गावो॥ मतिमन्त०॥ २०॥

चतुरधिक पञ्चशय मुनि श्रमणी, गुरु-चरणाँ मानै मौज घणी।
सरदारशहर छवि खूब बणी॥ मतिमन्त०॥ २१॥

श्रावकों को शिक्षा

(लय—दुलजी छोटो-सो)

श्रावक! व्रत धारो
निज जीवन-धन सम्भारो रे॥ श्रा०॥

जैनागम रहस्य विचारो रे,
श्रावक! व्रत धारो।
क्षणिक-विषय-सुख खातिर आतुर,
मानव-भव मत हारो रे॥ श्रा०॥नि०॥आं०॥

अव्रत-नाला बहै दृग चाला,
रोकण मारग बाँरो रे।
आतम रूप तलाव नाव स्यूं,
करण करम-जल न्यारो रे॥ १॥

हिंसा, वितथ, अदत्त, विषय-रस,
लोभ क्षोभ करणारो रे।
निज मन्दिर में है ये तस्कर,
खोज मिटावण ऑरो रे॥ २॥

ईर्ष्या, द्वेष, असूया, मत्सर,
मेटण क्लेश करारो रे।
कलुषित-हृदय कलह स्यूं दूषित,
अपणी वृत्ति सुधारो रे॥ ३॥

मुक्ति-महल री पञ्चम पेड़ी,
नेड़ी नजर निहारो रे।
महावीर सन्तान स्थान थे,
कायरता न सिकारो रे॥ ४॥

निरय तिरय गति निगम निरोधो,
व्यन्तर असुर विसारो रे।
ज्योतिषी ऊपर वैमानिक सुर,
सीधा डेरा डारो रे॥ ५॥

धन्य जघन्य समय शिव संभव,
तीन भवॉं निस्तारो रे।
आत्मानन्द अमन्द अपूरव,
व्रत-वैभव विस्तारो रे॥ ६॥

त्याग नाग नहीं सिंह बाघ नहीं,
माग नहीं भयवारो रे।
हृदय-विराग भाग जागरणा,
क्यूं कम्पै दिल थांरो रे॥ ७॥

'चित्त-प्रधान' 'पूणियो श्रावक,'
श्रावक कुल उजियारो रे।
'आणन्दादि' उपासक वरणन,
सप्तम अङ्ग सुप्यारो रे॥ ८॥

'शङ्ख-पोखली' भगवती सूत्रे,
'सुलसॉ' नाम चितारो रे।
राणी चेलणा जबर जयन्ती,
ज्यूं निज जीवन तारो रे॥ ६॥

भिक्षु-रचित बारह-व्रत चौपी,
विस्तृत रूप विचारो रे।
दृग्-गोचर अथवा श्रुति गोचर,
कर-कर आत्म ऊद्धारो रे॥ १०॥

उगणीसै निन्नाणूं वर्षे,
चूरू पावस प्यारो रे।
प्राणाधिक निज व्रत सम्पत्ति नें,
'तुलसी' सदा रुखारो रे॥ ११॥

श्रावकों को उपदेश

(लय—बाबरे री रोटी पोई)

वड़ भाग स्यू मिल्यो श्रावकाँ, थाने दिव्य प्रकाश है।
करणी करणी है सो करल्यो, लाग रह्यो चौमास है॥ आंकड़ी॥

अवसर आच्छो चौमासा रो, धर्म धान धन निपजावै।
जावै देशावर धन खातर, धान उगावण हल वावै॥
धर्म लाभ अब खूब कमावो, संता रो सहवास है।
करणी करणी है सो करल्यो, लाग रह्यो चौमास है॥ १॥

जैन मुनि रो आज पछै है, चार महीना थिर वासो।
कहीं साधु कहीं रहे साधव्याँ कहीं गुराँ रो चौमासो॥
वर उपदेश झड़ी स्यू हरसी, भवि-चातक मन प्यास है।
करणी करणी है सो करल्यो, लाग रह्यो चौमास है॥ २॥

सुणो नित्य व्याख्यान ध्यान स्यू भावो पावन भावना।
और करो निरवद्य दलाली, जो संता रे चावना॥
कल्पाकल्प अशुद्ध शुद्ध रो, ध्यान राखणो खास है।
करणी करणी है सो करल्यो, लाग रह्यो चौमास है॥ ३॥

जाण देव गुरु धरम मरम नै, तत्वाँ री पहचान करो।
सीखो तत्व प्रवेश-दीपिका, सही अर्थ रो भान करो॥
श्रद्धा ज्यू मजबूत वणै, आवश्यक ज्ञान अभ्यास है।
करणी करणी है सो करल्यो, लाग रह्यो चौमास है॥ ४॥

धारो चरचा बोल थोकड़ा, गहन ज्ञान है भावाँ रो ।
करो सुजन संकोच मेटकर, समाधान शंकावाँ रो ॥
आखिर तो आचारज की बाणी पर दृढ़ विश्वास है ।
करणी करणी है सो करल्यो, लाग रह्यो चौमास है ॥ ५ ॥

रात्रि भोजन वर्षा ऋतु में, हर दृष्टि स्यूं त्याज्य है ।
ब्रह्मचर्य और त्याग सचित रा, धर्म अंग अविभाज्य है ॥
छोड़ो बाईसकोप सिनेमा, रमो न चोपड़ तास है ।
करणी करणी है सो करल्यो, लाग रह्यो चौमास है ॥ ६ ॥

प्रातः सायं करो प्रार्थना, बनणाँ पाँच पदाँ री थे ।
दर्शन सामायक मत भूलो, राखो रीत सदा री थे ॥
बड़ी तपस्या और मंड़ावो, बारी रा उपवास है ।
करणी करणी है सो करल्यो, लाग रह्यो चौमास है ॥ ७ ॥

नवकरवाली आत्म चिंतना, सखर अणुव्रत साधना ।
करो ध्यान स्वाध्याय चितारो, चौवीसी आराधना ॥
भैक्षव शासन खिल्यो कानपुर, 'तुलसी' दिल सौलास है ।
करणी करणी है सो करल्यो, लाग रह्यो चौमास है ॥ ८ ॥

श्री झमकूजी महासतियाँजी के गुणाँ की ढाल

(लय—धन जननी छोगां०)

सैंतीस वर्ष लग, साधूपण पाल्यो झमकूजी सती ।
निज संयम जीवन, आछो उजवाल्यो झमकूजी सती ॥
॥ ए आंकड़ी ॥

चम्मालीसैं रतननगर में, हिरावतॉ घर जामी ।
ससुरालय चूरू का पारख, उभय पक्ष जग नामी जी ॥ १ ॥
पैंसट्ठै डालिम गणिवर कर, संयम भार लहायो ।
शहर लाडणूं मॉही छेहड़ो, भवसागर को पायो जी ॥ २ ॥
कानकँवरजी संगे छयासठ, इकोतरै चोमासो ।
बाकी कालू चरण शरण मे, सदा कियो सुखवासो जी ॥ ३ ॥
कालू गुरु की करुणा दृष्टि, पल पल भल आराधी ।
आनन्दित चित्त प्रभु परिचर्य्या, सदा सवाई साधी जी ॥ ४ ॥
इंगित अरु आकार सुगुरु ना, विरला समझण पावै ।
सति झमकू री आ अधिकाई, कहो कुण जन विसरावै जी ॥ ५ ॥

अन्तर ढाल

(लय—वधज्यो रे चेजारा थांरी बेल)

वचन-मधुरता झमकू वदन मझार,
कांई जाहिर सकल समाज में जी म्हांरा राज ।
हृदय निडरता दिल दाठीक अपार,
नहीं मान मरोड़ मिजाज में जी म्हांरा राज ॥ ६ ॥

हाथ कुशलता चातुरता चित चंग,
कांई निर्मल निज आचार में जी म्हांरा राज ।
सुगुरु भक्ति में झमकू शक्ति सुरंग,
अनुरक्तिय तीरथ च्यार में जी म्हांरा राज ॥ ७ ॥
सहनशीलता कारण में अणपार,
कांई दृढ़ता नियम निभाण में जी म्हांरा राज ।
केतो कहिये झमकू विनय उदार,
'तुलसी' दिल गुणि गुण गण में जी म्हांरा राज ॥ ८ ॥

ढाल मूलकी

(लय—पूर्वोक्त)

सुगुरु सेवा करतॉ करतॉ गङ्गापुर पुर मांही ।
बोझ काम बगशीस संघाते, सब भोलावण पाई जी ॥ ६ ॥
कालू गुरु सम मम सेवा में, ग्रामो ग्राम विहारी ।
परम हर्ष दश वर्ष आसरै, रहीजु साताकारी जी ॥ १० ॥
दोय हजार दोय की संवत्, मास आषाढ़ मझार ।
अकस्मात तनु आमय उपनो, उपनो अधिक विचार जी ॥ ११ ॥
गात्र-कम्प ज्वर अरु बेचैनी, खबर थयॉ तिह वार ।
मैं मन्त्री बंधव मुनि संगे, दर्शन दिया सुप्यार जी ॥ १२ ॥
तर तर रोग बढ़ाव ही पाम्यो, दूजे दिन द्वय बार ।
दर्शन दे महाव्रत उचराया, श्रद्धया भर हूंकार जी ॥ १३ ॥

मध्याह्ने आषाढ़ कृष्ण छठ, परम समाधी पाम।
आराधक पद पण्डित मरणे, समवसरी सुर धाम जी ॥ १४ ॥
वदनाजी लाडॉजी आदि, सकल सत्याँ नो साज।
वड़ो अनोखो मोको पायो, वाह सतियाँ सिरताज जी ॥ १५ ॥
दूजे दिन शार्दूलपुर पुर में, भर परिषद रे मांय।
'तुलसी' गणपति सति गुण वर्णन, कीन्हा मन हुलसाय जी ॥ १६ ॥

खिण मात्र सुख

(लय—लाल हजारी रो जामो विराजै चढ़वा तुरगी घोड़ा रे)

सुख खिण मात्र कह्या जिन स्वामी, दाख्या दुःख बहु कालो रे।
अनर्थ खान मुक्ति ना वैरी, काम भोग मोह जालो रे ॥
काम किम्पाक समा जिन भाख्या, दुःख अनन्ता ना दाता रे।
परिचय काम वंच्छा परहरिये, जो चहिये सुख साता रे ॥ १ ॥
घोर नरक ने विषै पड़े जे, पाप कर्म करतारी रे।
आरज उत्तम धर्म आचरै, सुर शिव गत सुख भारी रे ॥ २ ॥
अघ उपलेप लगै भोगी रै, अभोगी तो नाहीं लेपायो रे।
भोगी संसार में भ्रमण करै छै, भोग तजे थी मुकायो रे ॥ ३ ॥
न करै कंठ छेदन अरि जेहु, अनरथ तेहु विशेषो रे।
करै पोता नी दुष्ट आतम कर, तेम तुमे जाणेसो रे ॥ ४ ॥
अष्टमो वारमो पट खण्डाधिप, लक्ष्मण कृष्ण मुरारो रे।
विषय थकी दुःख तीव्र नरक ना, अति दोहिलो छुटकारो रे ॥ ५ ॥

रे जीव! मित्र तूंहिज तिहारो, तूं ही शत्रु दुरजनो रे।
आतम वैतरणी नें कुलसॉवली छै, कामधेनु नन्दन वनो रे ॥ ६ ॥
निर्मल ध्यान सज्भाय करै मुनि, अपापकारी भावै रे।
पूर्व-कृत मल दूर करै जिम, कंचन अग्न तपावै रे ॥ ७ ॥
स्त्री संसर्ग विभूषा तन नी, सरस भोजन वले तेमो रे।
आतम गवेषी पुरुष अछै तसु, तालपुट विष जेमो रे ॥ ८ ॥
स्त्री पशु पण्डग सहित सज्भासन, दाता ऊणोदरी जोगो रे।
तसु चित्त राग शत्रु ने विदारण, औषध करै जिम रोगो रे ॥ ६॥
निन्द्रा भणी बहु मान न देवै, हास्य विषै नहीं माता रे।
रमै नहीं मॉहो मॉह कथा करै, मुनि रहै सज्भाय में राता रे ॥१०॥
श्रमण धर्म विषै जोग वर्तावै, अत ही उत्साह सहितो रे।
यति-धर्म विषै जुगत छतो मुनि, पामै धर्म पुनीतो रे ॥ ११ ॥
वाहन सकटादि वहता उलंघै, अटवी विषम कंतारो रे।
ज्यूं प्रवर योग विषै वहतो मुनीश्वर, शीघ्र उलंघै संसारो रे ॥ १२ ॥
उगणीसै षटवीस पोह विद, पूनम निशा सुविचारो रे।
पिछम जाम री जोड़ करी ए, जयजश हर्ष अपारो रे ॥ १३ ॥

खिम्याँ धर्म

(लय—वैरागे मन वालियो)

खिम्यॉ धर्म पहिलो खरो, इम भाख्यो जगदीशो रे।
जो सुख चाहवो जीव नो, मत करज्यो कोई रीसो रे ॥
खिम्यॉ कियॉ सुख पामिये ॥ १ ॥

कलह करे आछी नहीं, लड़ताँ लिछमी न्हासै रे ।
दुःख दारिद्र घर में धसै, गुण रा पुंज विणासै रे ॥ खि० २ ॥
कोई वचन करड़ो कहै, अथवा आघो नें पाछो रे ।
खिम्याँ कियाँ तिण जीव रै, आगे ही फल छै आछो रे ॥ खि० ३ ॥
कूंजड़ ज्यूं लड़वोकरै, नीच घराँ रा वागा रे ।
ते किस्या मिनखाँ में मिनख छै, त्यांने पहरयाँ ही कहिजै नागा रे॥४॥
रीस कटारी ले मरै, फांसी लेवैं छूरी खावै रे ।
केई कुवा वावड़ी पड़ै, केई प्रदेशाँ उठ जावै रे॥ खि० ५ ॥
वाप वेटो सासु वहु, गुरु चेलो नें गुरु भाई रे ।
क्रोध तणे वश उछलै, न गिणै नेड़ी सगाई रे॥ खि० ६ ॥
गुरु माईत गिणै नहीं, अवनीत अवगुण-गारो रे ।
छांदे चालैं आपणैं, विरच्याँ करैं विगाड़ो रे॥ खि० ७ ॥
गुरु काढ़ैं गच्छ वाहिरे, वाप काढ़ैं घर वारैं रे ।
लोकाँ में फिट फिट हुवै, यूं ही नर भव हारैं रे॥ खि० ८ ॥
पण्डित ही क्रोधे चढ़ै, कहिये वाल अज्ञानी रे ।
नीच चण्डाल नी उपमा, दीधी छै केवल ज्ञानी रे॥ खि० ९ ॥
घर में एक क्रोधी हुवै, सगलाँ ने तलतलावै रे ।
जिण घर में क्रोधी घणा, तिणरो दुःख किम जावै रे॥ खि० १०॥
तप जप कोड़ पूरव तणो, क्रोधी खिण में खोवै रे ।
ते खिम्याँ कियाँ जश गुण वधै, ते पंथ विरला जोवै रे॥खि० ११॥
वूढ़ो ही विड़तो रहै, लखन छोराँ रा थावै रे ।
वालक ही खिम्याँ कियाँ, वड़ो माणस कुहावै रे॥खि० १२॥

तप जप सर्व ज्ञुध सोहिलो, पिण स्वभाव मारणो दोरो रे।
पर नें परचावै घणो, पिण आपो खोजै तै थोड़ा रे ।।खि० १३।।
गाल वरतीजै राड़ में, पिण लाडू नांय वंटीजै रे ।
वाहला पिण वैरी हुवै, इसड़ो काम न कीजै रे ।।खि० १४।।

उपदेश सोली

(लय—चेत चतुर नर कहै तनै सतगुरु०)

ऊंचै कुल में आय उपनो, पूरी भल इन्द्री पाई ।
इसड़ो अवसर अति ही दुर्लभ, वीर कह्यो सूतर माहीं ।।
अहो भव प्राणी उलट आणी, करल्यो करणी भव तरणी ।
सुध साधाँ री सेवा सारो, भावना भावो भव हरणी ।। १ ।।
दरखत पर बैठे पंखी दल, भोर भये जब उठ चलते ।
मानव भव का ऐसा मेला, फिर ने पाछा कब मिलते ।। २ ।।
पन्थ सराय में बैठे पंथी, भोर भये जब उठ चलते ।
मानव भव का ऐसा मेला, फिर ने पाछा कब मिलते ।।अ० ३।।
हटवाड़े का मेला होवै, कानी कानी उठ चलते ।
मानव भव का ऐसा मेला, फिर ने पाछा कब मिलते ।। ४ ।।
पारबती ने अरची पूजी, पाणी माहें डबकाते ।
या जग की महिमा है ऐसी, पीछे पापी पिछताते ।। ५ ।।
सुध साधाँ री संगत कीधाँ, अलगी हुवै घट आवरणी ।
पुन्य पाप की आवै परगट, ओलखणा भव उद्धरणी ।। ६ ।।

काच चुड़ी जिम काया काची, माखण नी पर विघरणी ।
आछी आछी वात आराधो, अमरापुर में अवतरणी ॥ ७ ॥
हिंसा किया वहु दुःख होवै, ते अंशमात्र नहीं आदरणी ।
दया भाव राखो दिल मांही, कर्म सकल की कातरणी ॥ ८ ॥
जन्म मरण री वातां जिनजी, दाखी छै अति ही डरणी ।
हलुकर्मी सुण सुण ने कॉप्या, कीधी भल उत्तम करणी ॥ ९ ॥
गजसुकुमाल नेमीश्वर भेट्या, कही कथा भव उद्धरणी ।
संयम लेने कारज सास्या, वनिता जाणी वैतरणी ॥ १० ॥
जम्बुकुमरजी महा जोरावर, परहर दी आठे परणी ।
चरम केवली जग में चाहवा, अधिकी कीरति उच्चरणी ॥ ११ ॥
धन २ धन्नो काकन्दी नो, तज दीधी वत्तीस तरुणी ।
उत्कृष्टी तपस्या तिण कीधी, वीर जिणन्द मुख सूं वरणी ॥ १२ ॥
इत्यादिक वहुला उद्धरिया, आखंतां पार नहीं आवै ।
लीधा मानव भव का लाहा, जपियॉ गुण सुधगत जावै ॥ १३ ॥
ए उपदेश हिया में आणी, ध्यान शुक्ल हिरदै धरते ।
पुन्य पाप नें देवै टाली, ते तो भव सायर तिरते ॥ १४ ॥
संवत् अठारै पैंसठ वर्षे, वद वैशाख पॉचू वरणी ।
शुक्रवार नें शहर फतेहपुर, ढाल कही ए मनहरणी ॥ १५ ॥
चन्द्रभाण कहे मनरंगे, उपदेश सोली ए उद्धरणी ।
पढ़ियाँ गुणियाँ सम्पत पावै, शिव गति नी छै नीसरणी ॥ १६ ॥

विमल विवेक

विमल विवेक विचार नें रे, आतम वश कर आप ।
मन संकोचै मॉहिलो रे, तो मिटै कर्म नी ताप ।
सखर गुण सागरु, उर संवेग धरिये रे ॥ १ ॥
सुगुण सुज्ञानी मानवी रे, पण्डित जे बुद्धिवान ।
इन्द्रयॉ दमै आतम वश कर रे, विवेक दीप घट आण ।
सुगुणा साधजी, वर समता वसावो रे ।
कर करणी कर्म काट नें, अमरापुर जावो रे ॥ २ ॥
पूरव कर्म बांध्या तिके रे, उदै आवै किण वेर ।
सम परिणामॉ भोगवी रे, लीजै चित नें घेर ॥ सु० ॥ ३ ॥
ए देही मुझ काच-सी रे, जिम पींपल नो पान ।
डाभ अणी जल बिन्दुवो रे, जिम कुंजर नो कान ॥ सु० ॥ ४ ॥
ऊपर दीसै ओपती रे, सुन्दर तन सिणगार ।
अन्तर अशुच थकी भरी रे, मूरख मत कर प्यार ॥ सु० ॥ ५ ॥
रोगादि तन आवियॉ रे, समभावे सहै शूर ।
जिनकलपी गजसुकुमाल नें रे, कीजै याद जरूर ॥ सु० ॥ ६ ॥
सालभद्र धन्नो मुनि रे, चक्री सनतकुमार ।
चौवीसमा जिन आददे रे, कहितॉ किम लहूं पार ॥ सु० ॥ ७ ॥
वॉ कष्ट सह्या उज्ज्वल मने रे, तो म्हांरी सी बात ।
ए राग द्वेष वश मानवी रे, पापे पिंड भरात ॥ सु० ॥ ८ ॥

दश लाख योद्धा जीत नें रे, शूर कहाव जेह ।
एक आतम जीतै आपरी रे, ते अधिको गुण गेह ॥ सु० ॥ ६ ॥
काम कटुक किम्पाक-सा रे, शिव-सुख ना अरि जेह ।
हेतु नरक निगोद ना रे, मत कर तिण स्यू नेह ॥ सु० ॥ १० ॥
भोग भयङ्कर जिन कह्या रे, जेहवा जाण फणिन्द ।
विघ्न क्लेश ना दायका रे, तजिये तेह मुणिन्द ॥ सु० ॥ ११ ॥
तीव्र मोह उदै आवियाँ रे, वश करवा ना उपाय ।
उभय कह्या जिनरायजी रे, अहो निशि याद अणाय ॥सु०॥१२॥
उपवास वेलादि तप करै रे, भूख तृषा सी ताप ।
तन शृङ्गार निवारतॉ रे, कष्ट करै बहु आप ॥ सु० ॥१३ ॥
बाह्य एह उपाय छै रे, भीतर मन संकोच ।
क्रोध चौकड़ी नैं दमे रे, टालै आतम दोष ॥ सु० ॥ १४ ॥
भावै बहु विध भावना रे, ध्यान धरै दिन रैन ।
मद आठूई मार नं रे, खपावै कर्म श्रेण ॥ सु० ॥ १५ ॥
विविध वैराग्य नी वारता रे, हिये वसावै एम ।
धिक्कार मन चञ्चल भणी रे, आतम वश करूं केम ॥ सु० ॥ १६ ॥
तीव्र मोहणी कर्म नी रे, मोटी है मतवाल ।
दुर्गति जाताँ जीवरै रे, वधै बहु जंजाल ॥ सु० ॥ १७ ॥
सूक्ष्म बुद्ध सू पेखिये रे, शब्द रूप रस गंध फाश ।
ए सर्व बन्धक पांच छै रे, मत करो तेहनी आश ॥ सु० ॥ १८ ॥
मनोगम पांचूं देख नें रे, दिल आणै बहु राग ।
द्वेष धरै भूण्डा मफै रे, तो लागै कर्म नो दाग ॥ सु० ॥ १६ ॥

आपो परवश जेहवो रे, कदेय न करणो काम ।
मन समझावै माँहिलो रे, ते चतुराई ताम ॥ सु० ॥ २० ॥
मन नी लहर मिटायवा रे, एहिज करै अभ्यास ।
विमल विवेक विचार नें रे, तुरत टूटै मोह पाश ॥ सु० ॥ २१ ॥
सोवत बैठत उठताँ रे, सम परिणाम रहन्त ।
मानसिक दुःख मेटिया रे, ते मोटा मतिमन्त ॥ सु० ॥ २२ ॥
ए पुद्गल सुख छै कारमा रे, तेहनें जाण असार ।
सुगन्ध दुगन्ध जिन कह्या रे, दुगन्ध सुगन्ध धार ॥ सु० ॥ २३ ॥
चिन्ता रूंख प्रमाद छै रे, ते कापण ने कुहाड़ ।
ध्यान सज्झाय सिद्धन्त थी रे, मूल थी न्हाखै उपाड़ ॥ सु० ॥ २४ ॥
को करै प्रशंसा तांहरी रे, मत आणी मन रीझ ।
निन्दा शब्द सुणी करी रे, तिण ऊपर मत खीझ ॥ सु० ॥ २५ ॥
औगुण देखी पारका रे, क्रोध करी मत खीज ।
अवर तणा सुख देखने रे, डीलाँ तूं मत छीज ॥ सु० ॥ २६ ॥
स्वर्ग तणा सुख कारमा रे, पाम्यो बहुली बार ।
रुलियो नर्क तिर्यञ्च में रे, सही घणेरी मार ॥ सु० ॥ २७ ॥
लघुता पद बहु पावियो रे, पायो पद नरेश ।
एहवो तत्व विचार नें रे, सूं अहङ्कार करेस ॥ सु० ॥ २८ ॥
जन्म मरण री वेदना रे, गर्भ वेदन असमान ।
अशुचि भखी दिन काढ़िया रे, कांय करै तोफान ॥ सु० ॥ २९ ॥
ए मारग पायो जिन तणो रे, श्रद्धा आई हाथ ।
सफल जमारो छै सही रे, ए पाया गणिनाथ ॥ सु० ॥ ३० ॥

ए मारग साचो अछै रे, श्रेष्ठ अने परधान ।
उत्तम दायक मोक्ष नो रे, कलङ्क रहित अमाम ॥ सु० ॥ ३१ ॥
निशल्य अने निरलोभता रे, कर्म खपावण हार ।
मारग जावा मोक्ष नो रे, एहिज छै आधार ॥ सु० ॥ ३२ ॥
सन्देह रहित निश्चल अछै रे, सर्व दुःख भांजण भूर ।
ए मारग स्थित मानवी रे, सिझस्ये अरि नें चूर ॥ सु० ॥ ३३ ॥
लोकालोक विलोकस्ये रे, कलह दावानल छोड़ ।
अन्त करस्ये सर्व दुःख तणो रे, ए मारग सिर मोड़ ॥ सु० ॥ ३४॥
एहवो शासण पावियो रे, ए पाया गणिराज ।
भव सागर में डूबताँ रे, मिलिया तारन ज्याज ॥ सु० ॥ ३५ ॥
शरणे आया जे मानवी रे, लहस्ये सुख अपार ।
हिवड़ाँ पञ्चम काल में रे, आप तणो आधार ॥ सु० ॥ ३६ ॥
जिन नहीं जिन सारखा रे, जाहिर तेज दिनन्द ।
शरणै आयो आपरै रे, ए मुझ हुवो आनन्द ॥ सु० ॥ ३७ ॥
भिक्षु भारीमाल ऋषरायजी रे, जयगणी चौथे पाट ।
तास प्रसादे छै मुझे रे, नित्य नवला गह घाट ॥ सु० ॥ ३८ ॥
उगणीसै वाईस में रे, श्रावण सुद दूज कहीस ।
सरूप शशि प्रसाद थी रे, लाडणूं विश्वावीस ॥ सु० ॥ ३९ ॥

क्रोध रो नशो

(लय—मन्दिर में कांई ढूंढ़ती फिरै)

छोड़ो क्यूं कोनी क्रोध रो नशो ।
थारी आंख्यॉ में लोहि रो उफाण ॥
थांरी अक-बक बकणै री पड़गी बाण ।
दूजॉ नें कालै नाग ज्यू डसो ॥

क्रोध बड़ो दुर्गुण दुनियॉ में घट-घट में वसनारो ।
जिण घट में नहीं क्रोध निवासी, वो नर जगत सितारो ॥ १ ॥
पंचेन्द्रिय प्राणी री यद्यपि, करै न कतल विचारो ।
तदपि कषायी नाम कुपित रो, आगम-वचन निहारो ॥ २ ॥
प्रेम परस्पर दर पीढ्यॉ रो, शिष्टाचार सदा रो ।
खिण भर में तिणखै ज्यूं तोड़ै, एक वचन कहि खारो ॥ ३ ॥
गाली सुण्यॉ न हुवै गूमड़ा, छिदै न अवयव थांरो ।
थे ज्यो सह्स्यो समभावॉ स्यूं, तो बो पिछतावण हारो ॥ ४ ॥
गालीवान कठै स्यूं ल्यासी, मांग मधुर वच प्यारो ।
थे तो मृदुल, मनोहर भाषी, अपणो विरुद विचारो ॥ ५ ॥
जठै क्रोध है, अहंकार री नियमॉ तजै न लारो ।
सुण दृष्टान्त 'सन्त धोबी रो' मन री रीस उतारो ॥ ६ ॥
'विफल कियो कुल पुत्र रोष, ज्यूं झट बारह वर्षां रो' ।
साची क्षमा धरै उर 'तुलसी' होवै सफल जमारो ॥ ७ ॥

कलह में मति राचो

(लय—बगीची निम्बुवां की)

कलह में मति राचो।
है कलह कलुष री खाण॥

छोटी-छोटी बात में कर लेवै खींचाताण।
रूप कदाग्रह रो रचै, ए झगड़े रा अहलाण॥ १॥

वदन वचन अनुचित वदै, नहीं वश में रहै जबान।
कर्तव्याकर्तव्य रो, सहु भूलै क्रोधी भान॥ २॥

मात, तात, गुरु, भ्रात रो, है जग में जो सम्मान।
कलही कलकल तो करै, इक छिन में ही अपमान॥ ३॥

अकलह में हुवै एकता, रहै जग में सुन्दर शान।
कलहकार घर-घर लड़ै, उभय 'सेठ आख्यान॥ ४॥

घर खोवै घर रो कलह, तिम देश राष्ट्र पहिचान।
संस्था, दल, सोसाइटी, है लड़ने में नुकसान॥ ५॥

कलहप्रियता परिहरो, सुन सद्‌गुरु रो फरमान।
'तुलसी' भव-सागर तरो, नजदीक करो निर्वाण॥ ६॥

काया री चञ्चलता

(लय—भूरिये रा काका)

रोको काया री चंचलता नै थे श्रमण सती ।
होसी जोगाँ पर काबू पायाँ ही नेड़ी मुगती ॥

काया री प्रवृत्ति हरदम चालती रहै है ।
सन्ताँ ! चंचलता नै रोकै माता काया-गुपति ॥ १ ॥

काया वश में करणी बात मामूली नहीं है ।
पूरी आतमा में चाहिजै संयम री शगति ॥ २ ॥

सब से पहली काया रो निरोध है जरूरी ।
(अठै) 'ठाणेणं मोणेणं झाणेणं' री जुगती ॥ ३ ॥

मन रै पाप री तो शुद्धि हुवै प्राय मन स्यूं ।
झटकै मोटो दण्ड दिरावै आ काया री गलती ॥ ४ ॥

कछवो रहवै जद अपणी इन्द्रयाँ नै संकोच कै ।
तो फिर पाप स्यालियै रो जोर चलै नाँ रति ॥ ५ ॥

काया-शेर ने तो आछो पींजरे में राखणो ।
ओ तो खुलो छोड़ताँइं करदै कीं न कीं क्षति ॥ ६ ॥

मन रो पाप मन ही जाणे वाणी रो सुणणियाँ ।
पण आ काया तो कर देवै है हजाराँ री कत्ती ॥ ७ ॥

'काया गुत्तयायेणं भंते' जीवे किं जणयई ।
(गोयम !) संवर जणयई आगम री उगती ॥ ८ ॥

कानपुर चौमासो संवत् दो हजार पनरा।
थांनै सीख सुणावै 'तुलसी' शासणपति ॥ ६ ॥

निज मन्दिर तूं जोलै

(लय—सुगणा पाप पंक परिहरिये)

चेतन ! निज मन्दिर तू जो लै,
निज मंदिर तू जो लै रे चेतन ! ज्ञान प्रदीप जगार,
मेटी घट अज्ञान अंधार।

काल असीम हुओ अहा ! भमतां, भव-दधि भवर मझार।
दुर्गति री अति दारुण दलना, सहन करी हरबार ॥
अब तो अन्तर आंख उघार ॥ १ ॥

त्राहि-त्राहि करतां कइ बारां, तरवारां री धार।
छटक छिदायो, रह्यो मुंह वायो कुण सुणणार पुकार ॥
अब तो अन्तर आंख उघार ॥ २ ॥

हृदय-विदार अपार वेदना, जनम-मरण मझधार।
बलि-चलि चढ़ियो, कटियो, वढ़ियो निज घर द्वार बिसार ॥
अब तो अन्तर आंख उघार ॥ ३ ॥

जिण नैं तू अपणो कर मानै, ठानै प्रतिपल प्यार।
तिण तन री तनुता दिखलाई, 'चक्री सनतकुमार' ॥
अब तो अन्तर आंख उघार ॥ ४ ॥

परिजन-प्रेम घनाघन चंचल, क्यों इतनो इतवार।
'उपनय खाती जिण रो न्याती, लीन्हो शीश उतार'॥
अब तो अन्तर आंख उघार॥ ५॥

इन्द्रिय विपय-दासता थांरी, भारी होसी हार।
जोबन जाय जरा ज्यूं आवै, त्यूं ही करत जुहार॥
अब तो अन्तर आंख उघार॥ ६॥

वास्तव में परकीय वस्तु रो, प्रेम ही खतरो धार।
'दशकंधर' री दिव्य विभूति, खतम करी परनार॥
अब तो अन्तर आंख उघार॥ ७॥

मान जलाश्रय ज्यूं मृग जुगली, मृग तृष्णा भरमार।
दौड़-धूप कर प्राण गमाया, तिम तुझ गति संभार॥
अब तो अन्तर आंख उघार॥ ८॥

अब अपनापन इतर वस्तु स्यूं, निश्चित रूप निवार।
'गजसुकुमाल मुनि' जिम 'तुलसी,' होवै खेवो पार॥
अब तो अन्तर आंख उघार॥ ९॥

फूला क्यों ?

(लय—महावीर प्रभु के चरणों में)

क्यों नाहक फूल रहा बन्दे, मगरूरी किस की चलती है।
जो छाया पश्चिम दिशि में थी, वह देख पूर्व में ढलती है॥

(ध्रुव पद)

जो सूर्य प्रभात उदय होता, वह सांझ समय कहीं जा सोता ।
मानव-जीवन का यह पोथा, इस में न कहीं भी गलती है ॥
क्यों नाहक फूल रहा वन्दे० ॥ १ ॥

कल, कली फूल में फूली थी, सुन्दर सौरभ अनुकूली थी ।
डाली के झूले झूली थी, वह आज रेत में रुलती है ॥
क्यों नाहक फूल रहा वन्दे० ॥ २ ॥

खेतों में थी जब हरियाली, कृषिकार मनाते खुशियाली ।
जब धान्य राशि घर मे घाली, खेतों मे धूल उछलती है ॥
क्यो नाहक फूल रहा वन्दे० ॥ ३ ॥

जो बड़े-बड़े थे अभिमानी, न किसी की बात कभी मानी ।
जिनकी करतूत जगत जानी, अब उनकी दाल न गलती है ॥
क्यों नाहक फूल रहा वन्दे० ॥ ४ ॥

नर चाहे कोइ व्याख्यानी हो, बातों में तेज तूफानी हो ।
संस्कृत प्राकृत का ज्ञानी हो, लघुता बिन मोक्ष न मिलती है ॥
क्यों नाहक फूल रहा वन्दे० ॥ ५ ॥

जो शूरवीर मदमाते थे, धींगड़ बन घूम मचाते थे ।
औरों को रुदन कराते थे, (अब) उनकी आँखें टलबलती है ॥
क्यों नाहक फूल रहा वन्दे० ॥ ६ ॥

हाथी घोड़े मोटर जिनकी, हाजरियाँ भरते छिन-छिन की ।
सत्त राम-नाम कहते उनकी, असवारी आज निकलती है ॥
क्यों नाहक फूल रहा वन्दे० ॥ ७ ॥

कल जो दो-दो दीपक जोये, महलों में महिला मन मोहे।
वे आज चिता पर हैं सोये, फोकट दुनियाँ हलफलती है॥
क्यों नाहक फूल रहा बन्दे० ॥ ८ ॥

राजा रावण की जान गई, प्रद्योतन की भी शान गई।
दुर्योधन की सब तान गई, आखिर बदनीति न टलती है॥
क्यों नाहक फूल रहा बन्दे० ॥ ९ ॥

इस मनुज जन्म में आकर के, चलते जो शिर नीचा करके।
उनको देखो धन पा करके, महिमाग्नि सदा प्रज्वलती है॥
क्यों नाहक फूल रहा बन्दे० ॥ १० ॥

रखकर लघुता अपने मन में, जा-जा रे सिद्धि निकेतन में।
तुलसी के गण नन्दन वन में, 'सोहन' की आशा फलती है॥
क्यों नाहक फूल रहा बन्दे० ॥ ११ ॥

फिर बीं रस्ते जाई नाँ

(लय—बन जोगी मन भटकाई नाँ)

नर-देही व्यर्थ गमाई नाँ।
कर्मां रो करज कमाई नाँ। नर०। विषयाँ में दिल बिलमाई नाँ।

तूँ भटक्यो लख चौरासी में,
चढ़्यो जनम-मरण री फांसी में।
रह्यो काल अनन्त उदासी में,
अब फिर बीं रस्ते जाई नाँ॥ १ ॥

धन दौलत अरु सम्पत्ति सब को,
अस्तित्व विजली रो झवको।
दृष्टान्त है पाण्डव-कौरव रो,
मगरूरी मन में ल्याई नाँ ॥ २ ॥

मन मोहन स्त्री, परिजन न्याती,
स्वारथ में है सारा साथी।
विन स्वारथ मार्‌यो सुत खाती,
मूरख! ज्यादा मुरझाई नाँ ॥ ३ ॥

आशा-आशा रै बन्धन में,
पंचेन्द्रिय विषय-निरुन्धन में।
'शिर फूट पड़्यो अभिनन्दन में,
वा काम इमारत आई नाँ ॥ ४ ॥

है विषम करम-गति दुनियाँ में,
इक छिन में कुण गति कुण पामें।
मत राच लोभ अरु ललनाँ में,
'तुलसी' शिक्षा विसराई नाँ ॥ ५ ॥

ज़ीवन सफल बणालै

(लय—पानी में मीन पियासी)

संयम सरवर में न्हालै,
तप साबुन क्यूं न लगालै।
सब आन्तर मैल मिटालै,
प्राणी पावनता पालै।

जल बिच जनम मरै पुनि जल में, जलचर जल में चालै।
तो भी हाल हुई नहीं मुगति, तूं मन नैं समझालै॥ १॥

चोरी करके चोर गंगा में, सौ सौ गोता खालै।
तो भी पड़ै तुरत हथकड़ियाँ, उपनय ओ अजमालै॥ २॥

अर्जुनमाली सो हत्यारो, सीधो मुगत सिधालै।
संयम-स्नान प्रभाव प्रगट ओ, भव-भव पातक टालै॥ ३॥

मूल मलिन ओ तन है तेरो, चाहै जितो न्हुवालै।
'काक कालिमा कदै न छूटै, कोटि उपाय सम्भालै'॥ ४॥

अशुचि शरीर, सदा शुचि आतम, जो कृत-कलुष धुपालै।
'तुलसी' 'हरिकेशी मुनिवर' ज्यूं, जीवन सफल बणालै॥ ५॥

अन्तिम वाजी

(तावड़ा धीमो पड़ज्या रे)

श्रावक जी ! अब सैंठा रहिज्यो ।
लियो भार पहुँचाय पार थे, जग में जश लीज्यो ॥

(ध्रुव पद)

नीठ नीठ मानव भव पायो, पांचूं इन्द्र्यॉ तन्त ।
आरज क्षेत्र मिल्यो कुल उत्तम, गुरु तुलसी गुणवन्त ॥ १ ॥

घणॉं वरस श्रावक-व्रत पाल्या, करी गुरॉं री सेव ।
छेहड़ै जवर विचारी पचख्यो, संथारो स्वयमेव ॥ २ ॥

भूख तृषा वश तन कुमलावै, जावै रसना सूक ।
अधिक कष्ट मरणांत देख कर, थे मत जाज्यो चूक ॥ ३ ॥

शूर चढ़ै संग्राम में-स रे, वैर्यॉं साम्हो जाय ।
रग-रग नाचै तन मन राचै, पग पाछा नहीं ठाय ॥ ४ ॥

तिमहिज कर्म-रिपु संग मांड्यो, थे भारी संग्राम ।
अल्प समय में जीत फतै अब, रखज्यो दृढ़ परिणाम ॥ ५ ॥

देव गुरु की खरी आसता, राखीज्यो मन मांय ।
चौरासी लख जीवा जोणी, लीज्यो सर्व खमाय ॥ ६ ॥

सुखे-सुखे भव करता थे तो, करस्यो मुक्ति नजीक ।
संथारा में श्रावकजी नै, आ 'सोहन' की सीख ॥ ७ ॥

काम में मत मुरझो

(लय—तावड़ा धीमो पड़ज्या रे)

काम में मत मुरझो प्राणी ।
क्यूं मिनख पणै रो खरो खजानो करो धूड़ धाणी ॥
(ध्रुव पद)

घी स्यूं भभकै आग, भोग स्यूं काम-राग जाणी ।
बुझै शान्त-रस पाणी स्यूं आ सद्गुरु री बाणी ॥ १ ॥

जोबन धन रो जोश भुलावै, होश करै हाणी ।
(कोई) मतवालै हाथी ज्यूं हरदम, रहै गरदन ताणी ॥ २ ॥

माईतॉं री मिली कमाई, सीधी समुदाणी ।
(अब) सात व्यसन में राच, फेरदै पीढ़यॉं रै पाणी ॥ ३ ॥

सुणी हुसी जितशत्रु राय ओ सुकुमाला राणी ।
राज-भ्रष्ट हो रुल्या खाक बै रोही री छाणी ॥ ४ ॥

छोड़ो काम भोग अति आशा, दिल समता आणी ।
धारो शील अणुव्रत 'तुलसी' सुख की सहनाणी ॥ ५ ॥

मलिन गात

(लय—म्हांरा सतगुरु करत विहार)

मानव मानो म्हारी बात मलिन ओ गात तुम्हारो रे ।
गात तुम्हारो रे गर्व थे राखो क्यांरो रे ॥

उत्पत्ति रो मूल स्रोत ही प्रथम सम्भारो रे ।
फिर अन्तस्थल अवलोकण नैं आँख उघारो रे ॥ १ ॥

ऊपर स्यूं तन दीसै आछो, मोहनगारो रे ।
अन्तर अशुचि असार वस्तु रो है भण्डारो रे ॥ २ ॥

केवल सलिल-स्नान स्यूं पावन, व्यर्थ विचारो रे ।
'सब तीर्थां में न्हायो तो भी तूम्बो खारो रे ॥ ३ ॥

मूल अशुद्ध न शुद्ध हुवै, कितनो ही सुधारो रे ।
भिक्षु कथित दृष्टान्त 'गाजीखां मुल्लाखां' रो रे ॥ ४ ॥

नव-नव वेश ड्रेस स्यूं सज्जित, जो तनु प्यारो रे ।
नव-नव स्रोत वहै मल पल-पल लागै खारो रे ॥ ५ ॥

सुन्दर अशन, वसन, भूषण रो, करै बिगारो रे ।
उदाहरण ओ 'मल्लीकुंवरी' दियो करारो रे ॥ ६ ॥

शिव-साधन सामर्थ्य मनुज तनु सार निकारो रे ।
'तुलसी' त्याग, तपस्या, स्यूं निज नैया तारो रे ॥ ७ ॥

मानव अवतार

(लय—म्हांरा सतगुरु करत विहार)

दुर्लभ चिन्तामणि सम पायो प्राणी ओ मानव अवातार।
ओ मानव अवतार, चेतन क्यूं खोवै वेकार॥
(ध्रुव पद)

चौरासी रै चक्कर में तूं रुल्यो अनन्ती बार।
नरक कुण्ड में सही सजोरी जमदूतां री मार॥ १॥

ढोर हुयो तूँ परवशता में, ढोयो भारी भार।
जंगल में जद बण्यो जिनावर, थारी हुई शिकार॥ २॥

माटी, जल, जलचर, थलचारी, बिच्छू, सांप सियार।
घोर वेदना सही सबल स्यूं दुर्बल स्यूं फुंकार॥ ३॥

किती बार तूं मर्‌यो गर्भ में, जननी नें संहार।
काट-काट कर बारै काढ़्यो, हा! दुःख हृदय विदार॥ ४॥

जनम-जनम री संचित करणी, आज हुई साकार।
मानव चोलो रतन कचोलो, कोड्यां में मत हार॥ ५॥

तज जंजाल हाल ही कर तूं, परम तत्त्व स्यूं प्यार।
जाग-जाग दै झालो सतगुरु, 'तुलसी' तारणहार॥ ६॥

इचरज आवै

(लय—माढ़)

म्हांने इचरज आवै जी।
लख दुनियाँ रो हाल। म्हाने०।
सिर पर उभो काल। म्हांने० ॥ आंकड़ी ॥

तन क्षण-भंगुर, धन है अस्थिर, जोवनियो दिन चार।
अब अभिमान बतावो किण रो, पूछै सन्त पुकार ॥
म्हांने० ॥ १ ॥

हट्टो कट्टो तन है जबरो, हाथी को-सो जोर।
तीन दिनाँ की ताव देख लो, तुरत घटावै तौर ॥
म्हांने० ॥ २ ॥

मूठ्याँ भर खर्च्यां नहीं खूटे, इतरी घर में आव।
आंख्याँ सूँ देखाँ हाँ आपाँ, रंक बणै है राव ॥
म्हांने० ॥ ३ ॥

जोबन की सुन्दरता पर तो, जोखा खड़्या हजार।
वासवदत्ता रो वर्णन सुण, करज्यो तनिक विचार ॥
म्हांने० ॥ ४ ॥

जो कुछ भी होवै आखिर तो, है निश्चय ही मौत।
'चन्दन' शिक्षा सुण कर करज्यो, अन्तर में उद्योत ॥
म्हांने० ॥ ५ ॥

अब तो चेत

(पनषी मुंढ़ै बोल)

चेतन अब तो चेत।
चेत-चेत चौरासी में तूँ भमतो आयो रे।
भयङ्कर चक्कर खायो रे॥

मोक्ष-साधना रो सुध साधन, जो अति दुर्लभ गायो रे।
'चक्री भोज्य' सम मुश्किल ओ मानव-भव पायो रे॥ १॥

आर्यक्षेत्र, उत्तम कुल जो नहीं, तो पायो, नहीं पायो रे।
लम्बी आयु, देह निरोगी, भाग्य सवायो रे॥ २॥

पूरी पांचूँ मिली इन्द्रियाँ सद्गुरु संग सुहायो रे।
इण बिन नमक बिहूणो भोजन, किण नें भायो रे॥ ३॥

सारी सामग्री पा, जो नहीं वाँछित लाभ कमायो रे।
तो 'ब्राह्मण' ज्यूं चिन्तामणि स्यूं काग उड़ायो रे॥ ४॥

दान शील तप भाव नाव में, बैठ हृदय विकसायो रे।
'तुलसी', भव-सागर रो लेठो सकल मिटायो रे॥ ५॥

जिन-वाणी के पद-चिह्नों पर

(लय— नगरी नगरी द्वारे द्वारे)

जिन-वाणी र खोजाँ-खोजाँ चाली रे चेतनियाँ ।
आंकी वांकी गैल्या मतना झाली रे चेतनियाँ ॥ जि० ॥
(ध्रुव पद)

वीर प्रभु रो साचो मारग आयो थारै हाथ मैं । आ० ।
शिवपुर तांई ठेट चालसी ओही थारै साथ मैं । ओ० ।
संकट मैं पिण इण स्यूं तू नाँ हाली रे चेतनियाँ ॥ जि० ॥ १ ॥

राह चुकावण वाला पग-पग मिलसी मतलब लाल तो । मि० ।
आप जिसा करणैं वालाँ की काई कमी है हाल तो । कां० ।
रतन लूट कर, कर देवैला खाली रे चेतनियाँ ॥ जि० ॥ २ ॥

वड़पण रो भूखो तू जिनवर वचनाँ नैं मत ढांकजे । व० ।
झूठो गूमर राखण तांई तू गप्पाँ मत हांकजे । तूं० ।
सावजियै आतम नैं करली काली रे चेतनियाँ ॥ जि० ॥३॥

मीठा-मीठा मेवा मिसरी पांचूँ ही पकवान है । पां० ।
जिनजी री वाणी रै आगै फीका थूक समान है । फी० ।
इण में तो तूं थारी ऊपर गाली रे चेतनियाँ ॥ जि० ॥४॥

वड़ो भाग आपाँ रो आपाँ पायो शासन साचलो । पा० ।
गई जिका द्यो जाण, सुधारो अब ही जीवन पाछलो । अ० ।
'सोहन' मिलियो तुलसी-सो वनमाली रे चेतनियाँ । जि० ॥ ५ ॥

अभिमान त्यागो

(श्री महावीर चरण में)

भवि अब मानव-जनम सुधारो, मन अभिमान निवारो थे ।
जो गुणवान बणो, मतिवान बणो, मन मान निवारो थे ॥
(ध्रुव पद)

पामर पोमावै, हॉ हॉ पामर० ।
मगरूरी में नहीं मावै ।
मन स्यूं महान बण ज्यावै ।
अणजाण पणै री भींत उखारो थे ॥ १ ॥

मैं हूँ मतिशाली, हॉ हॉ मैं हूँ० ।
महिमा म्हांरी निरवाली ।
शोभा है सब स्यूं आली ।
ठाली बादल ज्यूं जीभ न झारो थे ॥ २ ॥

'रावण सा राणा', हॉ हॉ रा० ।
भूमीश्वर कइ मस्ताना ।
'दुर्योधन द्रोण दिवाना' ।
जो दशा अन्त में हुई विचारो थे ॥ ३ ॥

हिटलर री फौजाँ, हॉ हॉ हि० ।
धारी जो मन में मोजाँ ।

मिस्टर मुसोलियन तोजा।
है आज कठै यै खोज निकारो थे ॥ ४ ॥

जब मान मिटायो, हाँ हाँ जब० ।
'बाहुबल केवल पायो।
ब्राह्मी, सुन्दरि समझायो।
'तुलसी' अविनय तज, विनय वधारो थे ॥ ५ ॥

दान-धर्म रो स्थान

(लय—पोर-पोर क्या करता)

है सब धर्मां में प्रमुख रूप स्यूं, दान-धर्म रो स्थान ।
पर दान-धर्म रो लाभ कमाणो, नहिं कोइ है आसान ॥
(ध्रुव पद)

आ अपणै वस री बात नहीं,
है औराँ रै भी हाथ नहीं ।
हो दाता, पात्र रु शुद्ध वस्तु रो समुचित रूप मिलान ॥ १ ॥
देणै वालों री कमी नहीं,
लेणै वालों स्यूं जमी ढही ।
पर सही रूप लेणै देणै वालाँ री के पहिचान ॥ २ ॥
जो पूर्ण परम संयम धारी,
बाह्याभ्यन्तर ममता मारी ।
अधिकारी वै मुनि पात्र दान रा, निरुपम दयानिधान ॥ ३ ॥

जीवन निर्वाह मात्र भिक्षा,
लै संचय री नहिं कहीं शिक्षा ।
दीक्षा दिन स्यूं उपकारी करता रहै उपकार महान ॥ ४ ॥
है चर्या सात्विक माधुकरी,
बन भार भूत नहीं रहै घड़ी ।
नित हरी भरी दिल कोमल कलियाँ, शान्त निराली शान ॥ ५ ॥
निःस्वारथ निज वस्तु देवै,
आरम्भ कियाँ मुनि नहिं लेवै ।
वै शुद्ध दान दाता कर लेवै, जीवन रो उत्थान ॥ ६ ॥
शुद्ध दान हेतु है मुगति रो,
जो अशुद्ध हेतु है दुर्गति रो ।
'तुलसी' वो भवदधि तरसी, करसी जो सच्ची श्रद्धान ॥ ७ ॥

आचार्य श्री तुलसी

रचयिता—दौलतरामजी छाजेड़

कवित्त

आपकी अनूप आभा भाभा भगवान तुल्य,
धवल वस्त्र धारी, धवल ज्ञान के दातार हैं ।
तेणमें की साल तुलसी तख्त पे विराजमान,
तेणमें दिनों से पहुंचे शहर सरदार है ।

फागुन वदी चोथ घोर तपसी को दर्श दिया,
अगहन वदी एकम किया वंग से विहार है।
छः दिन विश्राम दिन ग्यारह वर एक किया,
छिन्तर दिन विहार लगातार दो-दो बार है॥

आपके सानिध्य सदा शासन सवाई बात,
सित्यासी दिन चाल माइल चले सवा हजार है।
वृक्षों तले पौढ पौढ रात में जगाई नींद,
मच्छरों के डंक उत्तरपाड़ा जोरदार है।
आंगन ऊबड़ खावड़ गांव खोखला विराजे आप,
गाव था नवादा कादा कीचड़ भरमार है।
कोई कोई दिन माइल वाइस का विहार हुवा,
हिम्मत अपार वाले श्रमणी अणगार है॥

आपकी आवाज की बुलन्दता अमन्द घोष,
हाथन के हाव भाव क्या ही सुखदायका।
शासन सिरताज कह्यो जैसे जिनराज तुलय,
मंजुल मनोज्ञ मिष्ट वायक गणिराय का।
आगम के दक्ष दया पक्ष के सुरक्ष प्रभु,
पक्षक जिनेश हू का रक्षक छः काय का।
कंठ वीच कोक कल्प वृक्ष के समान पूज्य,
पुत्र है पवित्र मुनि चम्पक की माय का॥

साधु

रचयिता—दौलतरामजी छाजेड़

साधू के समान कौन शूर वीर विश्व बीच,
साधू के समान शान्तिवान भी न दूसरो।
कंचन का काम किसा कौड़ी से स्नेह नहीं,
साधू के समान पुन्यवान भी न दूसरो।
सुन्दर मकान कमला स्ट्रीट से स्नेह कहाँ,
रीस को न काम यदि झूपड़ो भी फूसरो।
नीति में निपूण जन्म मानव महत्व पूर्ण,
साधू के समान दयावान भी न दूसरो॥

अब्रह्मचर्य निषेध

रचयिता—दौलतरामजी छाजेड़

दुर्लभ अपार काम जीतणो संसार बीच,
ऊंच और नीच कई कीच में कलीजग्या।
कामिनी गुलाम गर्क नर्क में निवास किये,
तरुनी तिया के ताव तेल में तलीजग्या।
कुड़छिये में घृत घाल आग में जचाय देत,
भोग में भगार रूप जीरै ज्यूं जलीजग्या।
जिन्दगी अमूल्य पै अबंभ का अपार दंभ,
देख के छबीली छैल केतला छलीजग्या॥